Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुदत्त साहित्य

ममता

गुरुदत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

167960

श्री गुरुदत्त के कुछ चुने हुए उपन्यास

राजनीति पर आधारित

स्वाधीनता के पथ पर, पथिक, स्वराज्यदान, विश्वासघात, देश की हत्या, दो लहरों की टक्कर, दासता के नये रूप।

पौराणिक कथाओं के आधार पर

कुमार सम्भव, उमड़ती घटाएं, (राम कथा पर आधारित) अमृत-मंथन, परम्परा, अग्नि परीक्षा, (महाभारत पर) परित्राणाय साधूनाम्।

ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि पर

विक्रमादित्य, पुण्यमित्र, लुढ़कते पत्थर (अशोक-कालीन), पत्रलता (हर्षवर्धन पर), गंगा की धारा (अकबरकालीन), खण्डहर बोल रहे हैं (औरंगज़ेब के काल पर)

सामाजिक उपन्यास

अनदेखे बन्धन, एक और अनेक, मानव, गुण्ठन, आवरण, यह संसार, धरती और धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ममता

Central Library
167960
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

गुरुदत्त

081
167960

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

हिन्दी साहित्य सदन
नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

R
089.9143
GUR-M

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious

मो० 7065618655, 9212527665
हिन्दी साहित्य सदन
2, बी.डी. चैम्बर्स, 10/54, देशबन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110005

❑ *प्रकाशक* : **हिन्दी साहित्य सदन**
2 बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 डी.बी. गुप्ता मार्ग
(समीप प्रह्लाद मार्केट) करोल बाग, नई दिल्ली-5
फोन : 51545969
टैली/फैक्स : 23553624
E-mail : indiabooks@rediffmail.com

❑ *संस्करण* : **2003**

❑ *मुद्रक : विनायक प्रिन्टोग्राफर शाहदरा दिल्ली।*

₹200/-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकीय

हमारे भारत की पवित्र व पावन भूमि से अनेकों महान साहित्यकारों ने जन्म लिया है जिनकी प्रसिद्धि व यश पूरे विश्व में भारत के नाम को आलोकित करता है।

ऐसे ही महान साहित्यकारों में श्री गुरुदत्त का नाम अजर व अमर है। अपने पहले उपन्यास 'स्वाधीनता के पथ पर' के प्रकाशन के बाद ये प्रसिद्धि व यश की सीढ़ियों पर चढ़ते गये और चोटी के उपन्यासकारों की श्रेणी में अपना एक अलग मुकाम बना लिया।

श्री गुरुदत्त का जन्म सन 1894 में लाहौर में हुआ था। तब लाहौर भारत का ही एक अंग था। ये आधुनिक विज्ञान के छात्र थे और पेशे से वैद्य थे। रसायन विज्ञान से एम० एस० सी० (स्नातकोत्तर) करने के बावजूद वैदिक साहित्य के व्याख्याता बने और साहित्य में लग गये और अनेकों उपन्यासों, संस्मरण और जीवनी साहित्य का सृजन किया।

आजीवन साहित्य सेवा करते हुए 8 अप्रैल 1989 को दिल्ली में इन्होंने शरीर त्याग दिया।

'रजत प्रकाशन' मेरठ से श्री गुरुदत्त के उपन्यासों का प्रकाशन प्रारम्भ करते हुये हमें अपार गौरव महसूस हो रहा है और हिन्दी के पाठकों के लिये हर्ष का विषय है कि श्री गुरुदत्त जी का साहित्य अब उन्हें सुलभ प्राप्त हुआ करेगा।

प्रस्तुत उपन्यास 'ममता' श्री गुरुदत्त का लोकप्रिय उपन्यास है जो भाषा शैली, कथानक, शब्द संयोजन, मनोरंजन, व ज्ञान प्रत्येक दृष्टिकोण से उत्कृष्ट है।

आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह प्रयास आपको पसंद आयेगा और आप भी गुरुदत्त के प्रशंसकों में अपना नाम शुमार करायेंगे।

एक पत्र द्वारा अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य अवगत करायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयानुक्रमणिका

उपन्यास

1. ममता 9

कहानियाँ

2. बंटवारा 91
3. तलाक 102
4. कानूनी मौत 116
5. यथार्थवाद 119
6. निस्पृह 129

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदुष्य, संस्कृति और राजनीति की त्रिवेणी : श्री गुरुदत्त का जीवन परिचय

8 दिसम्बर 1894 को जन्म लिया लाहौर (अब पाकिस्तान) में। मुख्य क्रीड़ा-भू बनी वर्तमान भारत-भू। नश्वर शरीर त्यागा 8 अप्रैल 1989 को वैदिक मंत्रोच्चार के साथ भारत की राजधानी दिल्ली में।

आधुनिक विज्ञान के छात्र तत्पश्चात पेशे से वैद्य लेकिन साहित्य-सृजन में की अनूठी साधना। स्नातकोत्तर (एम. एस. सी.) किया रसायन विज्ञान में, व्याख्याता बने वैदिक साहित्य के।

उपन्यास, संस्मरण और जीवन-साहित्य के महान् सृजक बने। ज्ञान, राग और शब्द शिल्प के संगम के साथ-साथ विज्ञान और साहित्य के सेतु थे। ऋजु व्यक्तित्व और संशिष्ट चिंतन के स्वामी थे। विद्या और विनय के संश्लेष थे तो व्यक्तित्व की दृष्टि से स्थित-प्रज्ञ थे। सदाचार, संकल्प, निर्मल-मैत्री और पारस्परिक समझदारी उनके अलंकरण थे। हिन्दुत्व के दृढ़ स्तम्भ थे तो रग-रग हिन्दू उनका परिचय था। आर्य समाज उनका प्राण था।

उपन्यास-जगत् के वे बेताज बादशाह थे। ''स्वाधीनता के पथ पर'' से आरम्भ हुआ उनका उपन्यास जगत् का सफर लगभग 200 उपन्यासों से मां भारती के अंक को सुशोभित-सुगन्धित करते हुए ''अस्ताचल की ओर'' पर समाप्त होने से पूर्व सिद्ध कर गया कि वे हिन्दी साहित्य के एक देदीप्यमान नक्षत्र थे।

सूर्यकान्त त्रिपाठी की तरह कोटि-कोटि पाठकों के हृदय सम्राट होते हुए भी साहित्यिक व राजनीतिक अलंकरणों से वंचित रहे।

''धर्म संस्कृति और राज्य'' से लेकर ''वेद मंत्रों के देवता'' तक हिन्दू वाङ्मय के व्याख्याता बने, किंतु चापलूसों से घिरी सांस्कृतिक संस्थाओं में से किसी ने भी उस निर्भीक ऋषि के चरणों पर पुष्प नहीं चढ़ाए।

गीता पर उनके विचार और भाष्य अमूल्य निधि हैं तो भारत-विभाजन पर ''देश की हत्या'' उनका ऐतिहासिक दस्तावेज है। ''भारत गांधी नेहरू की छाया में'' उनके प्रखर चिंतन द्वारा राजनीति की कलुष कथा है।

उनके बहु आयामी व्यक्तित्व और कृतित्व को हमारा नमन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम परिच्छेद

" 'वाट ए फूल यू आर!' तुम कितने मूर्ख हो काहन! उस बूढ़ी औरत को समझाते क्यों नहीं? तुम्हारे गाढ़े पसीने की कमाई को वह उन साधु, सन्त, महात्माओं में व्यर्थ गंवा रही है।"

एक सूटेड-बूटेड 'काला-साहब' अपने सामने भूमि पर बैठे खौंचे वाले को समझा रहा था। खौंचे वाला चाट बेचता था। उसके पास दही-बड़े, पकौड़ी, पानी के बताशे, इमली की खट्टी-मीठी सौंठ होती थी, और साहब के बच्चे तथा उनकी विलायती बीवी उसकी चाट बहुत पसंद करते थे।

प्रायः सायंकाल चार बजे काहन कोठी के बाहर आवाज लगाता, "चटपटे गोल गप्पे" और काले-साहब मिस्टर साहनी के बच्चे काहन को कोठी में ले आते। उसको कोठी के बरामदे में बैठा, फिर वे अपनी मम्मी और डैडी को आवाजें देने लगते।

डैडी डॉक्टर था। वह विलायत से डॉक्टरी पास करके आया था और निस्बत रोड की एक कोठी में चिकित्सा-कार्य करता था। वह सर्जन था। प्रातः 9 बजे से 11 बजे तक और सायं 6 बजे से 8 बजे तक अपने क्लिनिक में रहता था। लोगों के घरों में जाकर भी वह ऑपरेशन किया करता था। कभी कोई भूला-भटका रोगी चिकित्सा के लिए आता तो उसको भी नुसखा लिख देता था। इस प्रकार उसकी अच्छी-खासी आय हो जाती थी।

डॉक्टर बी० आर० साहनी विलायत से ही, अपनी हाउस-कीपर की पुत्री, लिल्ली हैंडरसन को विवाह कर लाया था। उसके डॉक्टर बनने से पूर्व ही लिल्ली के एक लड़का उत्पन्न हो चुका था। डॉक्टर की दूसरी संतान एक कन्या थी। हिन्दुस्तान में आने के बाद उत्पन्न हुई थी। बड़ा लड़का विन्सेन्ट इस समय पांच वर्ष का था और लड़की फ्लोरा तीन वर्ष की थी। दोनों ही बच्चे चाट के बहुत शौकीन थे। डॉक्टर की पत्नी भी काहन की आवाज सुनकर, अपने मुख में टपकती लार को रोक नहीं पाती थी। बच्चों के आवाज देते ही वह भी बरामदे में आ जाती थी। कभी, उस समय, डॉक्टर घर पर होता तो वह भी चाट खाने के लिये आ जाता।

आज एक बजे वह एक ऑपरेशन करने के लिये गया और वहां से साढ़े तीन बजे लौटा था। ऑपरेशन अपेन्डिसाइटिस का था और वह सफल हुआ था। उसकी उसको एक सौ रुपया फीस मिली थी। वह अभी अपने क्लिनिक में अपना ऑपरेशन- किट संभाल कर रख ही रहा था कि बाहर से बच्चों की आवाज सुनाई दी। वह समझ गया और हाथ धोकर बाहर बरामदे में आ गया। बाहर बरामदे में रखी कुर्सी पर लिल्ली बैठी थी। काहन ने अपना खौंचा उनके सामने बरामदे में फर्श पर रखा हुआ था। वह स्वयं भूमि पर बैठा था। खौंचे पर से उसने सफेद चादर, जिससे सामान ढंका हुआ था, उठा ली और बच्चों की मां से पूछने लगा, "क्या बनाऊं?"

"पहले इन बच्चों को बना दो।"

काहन जब से निस्बत रोड की कोठियों में चक्कर लगाने लगा था, वह स्वयं साफ-सुथरे कपड़े पहनने लगा था और खौंचे को नित धुली चादर से ढंकने लगा था। साथ ही पत्तों के साथ चीनी की प्लेटें भी रखता था और पढ़े-लिखे ग्राहकों को प्लेटों में सामान लगाकर खिलाता था।

डॉक्टर साहब की कोठी पर नित्य रुपया-डेढ़ रुपया की बिक्री होती थी। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कारण उसने इनके खाने के लिए चांदी के गिलट किये हुए चम्मच भी रखे हुए थे। डॉक्टर आया तो वह अपनी पत्नी के समीप कुर्सी पर बैठ गया और जब काहन बच्चे के लिएं दही और सौंठ की पकौड़ी बना रहा था, डॉक्टर उससे पूछने लगा, "काहन! तीन दिन तक तुम आये नहीं। क्या बात थी?"

"भैया! मां ने चौमासा रखा हुआ था और चौमासा समाप्त होने पर उसने भागवत की कथा रखाई हुई थी। परसों कथा का भोग पड़ा था। उस दिन मां ने साधु-संत महात्माओं को मध्याह्न के समय का भोजन दिया था। कल अपने सम्बन्धियों को भोज दिया था। दोनों दिन उसमें लगा रहा हूं। इस कारण न तो सामान बन पाया और न बेचने आ सका।"

"कितने साधु आये होंगे?"

"पचास से ऊपर ही थे।"

"और क्या-कुछ खिलाया था?"

"साधुओं को तो खीर-पूरी, साग था। हां, कल सम्बन्धियों को सात व्यन्जन, खीर, पूरी, पुलाव, चटनी, अचार आदि था। कल भी कोई सौ आदमियों का खाना हुआ है।"

"बहुत रुपया खर्च कर दिया है?"

"हां भैया! इन दोनों दावतों और कथा पर कुल मिलाकर पांच सौ से ऊपर ही खर्च हो गया होगा।"

"बहुत रुपया व्यर्थ गंवाया है।"

"मां ने कहा तो मैं टाल नहीं सका।"

इस पर डॉक्टर ने वह 'फूल' वाली बात कही थी। काहन अंग्रेजी तो समझा नहीं, इस पर भी 'फूल' शब्द के तो वह अर्थ जानता था। लाहौर में रहते हुए इतना जान जाना स्वभाविक था।

काहन ने मुस्कराकर कहा, "भैया! मैं 'फूल' नहीं हूं। मां के लिए तो यह कुछ भी नहीं। और वह बूढ़ी भी नहीं है। मां तो कभी बूढ़ी होती ही नहीं।"

काहन डॉक्टर साहनी का बचपन का साथी था। दोनों एक ही मोहल्ले में पैदा हुए और पले थे। दोनों के पिता के मकान साथ-साथ ही थे। डॉक्टर साहनी के पिता की हवेली बड़ी और पक्की थी। काहन का बाप एक हलवाई का नौकर था और डॉक्टर के पिता के पड़ोस में एक डेढ़-मंजिले छोटे-से मकान में रहता था। मकान के फर्श कच्चे थे, जिनमें सप्ताह में एक बार गोबर का लेप कर, सफाई की जाती थी। काहन और बलराम शिशुकाल से इकट्ठे खेले थे, और कभी अपनी बाल-मित्रता का प्रथम दिन स्मरण करने लगते, तो वे अतीत के धुंधियाले में विलीन होते दिखाई देते थे।

बलराम के स्कूल जाने के दिनों तक दोनों का साथ रहा था। काहन पांच वर्ष का हुआ तो अपने पिता के साथ हलवाई की दुकान पर, चार आने रोज पर, नौकर हो गया और बलराम से उसका सम्बंध-विच्छेद हुआ। बलराम काहन को मैले-कुचैले कपड़ों में अपने उस्ताद की दुकान पर जाता देखता तो उसके लिये अपने मन में सहानुभूति अनुभव करता था।

1907 का घोर प्लेग पड़ा तो बलराम का पिता अपने पूर्ण परिवार को लेकर हरिद्वार चला गया। वहां से वह लौटा तो फिर शहर वाले मकान में नहीं आया। वह अनारकली बाजार में अपने एक अन्य मकान में रहने लगा। इसके अनन्तर काहन और बलराम में तब भेंट हुई, जब बलराम डॉक्टर साहनी बन और विलायत से अपना परिवार लेकर निस्बत रोड की कोठी में आकर रहने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोठी को ठीक-ठाक कर उसमें अपना क्लिनिक खोल, डॉक्टर साहनी को आकर रहते हुए छः माह हो चुके थे। डॉक्टर गोल-गप्पे वाले को रोज सड़क पर से गुजरते देखता और 'चटपटे गोलगप्पे' की आवाज सुनता था। इस आवाज से उसके मुख में लार टपकने लगती थी। एक दिन उससे नहीं रहा गया। नौकर को भेज, उसने चाट वाले को बुलवा लिया। उसको बगल वाले बरामदे में बैठाकर, वह लिल्ली को वहां ले आया। लिल्ली पूछने लगी, "क्या है?"

"देखो, यह मेरे बचपन का एक अतिप्रिय 'स्नैक' है।"

बलराम को इस बात से संतोष हुआ था और खौंचे पर भी उसने साफ चादर डाल रखी थी। चाट वाला बैठा तो पति-पत्नी स्वयं कुर्सियों पर बैठ गये। काहन बलराम को देख, मुस्करा रहा था। वह चादर उठा पूछने लगा, "हां, तो साहब! फरमाइये, क्या खिलाऊं?"

डॉक्टर को पानी के बताशे बहुत प्रिय थे। उसने कहा तो काहन ने चीनी के दो डोंगे निकाल कर उसमें ही दो-दो बताशे आलू तथा पानी से भर कर दे दिये। लिल्ली अपने पति से पूछने लगी, "कैसे खाऊं?"

"मेरी ओर देखो।" डॉक्टर ने कहा।

लिल्ली ने बताशे खाये तो उसको बहुत पसंद आये। इस प्रकार दो-दो कर खौंचे वाला देता गया और वे लेते गये। इतने में विंसेंट आ गया। वह इस समय लगभग तीन वर्ष का था। उसको दही की पकौड़ी खिलाई तो उसे वह बहुत पसंद आई।

जब ये लोग खा-पीकर तृप्त हुए तो कुल बिल बना, एक रुपया दो आने। डॉक्टर अपने विलायत जाने से पूर्व के भाव का अन्दाजा लगाता था तो उससे दाम तिगुने लगते थे। इस कारण उसने दाम देने से पहले कुछ गम्भीर होकर कहा, "कितने पैसे हुए?"

"वैसे तो दाम एक रुपया दो आने बनते हैं, परन्तु आज आपसे कुछ नहीं लूंगा।"

"क्यों?"

"आपने मुझे पहचाना नहीं बलराम जी?"

यह सुन, डॉक्टर ने ध्यान से उसकी ओर देखा तो वह भी उसे पहचान गया। पहचानते ही वह कुर्सी से उठकर कहने लगा, "ओह, काहन भाई! बहुत तरक्की कर ली है तुमने!"

"हां, भैया! मैं तो आते ही पहचान गया था और देख रहा था कि कब पहचानते हैं बलराम जी। भैया! विलायत गये हुए थे?"

"हां, डॉक्टरी पढ़ने गया हुआ था।"

"और यह भाभी वहीं का मेवा है?"

"हां, वहीं विवाह किया था और यह बच्चा वहीं हो गया था।"

काहन ने हाथ जोड़, श्रीमती बलराम को नमस्कार किया। लिल्ली ने विस्मय से अपने पति की ओर देखा तो उसने अंग्रेजी में उसे समझाते हुए कहा, "यह मेरे बचपन के खेल का साथी है और पड़ौसी भी। तब हम शहर के अंदर रहते थे। आजकल यह खौंचे का काम करता है और कहता है कि हम बहुत दिनों के बाद मिले हैं, इसलिए यह आज के पैसे नहीं लेगा।"

लिल्ली कहने लगी, "नहीं, नहीं, उसको दाम लेने ही चाहिये।"

बलराम कहने लगा, "भाई काहन! तुम्हारी भाभी कहती है कि यह तो इतनी स्वादिष्ट है कि वह नित्य ही खाया करेगी।"

"ठीक है, डॉक्टर साहब! मैं रोज आ जाया करूंगा, परन्तु आज तो पहला दिन है। मुझ गरीब की यह तुच्छ भेंट ही समझ ली जाय।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
डॉक्टर ने उसकी बात अपनी पत्नी को समझाई तो वह चुप रही। परन्तु इससे डॉक्टर और उसकी पत्नी, काहन के पक्के ग्राहक बन गये।

: 2 :

इस प्रकार संबंध बने आज तीन वर्ष से अधिक हो गये थे। डॉक्टर का चिकित्सा-कार्य चल पड़ा था। साथ ही गोल-गप्पे वाले में और डॉक्टर में भी अंतर बहुत बढ़ गया था। इससे कभी-कभी डॉक्टर को काहन की निर्धनता और अपनी समृद्धता पर विस्मय भी होता था। वह अंतर आज विचार-प्रोत्साहन में सहायक हो गया और डॉक्टर ने कह दिया, "तुम कितने मूर्ख हो! उस बूढ़ी को समझाओ कि तुम्हारे गाढ़े पसीने की कमाई उन साधु, संत, महात्माओं में व्यर्थ गंवा रही है।"

जब काहन ने कहा कि उसकी मां बूढ़ी नहीं है तो डॉक्टर ने उसकी आयु के विषय में पूछ लिया। उसका अनुमान था कि साठ से ऊपर होगी।

काहन कहने लगा, "डॉक्टर भैया! मां की आयु वर्षों में नहीं लगाई जाती। उसकी आयु तो उसकी वात्सल्यता से आंकी जाती है।"

रोकते-रोकते भी डॉक्टर के मुख से निकल गया, 'नॉनसेंस'। काहन ने यह शब्द सुना तो, किन्तु वह इसके अर्थ नहीं जानता था। वह इतना समझ सका कि यह कुछ मां के लिए कहा गया है। इस कारण उसने कह दिया, "डॉक्टर! वह मेरी मां है और मेरी पूज्या है। आप कमाई की क्या बात कहते हैं, यदि मुझसे मेरी जान भी मांगे तो मैं दे दूंगा।"

बच्चों को पकौड़ी दी जा चुकी थी। इसके बाद नियमानुसार वे बताशे खाने लगे। काहन की खूबी यह थी कि वह बताशों के लिए पानी में जीरा और इमली, इस अनुपात से डालता था कि एक तो वह विकार नहीं करता था और साथ ही स्वादिष्ट भी बहुत होता था।

काहन को कुछ रोष था कि डॉक्टर ने उसे 'फूल' कहा है और मां को भी कुछ इसी प्रकार कहा है। इस कारण वह चुप रहा। नित्य के विपरीत उसे चुप देख, लिल्ली ने कहा, "आपके कहने पर यह कुछ नाराज मालूम होता है।"

एकाएक बलराम समझ गया और उसने काहन से कहा, "काहन भैया! तुम्हारी भाभी कहती है कि तुम नाराज हो गये हो!"

"भाभी मेरी बात समझेंगी नहीं। मैं नाराज नहीं हूं। इस पर भी मुझे इनको इतनी साधारण-सी भी बात न समझते देखकर खेद हुआ है। वह क्या समझेंगी कि हिन्दुस्तानी लोग मां से अधिक पूज्य अन्य किसी को नहीं मानते, और उसके लिए वे बहुत-कुछ कर सकते हैं।"

डॉक्टर ने बात बदलते हुए पूछा, "अभी उसी मकान में रहते हो?"

"हां।"

"उसकी मरम्मत आदि कर ली है या नहीं?"

"हां, वैसे तो थोड़ी-बहुत मरम्मत करवाता रहता हूं। फर्श पक्का करवा लिया है, टट्टी, गुसलखाना ठीक करवा लिये हैं।"

"और विवाह?"

"वह भी ईश्वर की कृपा से हो गया है।"

"कितने बच्चे हैं?"

"तीन हैं।"

"सबसे बड़ा कितना बड़ा है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"चौथी कक्षा में पढ़ रहा है।"

"किस स्कूल में पढ़ता है?"

"डी० ए० वी० में पढ़ने जाता है।"

यह सब-कुछ डॉक्टर को अपनी श्रेणी वालों से छोटा प्रतीत हुआ था। लिल्ली इस वार्तालाप के समय मुस्करा रही थी। अब वह थोड़ी-थोड़ी हिन्दुस्तानी समझने लग गई थी।

सायंकाल चाय के समय उसने डॉक्टर से पूछ लिया, "आज तो अपने मित्र काहन से आपने बहुत बातें की हैं?"

"हां, मैं देख रहा था कि ये लोग तरक्की क्यों नहीं करते?"

"किन्तु, उस दिन तो आप कह रहे थे कि उसने बहुत तरक्की की है।"

"मैं इसके कपड़े, खोंचे के सामान की सफाई इत्यादि देखकर कह रहा था। जब यह बचपन में किसी हलवाई की दुकान पर काम करता था तो बहुत गंदा रहता था। अब तो ऐसा मालूम होता है कि यह सफाई रखना सीख गया है। परन्तु इसकी आर्थिक अवस्था तो वैसी-की-वैसी ही है।"

"बिना आर्थिक अवस्था सुधरे, भला यह सफाई कैसे रख सकता है? मैं तो यह देखती हूं कि बहुत से देशी रेस्टोरां से अधिक सफाई रखता है।"

इस बात में डॉक्टर की रुचि नहीं थी। वह स्वयं दो-तीन हजार रुपया मासिक कमाता था और इससे कम आय वाला व्यक्ति उसको छोटा ही प्रतीत होता था।

लिल्ली गरीब विधवा मां की बेटी थी। उसकी मां लन्दन में एक मकान भाड़े पर लेकर, उसमें 'पेइंग गैस्ट' रख कर निर्वाह का प्रबन्ध कर रही थी। इससे निर्धनता के साथ जो संघर्ष उसकी मां को करना पड़ा था, लिल्ली उसको जानती थी। उसके मन पर काहन की बातों का प्रभाव हुआ था। इससे उसने पूछ लिया, "उसका पिता कितना धनी था?"

"उन दिनों वह एक हलवाई की दुकान पर आठ आने नित्य पर काम करता था।"

"आठ आना? यह तो बहुत कम है!"

"इतनी आय में ही वह अपनी पत्नी और इस बेटे के साथ रहता था। कुछ बड़ा होने पर, यह भी उसी दुकान पर चार आने नित्य पर काम करने लग गया था।"

'और आपके पिता क्या करते थे?"

"उनके कई मकान थे। वे उनको किराये पर देकर पांच-छः सौ रुपया मासिक अर्जित कर लेते थे।"

"तब तो ठीक है। आपके मित्र ने बहुत तरक्की की है। देखिये, मैं आपको समझाती हूं। आपके पिता चार-पांच सौ रुपया मासिक अर्जित करते थे और आप दो हजार रुपया मासिक अर्जन करते हैं। अर्थात् आप चार गुना अधिक अमीर हो गए। उसका पिता आठ आने नित्य अर्जन करता था और वह दस से बारह रुपया अर्जन करने लगा है। कहने का तात्पर्य यह है कि वह अपने बाप से बीस गुना अधिक अर्जन करने लगा है।"

"जितना अंतर उसके और आपके पिता में था, वह अब आप में और उसमें कम रह गया है।"

डॉक्टर हंस पड़ा। कहने लगा, "लिल्ली डियर! उन्नति के मापने का यह तरीका नहीं है।"

"तो कौन-सा तरीका है?"

"उसके रहने का मकान, उसके बच्चों की शिक्षा, उसके मनोरंजन के ढंग इत्यादि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखना। मनुष्य एक सामाजिक जीव है। जितना वह अपने समाज में मेज-जोल रखता है, उतना ही अधिक वह उन्नत माना जाता है।"

"इसमें भी वह कम प्रतीत नहीं होगा। आपको उसने बताया है कि उसने साधुओं और सम्बन्धियों के भोज पर पांच सौ रुपये से अधिक व्यय किया है।

"यदि आप किसी दावत पर दो हजार रुपया व्यय करेंगे, तो आप उसके बराबर सोशल ऐनिमल कहलायेंगे।"

"लिल्ली! क्या तुम उससे प्रेम करने लगी हो?" खीझा हुआ-सा बलराम बोला।

लिल्ली हंस पड़ी। वह कहने लगी, "प्रेम तो नहीं, हां मैं उसकी प्रशंसकों में हो गई हूं।"

"अपने परिचय के आरम्भ में हम भी तो एक-दूसरे के प्रशंसकों में से ही थे?"

"हां, परन्तु प्रेम तो बाद में हुआ था। प्रशंसा का अर्थ प्रेम नहीं होता।"

"मैंने तो पढ़ा है कि अत्यंत प्रशंसात्मक भावना का नाम ही प्रेम है।"

"परन्तु, यह 'अत्यंत' शब्द भेद-भाव करने वाला है।"

लिल्ली के मनोभावों को जानने के लिए डॉक्टर ने ध्यान से उसके मुख पर देखा, परन्तु लिल्ली मुस्कराती ही रही।

: 3 :

काहन अपने इस सुशिक्षित मित्र की बातें अपने घर में भी किया करता था। उसकी बातें सुनकर, उसकी मां और पत्नी उस पर टीका-टिप्पणी किया करती थीं। काहन की मां यमुना बहुत ही सरल-चित्त महिला थी। वह तो उसकी अंट-संट बातें सुनकर हंस दिया करती थी। इस पर भी वह विस्मय किया करती थी और कहा करती थी, "बलराम की मां बेचारी अकेली रह रही है। बलराम की बहिन का विवाह तो पहले ही हो चुका है।"

"क्या जाने उसको वह मेम-पतोहू पसंद न आई हो।" काहन कहता।

"भला उसकी पसंद-ना-पसंद की बात है क्या? गंगा तो साधुनी है। देखो न, पुरानी अनारकली से नित्य रावी स्नान को जाती है। मार्ग भर हरे राम, हरे राम, रटती जाती है। एक दिन हम दोनों इकट्ठी आ रही थीं कि मैंने उसके पुत्र के विषय में बात चला दी। मैंने पूछा कि पतोहू मिलती है? इस पर वह मुझसे पूछने लगी, कि क्या मैं बलराम की बहू के विषय में पूछ रही हूं?"

"मैंने जब कहा कि और कौन पतोहू है? इस पर तो वह पूछने लगी कि मैंने उसे कभी देखा है? मैंने बता दिया कि तुम नित्य उसके घर पर जाकर चाट-पकौड़ी खिलाया करते हो। वह पूछने लगी कि तुम उसके विषय में क्या कहा करते हो। मैंने बता दिया कि तुम उसकी प्रशंसा करते रहते हो। कहते हो कि वह सदा मुस्कराती रहती है।

"वह कहने लगी कि जब विलायत से आई थी, तब एक दिन के लिये उसने उसको देखा था। वह तो हंसती ही रही थी। बलराम ने कहा था कि वह वहीं रहे, क्योंकि न तो बहू सास की बात समझ सकेगी, और न ही सास बहू की। वह उसके रहन-सहन को भी पसंद नहीं करेगी। बस इतना कहकर बलराम उसे तथा बच्चों को लेकर निस्बत रोड वाली कोठी पर चला गया। इसके बाद बहू उसको नहीं मिली। बलराम महीने में एक बार आता है और खर्चे के सौ रुपये दे जाता है। कभी वह रामद्वारे गई हुई होती है तो नीचे दुकानदार को दे जाता है और उसे अपनी मां को दे देने के लिये कह जाता है।

"मैंने जब उससे पूछा कि बहुत दुःखी हो तो वह कहने लगी कि इसमें सुख-दुःख कुछ भी नहीं है। उसने यह समझ रखा है कि लड़का सज्ञान है, पढ़-लिख गया है, सुखी है। बहू भी सुंदर है। ईश्वर की कृपा से बच्चे भी हो गये हैं। इसलिए अब उसे चिंता करने की न तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आवश्यकता है न ही इसके कुछ अर्थ होते हैं।

"मैंने जब उससे बलराम के बच्चों को देखने जाने के विषय में कहा, तो वह कहने लगी कि ये सब व्यर्थ के बन्धन हैं। कभी उसकी इच्छा नहीं हुई।"

काहन का विचार था कि डॉक्टर की मां मोह और ममता-विहीन है। यही कारण है कि उसकी अपने पुत्र, उसकी पत्नी और बच्चों से बनती नहीं है।

इस पर काहन की पत्नी सीता बोली, "नहीं, यह बात नहीं है। मुझे तो मौसी का इस प्रकार का व्यवहार जीवन से निराशा का प्रतीक प्रतीत होता है। डॉक्टर की मां का सुख-स्वप्न पूरा नहीं हुआ। कोई मां इतनी निर्मोही नहीं हो सकती। पुत्र, पतोहू को तो छोड़ा जा सकता है परन्तु पोतों के लिये यह बात अस्वाभाविक है।"

काहन ने उस दिन की बात बताई तो सीता ने कह दिया, "मैं तो पहले ही कहा करती हूं कि आपका मित्र निर्दयी है।"

"क्या निर्दयता की है, उसने?"

"निर्दयी होने के साथ-साथ वह कुछ मूर्ख भी है।"

"वह तो बहुत बड़ा डॉक्टर है।" काहन ने कहा।

"डॉक्टरी करने और गोल-गप्पे बनाने से भला क्या अक्ल का पता चलता है?"

"तो इससे किस बात का पता चलता है?"

"अभ्यास का। कोई भी प्राणी बार-बार किसी काम को करने से उसमें सिद्धहस्त हो जाता है। डॉक्टरी भी एक प्रकार की कारीगरी है। वैसी ही, जैसे गोल-गप्पे बनाना।

"याद है? जब मैंने आपसे कहा था कि हलवाई की नौकरी से पेट नहीं भरेगा, आपको कुछ और काम करना चाहिए। तब आपने कहा था कि आपको कुछ अन्य काम आता नहीं। मैंने कहा था कि काम तो अभ्यास करने से आते हैं। आरम्भ में असफलता होगी, बार-बार करने से सफलता मिल जायेगी। तब आपने पूछा था कि क्या करें?"

"मुझे गोल-गप्पे बहुत पसंद थे। मैंने इसका सुझाव दिया तो आपने बनाने का अभ्यास किया। कई बार बनाने में असफल हुए। फिर आपको बनाना आ गया। दो मास के अभ्यास के बाद तो आप ऐसे हो गये थे कि बेचने योग्य बना सकते थे। घर पर सब सात-आठ आने खर्च आये थे और पहले ही दिन डेढ़ रुपये की बिक्री कर आये तो आपका उत्साह बढ़ गया। अब तो आपकी चाट और गोल-गप्पे नगर में विख्यात हैं। मैं तो इसको भी डॉक्टरी से कम नहीं समझती। परन्तु आपकी बुद्धिमत्ता के लक्षण दूसरे हैं।"

"वे क्या हैं?"

सीता ने अति प्रेममय दृष्टि से अपने पति की ओर देखा और कहा, "माता जी से पूछिये। बेटे की बातें माता ज्यादा अच्छी तरह से जानती है।"

समीप ही बैठी काहन की मां, ये सब बातें सुन रही थी। उसने कह दिया, "काहन! सीता ठीक कहती है। तुम अक्लमन्द इसलिये नहीं हो कि बढ़िया चाट बनाते हो, अपितु इसलिए कि तुम दी हुई सीख को ग्रहण करते हो। सीता ने कहा कि काम का अभ्यास करने से काम करना आता है। तुम इस काम का अभ्यास करने लगे। एक बार एक महात्मा आए थे। उन्होंने कहा, साफ-सुथरा रहना धर्म है। तुम दिन में दो बार नहाने तथा नित्य धुले कपड़े पहनने लगे। भगवान ने तुम्हें ऋद्धि-सिद्धि, बल-बुद्धि दी और तुम दस आने रोज के कारीगर से, दस रुपये पैदा करने वाले बन गये।

"इसी प्रकार मैंने कहा कि साधु-संतों की सेवा से लोक और परलोक का कल्याण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। तब से तुम नित्य ही एक-आध साधु को भोजन देने लगे। अब तुमने मेरे कहने पर भागवत की कथा रख दी। सन्त-महात्माओं को भोजन दिया, अपने सगे-सम्बन्धियों को बुलाया, खिलाया-पिलाया। सब तुमको बुद्धिमान समझने लगे हैं। कितना खर्च किया होगा, काहन?''

''हिसाब तो सीता के पास है। क्यों जी! कितना खर्च हुआ?''

सीता ने गम्भीर हो कहा, ''मां! पांच सौ साठ रुपये दस आने।''

''बहुत खर्च कर दिया है, बहू!''

''माता जी! आपके पुत्र कमा कर लाते हैं और आपके कहे अनुसार खर्च करते हैं। मैं तो केवल हिसाब-किताब ही रखती हूं।''

''पर बेटा! कुछ बचाकर भी रखा है या सब खर्च ही कर देते हो?''

''माता जी! आपके आशीर्वाद से बहुत-कुछ है और अभी हाथ-पांव चलते हैं।''

''देखो, बेटा!'' मां ने गम्भीर होकर कहा, ''जमाना बदल रहा है। चोर-डाकू बहुत बन रहे हैं। उस दिन राधा के घर में चोरी हो गई थी। इस कारण नकदी बैंक में जमा करा दो तो ठीक रहेगा। राधा का घरवाला उसे कह रहा था कि उससे चोरी रखा था सो चोरी हो गया। यदि वह उसके पास रखती तो वह उसे बैंक में जमा करा देता। फिर चोरी कैसे होती?''

''मां! तुम ठीक कहती हो। क्यों सीता! कितना है?''

सीता भीतर गई और सन्दूकची बाहर ही उठा लाई। उसमें रखा हुआ सब गिन डाला। कुल दो हजार, चार सौ अस्सी रुपये था।

मां ने कहा, ''देखो बेटा! कल बैंक में जमा करा आओ। इतनी रकम घर में रखनी ठीक नहीं।''

''पर मां! मुझे तो अपना नाम लिखना भी नहीं आता। बिना दस्तखत के बैंक वाले रखेंगे नहीं।''

''तो बहू के नाम जमा करा दो।''

''मां जी! इनको दस्तखत करने आते हैं, ऐसे ही भोले बन रहे हैं।''

''कहां आते हैं?''

''सुबह तक आ जावेंगे। यह भी करन-विद्या है। रात में आपको अभ्यास करा दूंगी।''

मां हंस पड़ी। कहने लगी, ''ठीक है, बेटा! करत-करत अभ्यास ते जड़मति होत सुजान। रसरी आवत जात ते, सिल पर पड़त निशान।''

एक दिन में तो नहीं, हां एक सप्ताह में काहन अपने हस्ताक्षरों का अभ्यास पूर्ण कर पाया। जब वह अभ्यास कर चुका तो बैंक में गया और बचत-खाते में वह सब धन जमा करा आया।

सीता चौथी कक्षा तक पढ़ी हुई थी। थोड़े-थोड़े वह अंग्रेजी के अक्षर भी जानती थी। परन्तु पूर्व-जन्मों के कर्मों के फलस्वरूप उसकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। जब भी कोई समस्या उपस्थित होती थी, वह बुद्धि से विचार कर, उसका सुझाव निकाल लेती थी। इसी बुद्धि के बल पर उसने अभ्यास, विचार, व्यवहार, चरित्र और स्वभाव का विश्लेषण किया था और सब को पृथक-पृथक् समझ जीवन चलाती थी।

अपने पति के साथ प्रातः चार बजे उठ कर स्नान आदि से अवकाश पा, अपनी दुकान का सामान बनाने लगती थी। दिन के साढ़े दस बजे तक दोनों पति-पत्नी खौंचे का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सामान तैयार कर, उसको खौंचे में सजाकर रख देते थे। खौंचे पर साफ धुली हुई चादर डाल दी जाती थी। तब सीता भोजन बनाती। काहन अगले दिन के लिये सामग्री खरीदने चला जाता था। उसके लौटने पर सब भोजन करते और फिर विश्राम। मध्याह्नोत्तर मां तो रामद्वारे चली जाया करती और सीता घर ही बैठकर रामायण पढ़ा करती थी। काहन अपना खौंचा उठाकर बाजार को चल पड़ता।

काहन यह काम पिछले नौ वर्ष से कर रहा था। और इन नौ वर्षों में परीक्षा और अभ्यास से, उसने अपने सामान में ऐसी विशेषता उत्पन्न कर ली थी कि जो एक बार उसकी चाट खा लेता था, फिर भूल नहीं सकता था।

शहर के अंदर वह एक पैसे में दो गोल-गप्पे देता था। परन्तु दरवाजे के बाहर निकलते ही उसका भाव बढ़ जाता था। वहां वह एक पैसे का एक देता था। दरवाजे के बाहर पत्ते का दाम एक आना होता था। किंतु जब वह कोठियों में जाता तो पत्तों के स्थान पर चीनी की प्लेट और चांदी के गिलट वाले चम्मच प्रयोग होने लगते और गोल-गप्पे एक आने के दो तथा चाट की प्लेट का दो आने हो जाता था।

एक बार डॉक्टर बलराम ने कहा भी था, "काहन! सामान तो तुम्हारा बहुत स्वादिष्ट होता है, परन्तु दाम भी बहुत करारे लेते हो।"

"हां भैया! शहर और गली के बाहर पैसे के दो बताशे देता हूं। दरवाजे के बाहर पैसे का एक और यहां दो पैसे का एक।"

"इतना अंतर! एक दम चार गुना?"

"सामान का दाम तो कुछ भी नहीं होता। सारे खौंचे पर सामान तो एक डेढ़ रुपये का ही होता है। शेष तो हमारे परिश्रम का मूल्य है। इसी प्रकार बेचने में भी परिश्रम करना पड़ता है। गली के बाहर तो कुछ भी मेहनत नहीं करनी पड़ती। दरवाजे के बाहर खौंचा उठाकर लाना पड़ता है और फिर यहां तो कोठी-कोठी में जाकर बेचना पड़ता है। इस सब परिश्रम का मूल्य लेता हूं।"

डॉक्टर जानता था कि किसी मामूली फोड़े पर क्लिनिक में चीरा देने का एक रुपया और घर पर जाकर उतना ही काम करने का दस रुपया लिया जाता है। काहन तो चार गुना ही अधिक ले रहा था। वह प्रकार उसको संतोष हो गया। और फिर उसने कोई भाव-ताव नहीं किया।

: 4 :

डॉक्टर साहनी मध्याह्न का भोजन कर, विश्राम कर रहा था। लिल्ली अपने शयनागार में बैठी 'शेरलौक होम' का जासूसी उपन्यास पढ़ रही थी। विन्सेंट मैक्लोड रोड पर सैंट जैवियर इन्फैन्ट स्कूल में पढ़ने गया हुआ था। फ्लोरा एक छोटी-सी ट्राईसिकल लेकर बरामदे में घूम रही थी। इस समय एक बूढ़ी स्त्री कोठी में आई और बरामदे में लड़की को खेलती देख, उसके पास चली आई। चौकीदार भी इस समय बाहर वाले बरामदे में बैठा ऊंघ रहा था।

आने वाली वृद्धा डॉक्टर बलराम की माता थी। कई दिन से उसकी सहेली यमुना, रावी से लौटते समय नित्य ही उसके पुत्र-पौत्रादि के विषय में बातें करती रही थी। गंगादेवी तो कह देती थी कि सब झूठी माया है। परन्तु उसके मन में अपने पुत्र-पौत्रों को देखने की लालसा दिन-प्रतिदिन बढ़ रही थी। इस मास की प्रथम तारीख को उसका खर्चा देने के लिये बलराम आया था और उसको घर पर न पा दुकानदार को रुपये दे गया था। इससे पहले मास भी ऐसा ही हुआ था। अतः आज वह अपने ममता के आवेग को न रोक सकने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण पुत्र की कोठी पर जा पहुंची।

फ्लोरा एक बूढ़ी औरत को अपने सामने खड़ी हो उसकी ओर ध्यान से देखती हुई पा, पूछने लगी, "वट डू यू वांट?"

गंगा समझ नहीं सकी। इस पर भी उसकी प्यारी सूरत को देख, मुग्ध हो, उसकी ओर देखती रही। इस पर लड़की ने आवाज दे दी—"मम्मी! 'सम बॉडी फौर यू।'"

अपनी सवारी से उतर, फ्लोरा भागती हुई अंदर चली गई। उसकी आवाज सुनकर, लिल्ली बाहर निकल आई। उसने समझा, कोई रोगी आया है। अतः उसने अपनी टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में कहा, "डॉक्टर साहब इस वक्त नहीं मिलता।"

गंगा ने मुस्कराते हुए पूछा, "कहां है डॉक्टर?"

"सोया है।"

"कब जागेगा?"

"एक घंटा में।"

"मैं तब तक बैठूंगी।"

"तो आप इधर आना। बैठने का जागा उधर। आओ।"

गंगा समझ गई कि डॉक्टर की बीवी ने उसको पहचाना नहीं। इससे उसने अपना परिचय देना उचित समझते हुए कहा, "मैं डॉक्टर की मां हूं।"

"तुम मां!" लिल्ली ने हाथ जोड़ दिये। इतना वह सीख गई थी। फिर उसने कहा, "आओ मां!" वह उसको कोठी के ड्राइंग-रूम में ले गई। वहां बैठा, हाथ जोड़े हुए उसने कहा, "पानी पियेगा?"

गंगा की हंसी निकल गई। उसने फ्लोरा को जो अब अपनी मां के पास खड़ी थी, संकेत से अपने पास बुलाया। फ्लोरा जाने में संकोच करने लगी। लिल्ली ने उसको जाने के लिए प्रोत्साहित किया। उसने कहा, "यौर ग्राण्डी। गो एण्ड मीट हर। (तुम्हारी दादी है, जाओ मिलो।)"

"ग्राण्डी! मम्मी! आई डोन्ट नो हर! (दादी? मां! मैं इसे नहीं जानती।)"

"शेक हैंड विद हर। (उनसे हाथ मिलाओ।)"

लड़की धीरे-धीरे आगे बढ़ी। दादी ने बांह पकड़कर, उसको छाती से लगाया। फिर उसको अपनी गोद में बैठाकर, उसका मुख चूम लिया। लड़की खुल गई। उसने मुख चूमने पर हंसते हुए कहा, "वेयर डू यू लिव ग्रांडी? (कहां रहती हो दादी)?"

गंगा समझी नहीं तो लिल्ली ने बताया, "पूछती...कहां रहता...?"

गंगा हंस पड़ी। उसने पोती के गाल पर प्यार से हाथ फेरा और उसको नीचे खड़ा कर दिया। गंगा ने पतोहू को कहा, "बेटा! तुम नहीं आईं तो मैं ही मिलने आ गई हूं। जैसा सुना था, वैसा ही तुमको पाया है।"

"कैसा सुना, कहां सुना...?" लिल्ली ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"काहन की मां से। वह रोज नदी पर स्नान करने जाती है। वहीं मुझे मिलती है।"

"नदी में नहाता है?"

"हां, तुमने देखी है?"

"हां, जहांगीर का मकबरा देखने गया···रास्ता देखा।"

"बहू! तुम हमारी बात समझती हो। कभी मिलने आया करो।"

लिल्ली ने काहन चाट वाले की बातें सुनी और समझी थीं। वह कहता था कि वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्य प्रातःकाल स्नान करने के बाद मां के इस प्रकार दर्शन करता है कि जैसे वह ही भगवान है। वह उसे आशीर्वाद देती है तो उसे परमात्मा का आशीर्वाद समझता है। लिल्ली को उसके ये मनोद्‌गार भले लगे थे। इससे पति की मां को देख, उसे अपनी मां का स्मरण हो आया। काहन के सुझाव पर उसको भी दो वर्ष के उपरान्त उसने चिट्‌ठी लिखी थी। मां का अभी तक कोई उत्तर नहीं आया था। जब पति की मां ने उसको मिलने के लिए बुलाया तो उसने स्वेच्छा से कह दिया, ''आयेगा, अब जरूर आयेगा। आपको कष्ट करने नहीं देगा।''

इस प्रकार बातें होती रहीं। ठीक तीन बजे बलराम उठा और ड्राइंग-रूम में दो स्त्रियों को बातें करते सुन वहीं चला आया और अपनी मां को लिल्ली से घुल-मिल कर बातें करते देख, चकित रह गया।

''मां! तुम यहां? क्या काम था, तुमको?''

गंगा इस प्रश्न को सुन, भौंचक्की हो, उसका मुख देखती रह गई। फिर अपने चित्त को स्थिर कर बोली, ''दो मास से तुम मिले नहीं थे। इस कारण विचार आया कि मैं ही चली चलूं। और देखो, तुम्हारी लड़की मुझ से बातें करती है और बहू दादी-पोती को मतलब समझाती है।''

बलराम हंसा और अपनी लड़की से पूछने लगा, ''यह कौन है? फ्लोरा!''

''मम्मी कहती है, ग्राण्डी है।''

''वह क्या होती है?''

''डैडी की मम्मी।''

''ओह! तुम तो बहुत-कुछ जान गई हो।''

''मैं ग्राण्डी के घर जाऊंगी।''

''वहां कुछ नहीं है।''

''वहां ग्राण्डी है।''

''ग्राण्डी कैसी लगी है?''

''बहुत अच्छी।''

बलराम ने कहा, ''अच्छा मां! चलो, तुमको अपनी मोटर में छोड़ आऊं।''

''मैं अभी अपने पोते को देखकर जाऊंगी।''

''उसको तुमने देखा तो है?''

''आज फिर देखूंगी। तब तो वह बहुत छोटा-सा था।''

''मैं उधर ही जा रहा था, इसलिए कह रहा हूं।''

लिल्ली ने पूछा, ''उधर, किस समय काम है?''

''क्यों, किस लिए पूछ रही हो?''

''मैं भी साथ चलती।''

''किस लिये?''

''आपकी माताजी का घर देख लेती।''

''क्या करोगी देखकर?''

''जिससे कि कभी-कभी इनसे मिलने के लिए जा सकूं।''

''पर तुम्हें वह घर पसंद नहीं आयेगा।''

''मैं वहां रहने के लिये नहीं जा रही हूं। केवल माताजी से मिलने के लिए जाऊंगी।''

''तुम्हें इनसे बातें करने में कठिनाई नहीं होती क्या?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''नहीं, मुझे इनसे बातें करने में आनन्द आता है।''

डॉक्टर ने अपने कंधे झटका कर अपना असंतोष व्यक्त किया और फिर अपने क्लिनिक में चला गया। अभी रोगियों के आने का समय नहीं हुआ था। इस पर भी मां के पास बैठने की उसकी रुचि नहीं थी। मां को मन-ही-मन अपने प्रति पुत्र की अरुचि और उसकी पत्नी का अपने प्रति स्नेह देख, विस्मय हुआ। अभी तक तो बलराम उसको कहता रहता था कि लिल्ली को हिन्दुस्तानी में बात करने में अरुचि है। इससे वह उसकी संगति पसंद नहीं करेगी। परन्तु यहां बात इसके विपरीत दिखाई दी। कभी वह सोचती कि कहीं बहू का व्यवहार दिखावा-मात्र न हो। तो भी जो कुछ था, उसको वह भला ही प्रतीत हुआ था।

विन्सेंट आया तो एक अपरिचित वृद्धा को अपनी मां के समीप बैठी और फ्लोरा को उसके घुटनों में खड़ी देख, इस सब का अभिप्राय जानने के लिये वह कुछ देर तक द्वार पर ही खड़ा रहा। लिल्ली ने उसे खड़े देखा तो उसको भीतर आने का संकेत कर दिया। उसके भीतर आने पर लिल्ली ने कहा, ''देखो, विन्सेंट! ये तुम्हारी ग्राण्ड मां हैं। ये तुम्हारे पिता की माताजी हैं। इनसे हाथ मिलाओ।''

विन्सेंट ने हाथ मिलाया तो गंगा ने उसे भी घसीटकर अपनी टांगों में खड़ा कर, उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा, ''क्या नाम है, तुम्हारा?''

''नाम बताओ।'' लिल्ली ने कहा।

''विन्सेंट।'' लड़के ने बताया।

गंगा ने समझा वसंत। इस कारण उसने कहा, ''बहुत 'लवली' नाम है।'' यह लवली शब्द गंगा ने अभी फ्लोरा से सुना था और उसे स्मरण कर लिया था। फिर उसी प्रकार दादी-पोते में भी बातें होने लगीं। लिल्ली बच्चों और दादी के मध्य, दुभाषिये का काम कर रही थी।

इतने में बाहर से चाट वाले की आवाज सुनाई दी। दोनों बच्चे दादी को छोड़, बाहर भाग गये। वे काहन को पकड़कर ले आये। उसे बरामदे में बैठा कर, मां और दादी को पकड़ ले गये। गंगा को विदित था कि काहन यहां चाट बेचने के लिये आता है। उसकी मां ने बताया था, इस कारण वह बाहर आकर बोली, ''काहन! बहू कैसी है?''

काहन अपना खोंचा बरामदे में टिका कर डॉक्टर की माता को हाथ जोड़ने लगा। बोला, ''ताई जी! आप यहां कैसे आ गईं?''

''क्यों, विस्मय क्यों हुआ है, तुमको?''

''आपको पिछले तीन वर्ष में एक बार भी यहां नहीं देखा। और आज आपको भाभी के साथ बहुत पुराने परिचितों की भांति घुल-मिलकर बैठी हुई देखकर विस्मय होना स्वाभाविक ही है।''

''मैं स्वयं ही आ गई हूं। तुम्हारी मां ने बहू की बहुत प्रशंसा की तो उसको देखने के लिये चली आई थी।''

''भाभी कैसी लगी है?''

गंगा ने फिर वही अंग्रेजी का 'लवली' शब्द बोल दिया।

लिल्ली हंस पड़ी। इस समय बच्चे डैडी को भी घसीटते हुए ले आये। काहन ने डॉक्टर को नमस्कार की और कहा, ''भैया! ताई को यहां देख, चित्त बहुत प्रसन्न हुआ है।''

''मां को यहां कष्ट होता है इसलिये मैं उनको यहां नहीं लाता था।''

''क्यों ताई! कैसी लग रही है, यह जगह?''

''काहन बेटा! मैं यह जगह देखने के लिये नहीं आई। मैं तो बहू और उसके बच्चों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R 089.9143
GUR-M
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
देखने के लिये आई हूं ।''

''पर, मां! बच्चे तो इस कोठी में ही रहते हैं ।'' डॉक्टर ने कह दिया ।

''इस पर भी वे कोठी नहीं हैं ।''

काहन, मां और पुत्र के दृष्टिकोण में अंतर समझ रहा था । यह शरीर और आत्मा की बात थी । फिर भी वह चुपचाप बैठा चाट बनाने लगा । बच्चे बता रहे थे कि वे क्या-क्या खायेंगे । उनकी प्रिय वस्तु थी 'गुजिया' और उसके लिये उछल-कूद मचा रहे थे । बच्चों को देकर, उसने पूछ लिया, ''ताई जी! आप क्या लेंगी?''

''कुछ नहीं ।''

''अच्छा, मैं स्वयं ही आपको बनाकर देता हूं ।''

''नहीं! रहने दो ।''

''ताई! यह मेरी ओर से ले लो । काहन बेटे के हाथ की बनी चीज खाओगी तो उसको आशीर्वाद दोगी । इससे उसके जन्म-जन्मान्तर के पाप कट जावेंगे ।''

Central Library
167960
Gurukul Kangri (Deemed to be University) Haridwar

आज पुनः काहन ने अपनी चाट का मूल्य नहीं लिया । डॉक्टर ने कहा भी कि मां का बेटा खाता कमाता है, इसलिये उसको यह हानि सहने की भी आवश्यकता नहीं । परन्तु काहन हाथ जोड़कर डॉक्टर की माता के सामने खड़ा हो गया और उसको मूल्य न देने के लिये राजी कर लिया ।

काहन गया तो डॉक्टर ने कहा, ''मां! इस काहन के कहने से तुम यहां आई थीं?''

''उसके कहने से क्यों?''

''वह एक दिन मां की प्रशंसा करता हुआ कह रहा था कि मां परमात्मा का अवतार होती है । परमात्मा सब दुनिया को बनाता है और मां अपनी संतान का निर्माता होती है ।''

''तो इसलिये मैं मां बनने के लिये यहां चली आई हूं, यही कह रहे हो न?''

''मां तो तुम हो । मैं यह समझा हूं कि इसने तुमको जाकर यह कहा है कि मां परमात्मा है और उसको अपनी सृष्टि की देख-रेख करनी चाहिये ।''

''नहीं, बलराम! ऐसी कोई बात नहीं है । यह काहन अपनी मां के सामने तुम्हारी बीवी की बहुत प्रशंसा करता रहता है और वह नित्य ही मुझे नदी पर मिलती है और बहू की प्रशंसा किया करती है । उसकी बातों से मेरा मन आज इसको देखने को हुआ तो मैं चली आई हूं ।''

''मां! इन अनपढ़ों की बातों में आकर, तुम व्यर्थ ही अपना समय खराब कर गई हो ।''

''मैं तो ऐसा नहीं समझती । बहू वास्तव में बहुत सुंदर और भली है । इसको देखकर, मेरा चित्त प्रसन्न हुआ है ।''

लिल्ली सामने बैठी थी । इस कारण, इस विषय पर वह अधिक कह नहीं सका । वह मां का तिरस्कार तो कर सकता था, परन्तु अपनी पत्नी का तिरस्कार नहीं कर सका ।

लिल्ली मां के भावों को समझकर, अथवा वैसे ही सभ्य व्यवहार के नाते, अपनी सास से कहने लगी, ''मां! रात का भोजन... ।''

''नहीं बेटा! तुम लोग तो सामिष भोजन करते होगे । मैं तो... ।''

लिल्ली समझ गई । उसने घण्टी बजाकर, बैरे को बुला लिया । उसने उसको चाय लाने के लिये कहा और साथ ही रात का भोजन निरामिष बनाने के लिये कह दिया ।

बलराम को इससे असुविधा-सी अनुभव हो रही थी । इस पर भी वह चुप रहा । रात को भोजनोपरान्त वह मां को उसके घर पर छोड़ने के लिए गया । जाते हुए गंगा ने लिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
को कहा, ''बहू! कभी अवकाश मिलने पर वहां आ जाया करना।''

''यत्न करूंगी।'' बहू का उत्तर था।

: 5 :

घर लौटते समय डॉक्टर ने अपनी पत्नी को ताड़ना के भाव में कहा, ''कितना समय व्यर्थ गंवाया है आज तुमने?''

''क्यों कोई आवश्यक काम करना था क्या?''

''आज बच्चों को लेकर हम लारेंस गार्डन जाने वाले न थे।''

''तो क्या हुआ, वहां कल चले जावेंगे।''

''कल तो बुधवार है, मुझे क्लब जाना होगा।''

''कल क्लब मत जाइयेगा। क्या रखा है, वहां?''

''यह तो तुम ही बताओ कि क्यों सज-धज कर वहां जाया करती हो?''

''सज-धज के लिये तो आप ही कहा करते हैं। मैं तो वहां केवल मनोरंजन के लिये जाती हूं। आज मेरा उससे अधिक मनोरंजन यहीं हो गया है।''

''क्या मनोरंजन हुआ है?''

''दादी और पोतों की बातें सुनने का रस मिला है। मैं बीच में दुभाषिये का काम कर रही थी।''

''एक तो मूर्ख और गंवार औरत और दूसरे अनजान बालक! क्या बात हुई होगी? अच्छा देखो, वहां मत जाना। मैं इसे पसंद नहीं करता।''

यह प्रथम अवसर था जब लिल्ली अपने पति द्वारा आज्ञा की परिधि में रखी गई थी। अपनी सास उसको सभ्य और सुहृदय महिला प्रतीत हुई थी। उसके पुत्र की ओर से ही उसके साथ सम्पर्क न रखने की आज्ञा सुनकर वह विस्मय में पति का मुख देखने लगी। उसको कुछ संदेह हुआ कि उसके पति की मां का चरित्र कहीं शिथिल तो नहीं रहा। और उसका पति सम्भवतया इसी कारण उससे सम्पर्क रखने के लिये मना कर रहा हो। इस संशय के उठते ही वह अपना संदेह निवारण करने के लिये पूछने लगी।

''तो आपके कहने का यह अर्थ समझूं कि...।''

इसके आगे वह कुछ कह नहीं सकी। अपनी सास सदृश भद्र महिला के लिये वह अपने मुख से संशय के शब्द प्रकट नहीं कर सकी। जब वह आधा वाक्य ही छोड़ कर चुप हो गई तो डॉक्टर ने कहा, ''हां बोलो, क्या समझी हो तुम?''

''नहीं, कुछ नहीं।''

''क्या कुछ नहीं?''

लिल्ली ने बात बदल दी। उसने कहा, ''क्या मैं यह समझूं कि आज से मैं आपकी आज्ञा का पालन करने वाली दासी-मात्र हूं?''

अपने अयुक्तिसंगत व्यवहार के लिये डॉक्टर मन-ही-मन लज्जा अनुभव करने लगा था। परन्तु अपने को युक्तिसंगत प्रकट करने के लिये उसने कह दिया, ''देखो लिल्ली! मैं तुमसे आयु में बड़ा हूं। मैं शिक्षित भी अधिक हूं। मैं हिन्दुस्तानी होने के नाते यहां के आचार-विचार का अधिक ज्ञाता हूं। इससे मैं जो कहूं, वह तुमको मानना चाहिए।''

''देखिये जी! एक 'कामरेड' और एक 'सर्वेंट' में अंतर यही होता है कि विद्वान आदमी अपने साथी को समझा कर कहना मनवाते हैं और नौकर को बिना समझाये आज्ञा दी जाती है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अच्छा, लिल्ली! छोड़ो इस बात को जैसी तुम्हारी मन करे, करना। मैं तुमको समझा नहीं सकता। मैंने अपनी रुचि बता दी है। मैं अपनी आज्ञा वापस लेता हूं।"

लिल्ली ने बात बदल दी। उसने कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि आपकी माता जी और चाट वाले की माता जी परस्पर गहरी सहेलियां हैं। वह आपकी माता जी को हमारी सब बातें बताती रहती है।"

"मैं समझता हूं कि काहन से चाट लेना बंद कर देना चाहिये। वह सीमा से अधिक घनिष्ठता बढ़ा रहा है। आज ही देखो, माता जी के नाम पर रुपये-डेढ़ रुपये की चाट बिना मूल्य पर दे गया है। मानो वह मुझसे भी अधिक धनी व्यक्ति हो।"

"मैं तो खानी बंद कर दूंगी, परन्तु बच्चों की बात है। वे पीछे पड़ जाते हैं तो उनको रोका नहीं जा सकता। एक बार मैंने उन्हें मना किया था तो काहन पूछने लगा कि क्या बच्चे बीमार हैं? मैंने उसको कहा कि नहीं बीमार नहीं है, अपितु इनकी आदत बिगड़ रही है। तब वह ठीक है कहकर चला गया। इसके बाद उसने इधर से जाना छोड़ दिया। बच्चे नाराज रहने लगे। एक दिन वह चुपचाप बिना आवाज दिये इधर से जा रहा था कि विन्सेंट ने देख लिया, और बाहर जाकर उसको पकड़ लाया। उस दिन मैं चुप रही। मैंने स्वयं कुछ नहीं लिया। उसने बच्चों को खिलाया और पैसे नहीं लिये। मैंने बहुत कहा, किन्तु वह बिना पैसे लिये ही चला गया। आखिर मैंने उससे कुछ खाया, तब उसने कुछ पैसे लिये।"

"जो भी हो। उसे तनिक दूर ही रखना चाहिये। मैं समझता हूं कि तुम तीन बजे से पहले ही फ्लोरा को साथ ले विन्सेंट को स्कूल से लेने के लिये चली जाया करो और फिर उसको किसी अच्छे होटल में खिला-पिला कर ले आओ। तब तक उसका समय निकल जायेगा।"

"यदि आपकी यही सम्मति है कि काहन से सम्पर्क कम करना चाहिये तो यही तरीका ठीक है।"

अगले दिन काहन कोठी के बाहर आवाज लगाता रहा, किन्तु बच्चे बाहर निकल कर नहीं आये। कोठी के अंदर छुपा बलराम काहन की परेशानी देख रहा था। कई दिन तक इसी प्रकार चलता रहा। अंत में काहन ने आवाज देनी बंद कर दी और फिर निस्बत रोड का चक्कर लगाना ही बंद कर दिया। अब वह रतनचंद रोड से मैक्लोड रोड की ओर जाने लगा था।

बच्चों की चाट खाने की आदत छूट गई। तब साधारण जीवन चलने लगा। परन्तु लिल्ली के मन की अवस्था साधारण नहीं हुई थी। एक दिन, जिन दिनों वह विन्सेंट को लेने के लिये स्कूल जाया करती थी, डॉक्टर को बताये बिना, गंगादेवी से मिलने के लिये चली गई। गंगादेवी घर पर ही थी। घर में कमरे तो कई थे, परन्तु रहने वाली वही अकेली थी। एक कमरे में एक तख्तपोश पर चटाई बिछी थी और उस पर एक तकिया रखा हुआ था। यह गंगादेवी के सोने का स्थान था। भूमि पर भी एक चटाई बिछी हुई थी। वहां पर तुलसीकृत रामायण और माला रखी हुई थी।

गंगा ने बहू और बच्चों को खाने के लिये मिठाई और पीने के लिये चाय दी। वह कहने लगी, "बलराम को जा कर मेरी ओर से धन्यवाद देना, जो उसने मेरी सुधि लेने के लिये तुम्हें भेज दिया है।"

लिल्ली बता नहीं सकी कि वह अपने पति की रुचि के विपरीत उससे मिलने के लिये आई है। इस पर भी उसने कहा, "यह मकान तो काफी बड़ा है?"

"हां।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप अकेली ही इसमें रहती हैं?"

"हां।"

"आपको भय नहीं लगता है।"

"भय तो नहीं, हां, कुछ सूना-सुना जरूर लगता है।"

"तो आप हमारे साथ चलकर क्यों नहीं रहतीं?"

"इसी कारण तो गई थी। परन्तु तुम्हारे पति ने तो उस रात को भी वहां रह जाने के लिये नहीं कहा। रात के दस बजे वह यहां छोड़ गया था।

लिल्ली इसका कारण जानती थी। इस कारण उसने पूछा, "मां! उन्होंने ऐसा क्यों किया, यह मैं भी नहीं समझ सकी।"

"बेटा! यह तो वही बता सकता है। अपनी जानकारी में मैंने उसके साथ कोई ऐसा व्यवहार नहीं किया, जिसका यह फल हो सके।"

"मैं पूछूंगी।" लिल्ली ने कह दिया। फिर वह उसकी दिन-चर्या के विषय में पूछती रही।

गंगा ने बताया, "मैं प्रातः चार बजे उठती हूं, शौचादि से निवृत हो रावी पर स्नान करने के लिये चली जाती हूं। वहां से आठ बजे लौटती हूं। दूध वाला नीचे दुकानदार के पास दूध दे जाता है। मैं नदी से आकर अल्पहार बनाती हूं और ले लेती हूं।

"इसके बाद साढ़े नौ बजे से ग्यारह बजे तक रामायण का पाठ करती हूं।"

"यह क्या होती है?" लिल्ली ने पूछा।

"हमारी एक धर्म-पुस्तक है; उसको पढ़ने के बाद आधा घण्टा आराम करती हूं, फिर भोजन बनाती हूं और खाती हूं। साढ़े बारह बजे खा कर सोती हूं। ढाई बजे उठकर कभी तो बलराम की बहिन के घर और कभी रामद्वारे चली जाती हूं। रामद्वारा एक मन्दिर है, वहां कथा-कीर्तन होता है। जिस दिन मैं वहां जाती हूं, वहां से पांच बजे लौटकर आती हूं। थोड़ी देर आराम कर भोजन बनाती हूं और खा-पीकर रात को साढ़े आठ बजे सो जाती हूं।"

"आपकी आयु कितनी है?"

"साठ वर्ष की हो चुकी है। बलराम मेरी छोटी संतान है। इस समय उसकी आयु पच्चीस वर्ष की होगी। बलराम की बहिन तिलोत्तमा, उससे बड़ी है। उसकी आयु इस समय अट्ठाइस वर्ष की है।"

"बहिन जी के कभी दर्शन नहीं हुए?"

"तुम लोगों का विवाह विलायत में ही हो गया था। बिना सूचना दिये, तुम लोग यहां चले आये। और केवल एक दिन इस मकान में रहकर तुम लोग निस्बत रोड वाली कोठी में चले गए। तिलोत्तमा का पति सुदर्शनलाल अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर दूसरे दिन तुम लोगों से मिलने के लिये आया था। किन्तु तुम लोग उससे एक दिन पूर्व ही जा चुके थे। बलराम का इस प्रकार बिना सूचना दिये विवाह करना, और फिर बिना सूचना दिये लाहौर आना और यहां आकर भी बिना सूचना दिये और बिना मिले दूसरे मकान में चले जाना उसकी बहिन तिलोत्तमा को बहुत बुरा प्रतीत हुआ। वह उस दिन मुझसे कहने लगी कि अब जब भाई उसको बुलायेगा तभी वह उससे मिलने जायेगी अन्यथा नहीं।

"उसके पति सुदर्शनलाल को आश्चर्य तो इस बात का था कि बलराम मुझे अकेला छोड़ कर चला गया है। उसके पिता का देहान्त उसके विलायत जाने के बाद हुआ। पिता की पूर्ण सम्पत्ति एक वकील की देख-रेख में थी। वही उसको विलायत में खर्चा भेजता था और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मुझे सौ रुपये मासिक यहाँ के खर्च के लिए देता था। बलराम की इस व्यवस्था का ज्ञान विलायत में ही हो गया था।

''बलराम सात वर्ष तक विलायत में रहा। उसके पिता के देहान्त होने के चार वर्ष बाद तक मैं इसके लौटने की प्रतीक्षा करती रही। वह आया तो, किन्तु मुझे अकेली छोड़कर चला गया। इस कारण सुदर्शनलाल को उस पर क्रोध भी है। यहां आने के बाद भी पिछले पांच वर्ष में उसने कभी मुझे बुलाया नहीं और न ही तिलोत्तमा से मिलने का यत्न किया। उसकी बहिन और बहनोई, दोनों यही समझते हैं कि तुमने ही उसको सिखा-पढ़ाकर हमारे विपरीत कर दिया है।''

उस दिन लिल्ली नित्य से कुछ विलम्ब कर के घर लौटी थी। इस कारण डॉक्टर ने पूछा, ''आज किधर गई थीं?''

लिल्ली ने झूठ नहीं बोला। उसने कहा, ''आज मैं आपकी मां से मिलने के लिये चली गई थी।''

''क्यों, कुछ काम था क्या?''

''हां, वे अकेली रहती हैं। इस कारण मैंने सोचा कि उनका स्वास्थ्य-समाचार ले आऊं।''

''तुमको किसने बताया कि वह अकेली रहती हैं?''

''तो कौन रहता है उनके पास?'' लिली को पुनः अपनी सास के चरित्र पर संदेह हुआ। उस घर में कमरे तो कई थे, परन्तु सब खाली पड़े थे। इस प्रश्न से तो लिल्ली को भी अपने पति पर क्रोध चढ़ आया।

बलराम ने कहा, ''उसका धर्म-कर्म, उसका कथा-कीर्तन और फिर तिलोत्तमा के बाल-बच्चे सब तो उसके साथ हैं।''

''बच्चा तो वहां कोई नहीं था। हां, उनकी एक धर्म-पुस्तक और एक माला वहां अवश्य दिखाई दी थी। परन्तु इनकी संगति को 'साथी' तो नहीं कहा जा सकता?''

''उसकी इसी 'कम्पनी' से तो मैं डरता हूं।''

''क्यों, क्या डर लगता है उनसे?''

''धर्म-कर्म एक छूत की बीमारी है। इस रोग में ग्रस्त रोगी की कोई चिकित्सा नहीं होती।''

''धर्म से क्या मतलब?'' अंग्रेजी के वार्तालाप में बलराम ने धर्म शब्द का ही प्रयोग किया था। इस कारण लिल्ली इसका अर्थ समझ नहीं पाई थी।

बलराम ने इसका अनुवाद करते हुए बताया, ''धर्म अर्थात् रिलीजन।''

रिलीजन के लिये लिल्ली के मन में भी कुछ विशेष आदर नहीं था। उसकी मां अन्ना हैंडरसन भी सप्ताह में कम-से-कम एक बार गिरजाघर जाया करती थी और कभी-कभी जब अपने विचार से वह कोई पाप कर बैठती थी तो 'रिपेंटेंस और कनफैशन' (प्रायश्चित और स्वीकारोक्ति) के लिये बीच में भी चली जाया करती थी। इस पर भी लिल्ली इसको संक्रामक रोग नहीं मानती थी। कम-से-कम वह बीस वर्ष तक अपनी मां के पास रहकर भी इस रोग में ग्रसित नहीं हुई थी।

''आप इससे इतने भयभीत क्यों हैं?''

''क्योंकि मैं इसको मानसिक रोग समझता हूं। यह शारीरिक रोगों से भी अधिक भयंकर होता है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"मेरी मां भी रिलिजियस प्रकृति की है। उसके पास मैं अपनी आयु के बीस वर्ष बिता आई हूं परन्तु मुझे तो यह रोग लगा नहीं।"

"परन्तु तुम्हारी मां तो एक दुनियादार औरत प्रतीत हुई थी। हमारा संबंध विवाह से पहले ही बन चुका था। जब उसको पता चला तो उसने शान्ति से कह दिया कि विवाह कर लो। हमने विवाह कर लिया और बात आई-गई हो गई। परन्तु यदि यहां किसी को इस बात का ज्ञान हो गया तो ये 'रिलीजियस प्राणी' मेरा जीवन बरबाद कर देंगे। कितने तो जप-तप बतायेंगे, प्रायश्चित करने के लिये कहेंगे और कदाचित् अड़तालीस घंटे तक एक टांग पर खड़ा होने के लिये कहेंगे।"

लिल्ली हंस पड़ी। उसने बात को समाप्त करने के लिये कहा, "तब तो वास्तव में ये भयंकर ही जीव हैं।"

"हां, इसीलिये मैं तुमको और बच्चों को इनसे पृथक् रहने के लिये कहता रहता हूं।"

: 6 :

बलराम के डराने-धमकाने पर भी कि उसके धर्मरोग में ग्रसित हो जाने का भय है, लिल्ली प्रभावित नहीं हुई थी। अपने पति को वह यह कहने वाली थी कि मां को लाकर अपने घर में रख लें परन्तु यहां तो बात ही उल्टी हो गई। मां के चरित्र पर नहीं, प्रत्युत उसके विचारों पर संशय उत्पन्न किया गया था। वह व्यवहार से तो विचार की, जो व्यवहार का स्रोत होता है, कुछ बुरी नहीं लगी थी। परन्तु व्यवहार में तो कृत्रिमता भी हो सकती है। विलायत में यह प्रायः विख्यात था। इसको 'एटिकेट' (शिष्टाचार) कहते हैं। इसके लिये लिखित नियम है। उनका पालनकर्ता सभ्य, सुशील और भद्र व्यक्ति माना जाता है। मन में कितनी भी घृणा क्यों न हो, मुस्कराते हुए मिलना, हाथ मिलाना, चाय-पानी पूछना इत्यादि आचरण किया ही जाता है। लिल्ली समझती थी कि यहां भी इसी प्रकार हो सकता है।

लिल्ली ने सुन रखा था कि रिलीजियस विचार के हिन्दू लोग तो दूसरे देश, पंथ अथवा जाति के लोगों के साथ खाते-पीते भी नहीं। यदि कोई उनको छू जाता है, तो वे फिर स्नान करते हैं। वे दूसरों को सदा छोटा और घृणित मानते हैं। उसको इस बात का ध्यान आया तो उसके विपरीत अपनी सास का व्यवहार उसे विलक्षण प्रतीत होने लगा।

इस पर भी उसने इसके विषय में पूछा नहीं। लिल्ली क्लब में जाती थी, परन्तु अपने पति के कहने पर ही। अपने मन में उसको वहां जाने वालों का आचार-विचार कुछ अच्छा प्रतीत नहीं होता था।

डॉक्टर जीमखाना क्लब का सदस्य था। उसमें योरोपियन और हिन्दुस्तानी, दोनों ही समाज के व्यक्ति आते थे। दोनों ही मद्य तथा मांस का अबाध प्रयोग करते थे। नाचते थे और परस्पर प्रेम-प्रलाप करते थे। लिल्ली के लिए यह कोई विलक्षण अनुभव नहीं था। इंग्लैंड में भी उसको क्लबों अथवा पार्कों में इस प्रकार के व्यवहार का अनुभव था। जन्मजात संस्कारों से ऐसे लोगों के व्यवहार को वह जानती थी कि किसी मद्य से मस्त व्यक्ति से किस प्रकार बात करनी चाहिये, उसको किस प्रकार प्रेम की मृग-तृष्णा में फंसाये रखना चाहिये अथवा वासनाभिभूत व्यक्ति से किस प्रकार स्वयं को बचाकर रखना चाहिये, किस सीमा तक उसके व्यवहार को सहन करना चाहिये इत्यादि। परन्तु हिन्दुस्तानी साहबों से व्यवहार का ढंग वह अभी नहीं जान पाई थी। वे तो मद्य-पान कर अथवा वासना से अंधे हुए एक तूफान की भांति आते थे। उनकी अवहेलना करना बहुत कठिन कार्य था।

लिल्ली का जन्म रोमन कैथोलिक परिवार में हुआ था। इस कारण पर-पुरुष के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
प्रति व्यवहार और सद्‌चरित्रता की विशेषता उसको भली प्रकार समझाई गई थी। अभी तक उसने अपना जीवन शुद्ध ही रखा हुआ था। परन्तु लाहौर आकर तो वह भारी असमंजस में पड़ गई थी। यहां के रईसजादे हिन्दुस्तानियों से बचने में उसको कठिनाई अनुभव होने लगी थी।

उसकी अन्तरात्मा ने इसका भी प्रतिकार ढूंढ लिया था। उसने क्लब में मद्य-सेवन बंद कर दिया। अपना भोजन उसने निरामिष करना आरम्भ कर दिया। अपने पहनावे की व्यवस्था भी बदल दी। नृत्य के समय भी वह इस प्रकार के वस्त्र धारण करती थी कि जिससे उसके शरीर का कम-से-कम अंग निरावृत्त रह सके। परिणाम यह हो रहा था कि तितलियों के पीछे भागने वाले युवक उसके साथ नृत्य करने में अरुचि अनुभव करने लगे।

क्लब में 'नृत्यभूषा' का अभिप्राय ही यह समझा जाता था कि ऊंची टाइट स्कर्ट, लो नैक ब्लाउज, उरोजों को उभार कर रखने वाली अंगिया, कंधों तक नंगी बांहें और छाती के रंग से मिलान करने वाला गले का हार। लिल्ली समझती थी कि भला इनका नृत्य के साथ क्या संबंध है? जब वह लन्दन में पति की खोज में थी, तब तो उसको अपना शारीरिक सौन्दर्य दिखाने के लिए अपने शरीर के अधिक-से-अधिक प्रदर्शन की आवश्यकता अनुभव हुई थी। वह भी बहुत अल्पकाल के लिये। वह अठारह वर्ष की आयु में ऐसा अनुभव करने लगी थी कि विवाह कर जीवन में स्थिर हो जाना चाहिए। इसलिए सप्ताह में एक बार मां से चोरी-चोरी वह किसी क्लब में डांस इत्यादि में जाने लगी थी। परन्तु यह प्रक्रिया छः मास से अधिक नहीं चली। उसको अपना जीवन-साथी क्लबों अथवा पार्कों में घूमता हुआ नहीं, प्रत्युत अपनी मां के पेइंग गेस्टों में मिल गया।

बलराम ने उसको बताया था कि दो वर्ष से वह उसकी रूप-राशि का प्रशंसक है। वह उसके मन के विकास का अनुमान लगाना चाहता था और उसके चरित्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहता था। जब वह इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुई तो सम्बंध बन गया और कुछ समय बाद विवाह भी हो गया।

यह सब तो तब था, जब वह विलायत में थी। अब वह इन सबको व्यर्थ समझती थी। एक दिन डॉक्टर के एक मित्र ने जीमखाना क्लब में कहा, "लिल्ली डियर! तुम्हारे साथ नृत्य किये बहुत दिन हो गये हैं?"

"आइये, आज एक दो राउण्ड लगा लें।"

"परन्तु तुमने नृत्य के उपयुक्त वस्त्र तो पहन ही नहीं रखे?"

"यह पोशाक क्या पांव में अटक जावेगी?"

"नहीं ऐसा तो नहीं। किन्तु क्या डॉक्टर तुमको डांस के लिए ड्रेस बनवा कर नहीं देता? कहो तो मैं तुमको बाजार से लाकर दे दूं?"

"ऐसी बात नहीं। इस समय भी मेरे पास डांस के लिए कई बढ़िया ड्रेस पड़ी हुई हैं। परन्तु मिस्टर थापर! मैं आज-कल उनको पहनकर नाच करने का कोई भी अर्थ नहीं समझती।"

"क्यों?"

"एक तिहाई से अधिक शरीर तो उनमें नग्न रहता है। और मुझे आज अपने शरीर के दिखाने का कोई प्रयोजन प्रतीत नहीं होता।"

"उसके दिखाने में कब प्रयोजन था?"

"जब तक मेरा विवाह नहीं हुआ था और मैं 'ब्राइड' के रूप में निर्वाचित होने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
प्रत्याशिनी थी। अब तो मेरा विवाह हो चुका है और ईश्वर की कृपा से मेरी दो संतान भी हैं।''

निराश मिस्टर थापर को नृत्य के लिए साथिन ढूंढने के लिए किसी अन्य का आश्रय लेना पड़ा।

डॉक्टर, लिल्ली को बहुत सुंदर समझता था और आरम्भ में उसकी नृत्य के लिए मांग ने उसके मन के इस भाव की पुष्टि ही की थी। परन्तु लगभग एक वर्ष से लिल्ली की क्लब में सर्वप्रियता कम हो रही थी, और अब तो दो मास से उसको किसी ने भी नृत्य के लिए आमन्त्रित नहीं किया था। डॉक्टर इससे कुछ अपमानित-सा अनुभव करता था।

बुधवार को क्लब में नृत्य दिवस होता था। उस दिन जब डॉक्टर जाने लगा तो उसने कहा, ''डार्लिंग! आज तो नृत्य दिवस है?''

''जी हां।''

''तुम अपनी डांस-ड्रैस नहीं ले जा रही हो?''

''यदि आप मुझे अपने साथ नाचने के लिए निमंत्रण देने वाले हों तो मैं ले चलती हूं।''

''परन्तु मुझे तो नृत्य आ ही नहीं सकता। न तो मुझ में म्यूजिक की सेंस है और न ही ताल और लय की।''

''तो मैं किसी अन्य के साथ नाचने की इच्छा नहीं रखती।''

''क्यों?''

''अपना शरीर नंगा कर किसी दूसरे व्यक्ति से रगड़ने की मेरी इच्छा नहीं होती।''

''नंगा कहां होता है?''

''भुजायें तो समूची नंगी होती हैं। गले के नीचे का भाग भी नंगा रहता है। फिर कम-से-कम घुटनों तक तो टांगें भी नंगी ही रहती हैं। यह सब मुझे पसंद नहीं है। यह सब-कुछ जैसा भी है, आपके लिए है। किसी अन्य के देखने अथवा छूने के लिये नहीं।''

डॉक्टर कह नहीं सका कि वह उसको दूसरों के साथ नाचती देख प्रसन्नता अनुभव करता है।

डॉक्टर तो मद्यपान करता था। हिन्दुस्तान में आकर वह अधिक पान करने लग गया था। इस पर भी अपने व्यवसाय में अधिक कुशल होने के कारण दिन-प्रतिदिन उसकी ख्याति बढ़ रही थी। लिल्ली समय-समय पर उससे कहती थी कि उसको मद्य का सेवन नहीं करना चाहिये।

''क्यों?''

''आपका कार्य इस प्रकार का है कि आपके हाथों की दृढ़ता और स्थिरता बनी रहनी चाहिये। आपकी आंखों की ज्योति भी स्थिर रहनी चाहिये।''

''इसकी तुम चिंता न करो, यह सब स्थिर और दृढ़ रहेगा।''

काहन की चाट खाये इन लोगों को एक वर्ष से अधिक हो गया था। इस अवधि में कई बार लिल्ली अपनी सास से मिलने के लिए जा चुकी थी। अब दोनों में विचार-समानता उत्पन्न हो रही थी। डॉक्टर जानता था कि उसकी पत्नी उसकी मां से मिलने के लिए जाया करती है। परन्तु अपना व्यावसायिक कार्य बढ़ जाने के कारण वह इस ओर ध्यान नहीं दे पाया था।

आरम्भ में तो उसने बच्चों को वहां जाने के लिए मना किया था, परन्तु अब तो वह इसकी भी परवाह नहीं करता था। लाहौर के अधिकांश बड़े ऑपरेशन उससे ही करवाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जाते थे, और वह एक ऑपरेशन की फीस पांच सौ रुपया लेने लगा था। प्रायः उससे सम्मति ली जाती थी और उसकी सम्मति से छोटे डॉक्टर ऑपरेशन करते थे। राय देने का भी वह पचास से सौ रुपये तक ले लेता था।

घर में रुपयों की वर्षा होने लगी, तो बीवी के विषय पर उसका ध्यान नहीं रहा। लिल्ली अब साड़ी पहनती थी और बच्चों को भी देशी पोशाक, कम-से-कम घर पर, पहननी होती थी।

लिल्ली समझ गई थी, डॉक्टर के मन में अपनी मां तथा हिन्दुस्तानी धर्म-कर्म के विषय में भ्रम है। फ्लोरा पांच वर्ष की हुई तो लिल्ली के पुनः गर्भ रह गया। इससे डॉक्टर परेशानी अनुभव करने लगा। वह लिल्ली को प्रातःकाल आलस्य में चारपाई पर लेटी देख, चिंता व्यक्त करते हुए कहने लगा, ''यह तुमने एक और झंझट मोल ले लिया है। मैं तो तुम्हें सदा कहता रहता हूं कि गर्भ-निरोधक उपकरण प्रयोग करो, तुमने अवश्य इस दिशा में भूल की है।''

''परन्तु, इसे आप झंझट क्यों कहते हैं?''

''मैं काम पर जाता हूं तो मेरा ध्यान तुम्हारी ओर रहता है।''

''आप क्या समझते हैं कि मैं मर रही हूंगी?''

''नहीं, यह तो नहीं, परन्तु, मैं विचार करता हूं, कि इस बार पांच वर्ष बाद गर्भ ठहरा है। क्या जाने तुम पर भी छुरी चलानी पड़े। यह विचार कर मैं कांप उठता हूं।''

''प्रथम तो मुझे ऐसी भय की बात ही प्रतीत नहीं होती। इस पर भी यदि कहीं मेरा ऑपरेशन हुआ तो आप मत करियेगा। किसी अन्य सर्जन को इस काम पर नियुक्त कर दीजियेगा।''

''क्या मुझ पर तुम्हारा विश्वास नहीं रहा?''

''यह मेरे विश्वास का प्रश्न नहीं। यह तो आपके आत्म-विश्वास की बात है।''

बलराम विस्मय में पत्नी का मुख देखता रह गया। इस पर लिल्ली ने कह दिया, ''क्या आपकी माताजी को मैं सहायता के लिये बुला लूं?''

''मैं समझता हूं कि यदि वह आई तो अपना धर्म-कर्म, माला-पोथी साथ लेकर ही आवेगी।''

''उनको वह छोटा कमरा दे देंगे। वे सब-कुछ उसमें रख लेंगी। हां, खाना वे अपना पृथक् बनायेंगी। हमारे खानसामे के हाथ का वे खायेंगी नहीं।''

''क्यों?''

''वह कहती थीं कि वह गंदा रहता है। न तो हाथ धोकर खाना बनाता है, न ही टट्टी-पेशाब के बाद हाथ धोता है।''

''यह तो तुम भी नहीं करतीं?''

''आपको किसने बताया है कि मैं ऐसा नहीं करती?''

''मैं जानता हूं इंग्लैण्ड में इसका रिवाज नहीं है।''

''परन्तु वहां हम हाथ से खाते भी तो नहीं। इस पर भी हाथ-मुंह तो नित्य धोते ही हैं। मैं आपको बताती हूं। आपकी माताजी ने मुझे हाथ धोने का ढंग सिखाया है। उन्होंने खाने से पूर्व और खाना खाने के बाद हाथ धोने के लिए कहा है। उनका कहना था कि यदि मैं ऐसा करूंगी तो वे मेरे हाथ का खा लेंगी। तब से खाने को हाथ लगाने से पूर्व हाथ धो लेती हूं और वे मेरे हाथ का खाना खाती हैं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो फिर उसके लिए एक रसोई-घर भी पृथक् बनाना पड़ेगा?"

"इसकी आवश्यकता नहीं। उनके कमरे में ही एक मेज रखवा दूंगी। उस पर उनकी रसोई रहेगी।"

"वे मानेंगी नहीं?"

"मैंने उनसे बात कर ली है।"

"तो तुम उनसे सब बात पक्की कर चुकी हो?"

"हां! कर तो चुकी हूं। पर आपकी स्वीकृति के आधार पर।"

"और मैं न मानूं तो?"

"तो फिर क्या? वे पहले भी अपने मकान में रहती हैं, फिर भी रहेंगी। अंतर तो मेरी सुख-सुविधा में पड़ेगा।"

"नहीं, तुम्हारी सुख-सुविधा के लिए मैं एक होल-टाईम नर्स रख दूंगा।"

"परंतु नर्स, चाहे वह कितनी भी कुशल क्यों न हो, अपने निकटतम सम्बंधी की स्थानापन्न नहीं हो सकती।"

"लिल्ली! तुम ठीक कहती हो। परन्तु तुम हिन्दुस्तान और यहां की औरतों के विषय में जानती नहीं। मैं अपने अनुभव के आधार पर कहता हूं कि मां के कारण तुम्हें सुख के स्थान पर दुःख होगा।"

"तो आपको यह व्यवस्था स्वीकार नहीं है?"

"मैं तो तुम्हें सुख पहुंचाना चाहता हूं।"

: 7 :

लिल्ली को बहुत आशा थी कि पुत्र मां को घर लाकर रखने के लिये तैयार हो जावेगा किंतु इस विषय में पति का हठ देख वह अति निराश हुई। निस्बत रोड वाली कोठी काफी बड़ी थी और एक अन्य प्राणी के वहां आकर रहने से किसी को भी किसी प्रकार की असुविधा होने की आशंका नहीं की जा सकती थी। मां के आ जाने पर भी तो नर्स रखी जा सकती थी। इससे वह समझती थी कि अवश्य कोई असाधारण कारण है कि जिससे उसका पति अपनी मां को अपने साथ रखना नहीं चाहता। वह इस कारण को जानने का यत्न कर रही थी, परन्तु वह कुछ समझ नहीं सकी थी।

उसने मन में निश्चय कर लिया था कि वह अपने पति से पूछने की अपेक्षा अपनी सास से जानने का यत्न करेगी। एतदर्थ उक्त वार्तालाप के तीन दिन बाद उसने डॉक्टर की मोटर निकाली और स्वयं चलाती हुई पुरानी अनारकली, अपनी सास के मकान पर जा पहुंची।

उस दिन मकान पर बहुत से लोग एकत्रित हो रहे थे। वह तो मकान पर भीड़-भाड़ देख नीचे से ही चली आती, यदि मकान से उतरते हुए काहन चाटवाले की दृष्टि उस पर न पड़ जाती। लिल्ली अभी विचार ही कर रही थी कि मोटर घुमा ले, इस समय काहन ने समीप आ खड़े होकर, हाथ जोड़कर नमस्कार कर दी।

लिल्ली ने काहन को देखा तो उसके अभिवादन का उत्तर दे पूछने लगी, "आज यहां क्या है?"

"ताई जी ने रामायण की कथा रखाई हुई है और वह कथा, लाहौर के विख्यात पण्डित सोमनाथ, दस दिन में समाप्त करने वाले हैं। आज चौथा दिन है। इस समय लोग कथा सुनने के लिए एकत्रित होते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कथा में क्या होता है?"

"रामायण हम लोगों की धर्म पुस्तक है। इस कारण हम लोग उसको सुनने आते हैं। इसमें भगवान राम और रावण के युद्ध का वर्णन है।"

"तो आपके धर्म में युद्ध की स्वीकृति भी आती है?"

"हां, जब युद्ध धर्म की स्थापना के लिए किया जाय।"

"राम-रावण युद्ध से किसी प्रकार के धर्म की स्थापना हुई है क्या?"

"हां, भाभी! रावण एक दुष्ट आदमी था। वह अधर्माचरण कर रहा था। वह अति बलशाली भी था। तब परमात्मा ने राम के रूप में जन्म लेकर रावण और उसके साथियों का सर्वनाश कर दिया था।"

"मैं कथा सुनने जाऊं, ऊपर?"

"हां, जा सकती हैं। परन्तु आज कथा समाप्त हो गई है। अब कथा करने वाले को ताई भोजन करायेंगी, सुनने वाले तो जा रहे हैं।"

इस समय काहन की पत्नी सीता काहन के समीप आकर खड़ी हो गई। वह एक गोरी स्त्री को मोटर में बैठे और अपने पति को उससे बातें करते देख समझ गई कि वह गंगादेवी की पतोहू है। इस कारण उसने समीप आ हाथ जोड़ नमस्कार कर दिया। काहन ने उसका परिचय करा दिया। उसने कहा, "भाभी! यह मेरी धर्मपत्नी सीतादेवी है।"

लिल्ली ने हाथ जोड़ नमस्कार करते हुए पूछ लिया, "तो आपकी माता जी भी आई हैं?"

"हां, वे ऊपर ताई जी के पास हैं। वे आजकल यहीं रहती हैं। हम अब जा रहे हैं।"

"अब आप चाट बेचने हमारी तरफ नहीं आते?"

"मैंने खोंचा लगाना छोड़ दुकान कर ली है।"

"कहां?"

"अनारकली बाजार में गिरजाघर के सामने।"

"किस वस्तु की दुकान है?"

"यही चाट, मिठाई, कुल्फी आदि। बैठकर खाने का प्रबन्ध है।"

"अच्छा? स्थान साफ-सुथरा है या हिन्दुस्तानी रेस्तरां के समान गंदा?"

"भाभी! एक दिन वहां आइये और स्वयं ही देखिये। फिर बताइये कि उसमें अन्य क्या-क्या सुधार करने की आवश्यकता है।"

"अच्छा, किसी दिन डॉक्टर साहब के साथ आऊंगी।"

सीता ने पूछा, "बहिन जी! क्या आप ऊपर माता जी से मिलने के लिये नहीं जावेंगी?"

"मैं विचार कर रही हूं कि जाऊं या नहीं। आप लोग मेरा वहां जाना पसंद करेंगे अथवा नहीं, मैं समझ नहीं पाई?"

"नापसंद करने की तो कोई बात ही नहीं। पण्डित जी भोजन कर रहे हैं। वे भोजनालय में बैठे हैं, आप तो बैठक में ही जावेंगी।"

सीता के कथन से लिल्ली को आभास मिल गया कि भोजनालय में उससे परहेज किया जाता है। वह इसकी परीक्षा करना चाहती थी। इस कारण उसने मुस्कराते हुए पूछ लिया, "भोजनालय में क्यों नहीं?"

"पण्डित जी के साथ बैठकर तो कोई भी भोजन नहीं करता। आइये मैं आपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दिखाऊं किस प्रकार ताई जी और माता जी उनको भोजन खिला रही हैं।''

सीता ने काहन को कहा, ''आप दुकान पर चले जाइये, मैं स्वयं ही घर पहुंच जाऊंगी।''

मोटर से निकल कर लिल्ली सीता के साथ ऊपर की मंजिल पर जा पहुंची। कथा के लिये मकान का सब से बड़ा कमरा खोल दिया गया था। वहां दरी और उस पर सफेद चादरें बिछी थीं। एक दीवार के साथ ऊंची चौकी बनी थी और उसके आगे एक छोटी-सी चौकी पर एक बड़ी-सी पुस्तक रखी हुई थी। कथा के कमरे के सामने भोजनालय था। भोजनालय में भोजन बनकर तैयार था। पलथी मारे पण्डित जी लकड़ी के एक पटरे पर बैठे हुए थे और उनके सम्मुख लकड़ी एक ऊंची चौकी पर चांदी के थाल में रोटी परोसी हुई थी। पण्डितजी भोजन कर रहे थे और उनके सामने गंगादेवी रेशमी वस्त्रों में खड़ी थी। पण्डितजी को जिस वस्तु की आवश्यकता होती थी वह दे रही थी। कुछ अंतर पर यमुनादेवी बैठी थी। वह भोजन भण्डार था। पण्डित जी के लिये जिस वस्तु की आवश्यकता होती, गंगादेवी लेने के लिये आती और यमुनादेवी उसको दे देती।

सीता और लिल्ली भोजनालय के बाहर गई तो लिल्ली गंगादेवी को नमस्कार करने लगी। गंगा ने भीतर से ही हाथ जोड़, नमस्कार कर कहा, ''बहू! बैठक में बैठो, हम वहीं आकर भोजन करेंगे।''

लिल्ली समझ रही थी कि गंगादेवी का हम से अभिप्राय स्वयं से और यमुनादेवी से हो सकता है। सीता ने लिल्ली को समझाया कि जब तक पण्डित जी भोजन कर रहे हैं, कोई न तो भीतर से बाहर आ सकता है और न ही बाहर से भीतर जा सकता है।

''ऐसा क्यों?''

''खाना खाते समय आने-जाने से खाने में अशुद्धि आ जाने की आशंका रहती है।

''अशुद्धि?''

''हां, भीतर जाने वाले के कपड़ों के साथ। वह सामने मेरी माता जी बैठी हैं। उन्होंने ही भोजन बनाया है और वे प्रातः रसोई-घर में गई थीं और पण्डितजी के भोजन कर लेने के बाद ही अब वहां से बाहर आवेंगी।''

लिल्ली को सीता बैठक में ले गई। लिल्ली वहां पर भी जूते उतार कर ही जाया करती थी। उसको इस विषय में गंगादेवी ने समझा रखा था कि जूते से बाहर का कूड़ा-करकट भी कमरे में आ सकता है और चूंकि वे भूमि पर बैठकर पूजा और पाठ किया करती हैं, इस कारण वह स्थान अपवित्र नहीं होना चाहिये।

लिल्ली और सीता ने जूता उतारा और भीतर बैठक में जाकर बैठ गई। सीता कहने लगी, ''बहिनजी! ताईजी आपकी बहुत प्रशंसा किया करती हैं। आज आपके दर्शन कर चित्त प्रसन्न हुआ है।''

''आपके पति ने दुकान कर ली है, आज पहले से सुखी होंगे।''

''दुकान खोलते समय तीन हजार रुपये का फर्नीचर और क्राकरी हमने उसमें लगाई थी। डेढ़ सौ रुपये मासिक दुकान का किराया तथा तीन सौ रुपया मासिक के नौकर रखे हुए हैं। बहुत बड़ा खर्चा था और हमने अपनी सब पूंजी और आभूषण भी उसमें लगा दिये थे। पहले पांच महीने तो हानि होती रही। फिर हानि-लाभ बराबर-बराबर रहने लगा और अब एक वर्ष से बचत होने लगी है। दो मास से हम अनुभव करने लगे हैं कि हमको दो नौकर और रखने चाहिये। हमको पूर्ण आशा है कि इस वर्ष हम लाभ निकालेंगे।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"यह तो बहुत अच्छी बात है। मैं विचार किया करती थी कि काहन भैया-जैसा समझदार व्यक्ति खोंचा लगाये, यह लज्जा की बात है।"

सीता ने मुस्कराते हुए कहा, "हमको खोंचा लगाने में लज्जा नहीं लगती। हम तो उन्नति करना चाहते थे और खोंचे में उन्नति की सीमा पहुंच गई थी। इस कारण काम बढ़ाने के लिये दुकान करने का विचार किया। हमारे भाग्य से एक बड़ी-सी दुकान मिली तो हमने उसे लेकर ईश्वर के भरोसे काम आरम्भ कर दिया।"

"क्या अब भी चाट उतनी ही स्वादिष्ट होती है जितनी पहिले थी?"

"पहले से अच्छी ही होनी चाहिये। पहले भी वह सब मैं ही बनाती थी और अब भी मैं ही बनाती हूं।"

"ओह! तो तुम यह चाट और बताशे स्वयं बनाती हो?"

"स्वयं अकेली नहीं। आपके भैया भी साथ ही काम करते हैं। अब एक अन्य कारीगर भी रख लिया गया है, परन्तु सब-कुछ मेरी देख-रेख में होता है।"

इस प्रकार बातें हो रही थीं कि गंगा और यमुना अपने तथा लिल्ली के लिये भोजन सामग्री लेकर बैठक में आ गई। इस समय बारह बजे थे। लिल्ली ने बताया, डॉक्टर साहब एक बजे भोजन करते हैं और वह उस समय तक घर पहुंच जाना चाहती है।

"बहू! आज कैसे आ गई?"

"आपने बुलाया नहीं तो मैं स्वयं ही चली आई हूं।"

"मेरा विचार तुम सब लोगों को कथा के भोग वाले दिन बुलाने का है। उसके लिये निमंत्रण-पत्र छपने के लिए गए हैं।"

"उस दिन क्या होगा?"

"रामायण का पाठ सम्पूर्ण हो जावेगा और पण्डित जी पूर्ण पुस्तक का सारांश बतायेंगे। तदनन्तर सब समागतों को भोजन दिया जावेगा।"

"कितना खर्च हो जायेगा, माताजी! इस सब में?"

"एक सहस्र रुपये के लगभग हो ही जावेगा।"

"अच्छी बात है, अब तो निमंत्रण आवेगा तो आऊंगी।"

"निमंत्रण तो पहुंचेगा ही। मैंने वह काम सुदर्शनलाल जी को सौंपा हुआ है।"

"डॉक्टर साहब की बहिन नहीं आतीं क्या?"

"वह नित्य आती है। कथा आठ बजे आरम्भ होकर दस बजे समाप्त होती है। फिर एक घंटे तक कीर्तन होता है। तिलोत्तमा दस बजे चली जाती है।"

"क्या मैं भी कथा पर आ सकती हूं?"

"क्यों, आ क्यों नहीं सकतीं?"

"तो आपने बुलाया क्यों नहीं?"

"किसी को भी नहीं बुलाया। सुनने वाले स्वेच्छा से आते हैं। पण्डित जी रामद्वारे में कथा किया करते थे, इसलिये उनकी कथा के प्रेमी अपने आप आ रहे हैं। मैं तो अपनी सहेलियों और सम्बंधियों को अन्तिम दिन ही आमन्त्रित कर रही हूं।"

"मैंने तो समझा था कि मुझको म्लेच्छ समझकर नहीं बुलाया।"

"परन्तु बहू! तुम म्लेच्छ नहीं हो। मैंने पहले भी एक दिन बताया था कि तुम मेरे लड़के की बहू हो, इस कारण मेरे घर का एक अंश हो और मेरे घर में कोई म्लेच्छ रह ही नहीं सकता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पर माता जी! एक बात पूछूं, आप नाराज तो नहीं हो जावेंगी?"

"नहीं, नाराज नहीं हूंगी। तुम निःशंक होकर कहो।"

"आपके पुत्र आपसे घृणा क्यों करते हैं?"

"यह मेरे पूर्वजन्म के कर्मों का फल है। जब कोई बात ऐसी घटे जिसका कारण इस जन्म में पता न चले तो निश्चय ही उसे किन्हीं पिछले जन्म के कर्मों का फल मानना चाहिये।"

"तो यह साहब के किसी दोष के कारण नहीं है?"

"मैं समझती हूं कि बलराम में कुछ भी दोष नहीं है। यदि उसमें दोष होता तो मैं उससे घृणा करती। मुझे तो उससे घृणा होती नहीं। इससे वह तो ठीक ही है। दोष मुझमें है। इस जन्म के किसी कर्म के कारण तो है नहीं। वह अवश्य ही किसी पूर्व-जन्म का कर्मफल होगा।"

"परन्तु माताजी! उनका अकारण नाराज रहना क्या बुरी बात नहीं?"

"कारण-अकारण तो वह जाने। यदि उसके मस्तिष्क में कोई कारण है तो ठीक है। वह निर्दोष है। यदि बिना कारण से ही वह मुझसे नाराज है तो बहुत बुरा कर रहा है। परन्तु लिल्ली बेटा! मैं तो उससे नाराज नहीं हूं। उसको मैं अपना प्यारा बेटा ही समझती हूं।"

लिल्ली इस जीवन-मीमांसा को समझ नहीं सकी। कितनी ही देर तक बैठी वह इसका अर्थ समझती रही। इस समय गंगा और यमुना भोजन कर रही थीं। सीता जब वहां रह गई तो वह भी वहीं भोजन करने लग गई। लिल्ली गम्भीर विचारों में निमग्न उनके सामने बैठी रही। जब तीनों औरतें भोजन कर चुकीं तो लिल्ली उठी और हाथ जोड़कर बोली, "अब मैं चलती हूं। डॉक्टर साहब के भोजन का समय हो गया है।"

उठते हुए उसने सीता से पूछा, "आपको किस समय अवकाश रहता है?"

"मध्याह्न दो बजे से सायं पांच बजे तक।"

"तो कभी आ जाया करो।"

"भीम के पिता से पूछकर ही आ सकती हूं।"

"तो उनकी स्वीकृति के बिना तुम कहीं नहीं जातीं?"

"कभी ऐसा अवसर आया ही नहीं कि उन्होंने मुझे रोका हो। यदि वे मना करेंगे तो अवश्य उसका कोई कारण भी बता देंगे। हमारा विवाह हुए चौदह वर्ष हो गए हैं। परन्तु अभी तक ऐसा अवसर आया नहीं।"

: 8 :

उस दिन डॉक्टर बलराम और लिल्ली में पहला झगड़ा हुआ। खाने की मेज पर बैठे हुए बलराम ने पूछा, "लिल्ली, कहां गई थीं?"

"आपकी माताजी के घर पर।"

"क्या था वहां?"

"मैं गई तो थी अपने मन की उदासी मिटाने के लिये। परन्तु वहां जाने पर एक बहुत बड़ा समारोह देखा। मैंने मोटर मकान के नीचे खड़ी की कि बहुत-से स्त्री-पुरुष मकान से नीचे उतरते दिखाई दिये, काहन भी उनमें था। उससे विदित हुआ कि माता जी के घर में कथा हो रही है और लोग सुनने आते हैं। मैं आपकी माता जी से भी मिली हूं। आगामी रविवार के लिये आपको और मुझे भी निमंत्रण आने वाला है।"

"मैं तो नहीं जाऊंगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्यों, माता जी लंच देने वाली हैं।"

"मुझे उनका लंच खाने में रुचि नहीं है।"

"यही तो मैं पूछ रही हूं कि क्या कारण है इसमें?"

"उनके घर का भोजन मेरे अनुकूल नहीं रहता।"

"भोजन नहीं करेंगे, वैसे ही चलेंगे?"

"भोजन नहीं करेंगे, तो वैसे ही क्यों चलेंगे?"

"कथा का सारांश सुनने के लिये।"

"कथा का सारांश तो मुझे विदित है। एक राक्षस था रावण। उसके दस मुख थे और उसके दस सिरों के ऊपर एक गधे का सिर था।"

डॉक्टर यह कह ही रहा था कि लिल्ली हंसने लगी। डॉक्टर बोला, "आया है न मजा?"

"यह तो असम्भव है।"

"और एक था राजा दशरथ। उसकी तीन रानियां थीं। बड़ी रानी के पुत्र राम को राज्य मिलने लगा था तो सबसे छोटी रानी रूठ गई। उसको मनाने के लिए राजा ने उसको दो वर दिये। एक से राजगद्दी पर बैठने वाले पुत्र को चौदह साल के लिये घर से निकाल वनों में भेज दिया, और दूसरे वर से छोटी रानी के पुत्र को राजगद्दी दे दी।

"बोलो कैसी सुंदर कहानी है?"

"इसमें तो कोई सौन्दर्य नहीं है।"

"और फिर बड़ा लड़का था राम! वह वन में गया तो उसकी पत्नी सीता भी साथ चल पड़ी। राम का एक छोटा भाई लक्ष्मण भी साथ चला गया। परन्तु उसकी पत्नी उसके साथ नहीं गई। और दो भाइयों में एक स्त्री चौदह वर्ष तक रही।"

"यह तो बहुत भयंकर घटना है।"

"हां, एक बार रावण उस औरत को चुराकर ले गया और एक वर्ष के लगभग उसने उसे अपने घर में रखा। तब राम और रावण में युद्ध हुआ। रावण मारा गया और राम सीता को लेकर घर आ गया। छोटा भाई, जो राजगद्दी पर बैठा था, इतना बुद्धू निकला कि बड़े भाई के वापिस आने पर उसने उसको राज्य वापिस कर दिया।

"यह है कहानी, अब तुम सुनना चाहती हो तो सुनो।"

"ठीक है, मैं सुनने के लिए जाऊंगी और देखूंगी कि वे लोग क्या कहते हैं। परन्तु आपको कहानी से क्या। आपकी तो मां के घर जाने का निमंत्रण होगा।"

"उसकी ऐसी बातों से ही तो मुझे घृणा है।"

"पर देखिये जी! मेरी मां रोमन कैथोलिक है। मुझे उनकी हजरत ईसा की कुंवारी और उसके वर्जिन से पैदा होने की कथा स्वीकार नहीं है। परन्तु यह कोई कारण नहीं कि मैं मां से घृणा करूं। और वह जानती है कि मैं एग्नाटिस्क (नास्तिक) हूं। वह मुझसे घृणा नहीं करती।

"अभी पिछले सप्ताह ही उसका वात्सल्यता से परिपूर्ण पत्र आया है।"

"मैं ऐसा नहीं बना, जैसी तुम हो। मैं तो इस समय दिन चढ़ा हुआ समझता हूं और यदि मुझे कोई आकर कहे कि यह रात है, दिन नहीं, तो मैं उसको मूर्ख गंवार कहूंगा। मैं मूर्खों और गंवारों से सम्पर्क रखकर अपना जीवन बरबाद करना नहीं चाहता।"

"दिन और रात की बात यहां नहीं है। यह तो परमात्मा की कहानी है। न तो परमात्मा के अस्तित्व को कोई आस्तिक सिद्ध कर सकते हैं, न ही कोई नास्तिक उसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असत्य सिद्ध कर सकता है। ऐसी अवस्था में क्या यह ठीक नहीं कि दोनों पक्षों ही अपनी-अपनी ढफली बजायें और दोनों के घरों से दावत खाया करें।''

''नहीं, मेरा मन यह नहीं मान सकता।''

''मैं जाना चाहती हूं।''

''पहले ही तुम मेरा कौन-सा कहा हुआ मान रही हो। जब से वह काहन का बच्चा आकर मां की महिमा बता गया है, तुम मेरी मां पर लट्टू होने लगी हो।

''देखो, तुम मेरी बंदी नहीं हो। यदि जाना चाहती हो तो जा सकती हो, परन्तु मैं न तो अपना और न ही तुम्हारा, वहां जाना पसंद करता हूं।''

इस पर तो लिल्ली डॉक्टर का मुख देखती रह गई है। वह चाहती थी कि इस विषय पर किसी अन्य सुअवसर पर बात करनी चाहिये। अतः उसने बात बदलते हुए कहा, ''काहन ने तो अब अनारकली बाजार में दुकान खोल ली है।''

''किस चीज की?''

''यही चाट की। कहता था कि चाट के साथ मिठाई, चाय, लेमोनेड आदि भी रखता है।''

''ऐसा लगता है कि वह अब धनी हो रहा है।''

''एक दिन उसकी दुकान पर चलकर देखना चाहिये।''

''तुम्हें उसकी दुकान में रुचि क्यों है?''

''आपके बचपन के मित्र के नाते।''

''मेरे बचपन के मित्रों से तुम्हें क्या लेना-देना है?''

''उसकी चाट खाने को जी करता है।''

''किंतु, मेरा जी वैसी गंदी वस्तु खाने के लिये नहीं करता। पर तुम्हारी वर्तमान अवस्था में तो मैं तुम्हें उसकी दुकान पर जाने के लिये भी मना करता हूं।''

''तो यहां का मार्ग भी बंद?''

''हां।''

''काहन की पत्नी को जब मैंने यहां मुझसे मिलने के लिये आने का निमंत्रण दिया तो वह बोली कि अपने पति से पूछकर आयेगी।''

''मैंने उससे पूछा था कि वह सदा अपने पति से ही पूछकर काम किया करती है तो वह कहने लगी कि करती तो ऐसा ही है, परन्तु कभी ऐसा अवसर नहीं आया कि उसके पति ने कभी उसकी इच्छा का विरोध किया हो।''

''तो जाओ, तुम भी उसकी पत्नी बन जाओ। फिर तुम्हारी भी इच्छा का विरोध नहीं होगा।''

इस बात पर तो लिल्ली का पूर्ण शरीर क्रोध से कांपने लग। उसने खाना छोड़ दिया और चुपचाप बैठी आंसू बहाने लगी। इस पर डॉक्टर कहने लगा, ''क्यों क्या हुआ है? मैंने पीटा तो नहीं, फिर रो क्यों रही हो?''

''तुम बहुत निर्दयी हो? मुझे आज दुःख हो रहा है कि मैंने तुम्हारे साथ विवाह क्यों किया।''

''इसलिए किया था कि तुमको कोई युवक पालन-पोषण के लिये मिल नहीं रहा था और मैं तुमको मूर्ख नजर आया।''

इस पर तो लिल्ली मेज पर से उठ कर अपने कमरे में चली गई और वहां पलंग पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पड़कर चादर तान लेट रही। डॉक्टर बलराम को भी अपनी कठोरता का भास होने लगा था और वह समझने लगा था कि उसने सीमोल्लंघन कर दिया है। इस पर भी वह उसी समय खेद प्रकट करने के लिये नहीं आया।

रात के भोजन के समय बैरे ने आकर कहा, ''साहब खाने पर बुला रहे हैं।''

''मेरा खाना एक ट्रे में यहीं ले आओ।''

बैरे ने जाकर जब डॉक्टर को बताया तो उसने विन्सेंट से कहा, ''जाओ, अपनी मां को भोजन के लिये बुला लाओ।''

विन्सेंट जब उसे खाने के लिये कहने लगा तो लिल्ली ने कह दिया, ''मेरी तबीयत ठीक नहीं है, तुम लोग खाओ। मैं यहीं खाऊंगी।''

विवाह के बाद यह पहला दिन था, जब पति-पत्नी ने पृथक्-पृथक् भोजन किया था। विन्सेंट इस समय चौथी श्रेणी में पढ़ता था। वह समझ गया कि उसके माता-पिता में परस्पर अनबन हो गई है। इस कारण रात का भोजन कर, वह मां के कमरे में आकर पूछने लगा, ''मम्मी! तुम रूठी हुई हो?''

लिल्ली ने हंसकर कहा, ''हां।''

''किससे?''

''तुम्हारे डैडी से।''

''क्यों?''

''उन्होंने मुझे पीटा है।''

''बहुत ज्यादा पीटा है?''

''हां।''

''कहां पर?''

''मेरे मन पर।''

''हां।''

''दवाई लगा रही हो?''

''तुम्हारे डैडी ने दवाई दी ही नहीं।''

''मैं नुस्खा लिखाकर लाऊं?''

''हां जाओ। कहना कि मन पर इतनी अधिक चोट लगी है कि वहां बहुत सख्त पीड़ा हो रही है।''

विन्सेंट उसी क्षण पिता के शयनागार में चला गया। डॉक्टर रात के भोजन के बाद एक-दो पैग व्हिस्की लिया करता था। बोतल सामने रख, वह गिलास में डाल रहा था कि विन्सेंट वहां पहुंच गया। वह जानता था कि उसका पिता क्या पी रहा है। एक बार उसने भी अपने पिता से वह पीने के लिये मांगी थी। पिता ने कहा था कि जब वह बीस वर्ष का हो जावेगा, तब मद्य पी सकेगा। इस कारण वह अब नहीं मांगता था। उसने जाते ही कहा, ''डैडी! तुमने मम्मी को पीटा है?''

''नहीं तो।''

''वह कहती है कि आपने उसको पीटा है। और उसके मन को बहुत पीड़ा हो रही है।''

''तो उसके लिए दवाई ले जाओ।''

''क्या?''

डॉक्टर ने एक गिलास में एक पैग मद्य डालकर दे दी। साथ ही कहा, ''उससे कहना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि इसे पीकर सो जाये । प्रातःकाल तक ठीक हो जावेगी ।''

विन्सेंट शराब का गिलास लेकर मम्मी के कमरे में जाकर कहने लगा, ''डैडी ने कहा है कि यह मन की पीड़ा की दवा है, इसे पी लो ।''

लिल्ली ने देखा और समझ गई कि वह क्या है । उसने गिलास लेकर पलंग के समीप रखी तिपाई पर रख लिया और लड़के से कहा, ''अब तुम जाकर सो जाओ, मैं भी सोऊंगी ।''

विन्सेंट गया तो लिल्ली ने शराब का गिलास स्नानागार की नाली में बहा दिया ।

रात लेटे-लेटे लिल्ली के मन में विद्रोह की भावनायें उठती रहीं । वह विचार कर रही थी, वह अपने पति से अब पृथक् होकर रहेगी । उससे खर्चा मांगेगी और अपनी सास के घर जाकर रहने लगेगी । यदि हो सका तो विलायत वापिस लौट जायेगी और वहां एक विधवा के रूप में जीवन व्यतीत करेगी ।

इन विचारों की उथल-पुथल में उसको प्रातः चार बजे नींद आई और फिर चित्त स्थिर हो जाने के कारण वह बहुत देर तक सोती रही । अल्पाहार करते समय, जब बैरे ने डॉक्टर को बताया कि मेम साहब का द्वार अभी नहीं खुला, तो उसके मन में भय समा गया । वह विचार करता था कि कहीं आत्म-हत्या न कर ली हो । वह मेज पर से उठा और लिल्ली के शयनागार का दरवाजा खटखटाने लगा ।

लिल्ली ने भीतर से पूछा, ''कौन ?''

''मैं डॉक्टर ।''

''क्यों, क्या बात है ?'' यह कहते हुए उसने द्वार खोल दिया ।

''क्यों, अभी तक सोई हुई ही हो ?''

''रात सो नहीं पाई थी, इस कारण अब सो रही थी ।''

''और यह रात दिन और दिन रात, क्यों कर रही हो ?''

''एक मूर्ख और गंवार भला कर भी क्या सकती है ?''

बलराम हंस पड़ा । लिल्ली ने कहा, ''यदि आप मुझे मेरे हाल पर छोड़ दें तो मैं अभी एक-डेढ़ घण्टा और सोना चाहती हूं ।''

''मेरी राय मानो, खा-पीकर सो जाना ।''

''परन्तु स्नान इत्यादि तो करना होगा ।''

विवश डॉक्टर ने उसके लेटे-लेटे ही कह दिया, ''लिल्ली ! रात के मेरे कटु वाक्यों के लिये मुझे क्षमा कर दो ।''

''इससे मुझ पर लगे प्रतिबंध उठ जावेंगे क्या ?''

''हां ।''

''तो आज आप हमको लेकर काहन की दुकान पर चाट खाने के लिये ले जावेंगे ?''

''हां ।''

''मां का निमंत्रण स्वीकार करेंगे न ?''

''तुम चाहो तो स्वीकार कर लेना ।''

इस प्रकार सुलह तो हो गई, परन्तु समस्या नहीं सुलझी । लिल्ली अभी भी नहीं समझ पाई कि मां और पुत्र में किस बात पर झगड़ा है ।''

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय परिच्छेद

काहन के घर में सीता आई तो वह उन्नति के पथ पर आरूढ़ हो गया। सीता के पिता का देहान्त तो उसके बचपन में ही हो गया था। सीता का पिता रतनचन्द म्युनिसिपल कमेटी में मुहर्रिर का कार्य करता था। उसका वेतन बीस रुपया था। घर पर तीन लड़कियां थीं। सबसे बड़ी सीता ही थी। उससे छोटी राधा और सबसे छोटी द्रौपदी। जिस समय रतनचन्द का देहावसान हुआ, सीता की आयु उस समय सात वर्ष की थी। इस प्रकार उसकी मां रमा, संसार में निस्सहाय रह गई। घर में कुछ जमा भी नहीं था। बीस रुपये में कठिनाई से निर्वाह ही होता था। रमा ने पड़ोसियों के घर में चौका-बासन कर, निर्वाह करना आरम्भ किया। इस पर भी सीता, जो पिता के देहान्त के समय दूसरी श्रेणी में पढ़ती थी, पढ़ती रही। समय पा, तीनों लड़कियां स्कूल में पढ़ने लगीं। मां भी अपने कर्तव्य का पालन कर रही थी। वह चार-पांच घरों में काम करती थी और इस प्रकार भोजन, वस्त्र तथा लड़कियों की पढ़ाई चला रही थी।

नित्य नदी पर स्नान करने जाने वालों में रमा भी थी। वह काहन की मां यमुना की सहेली थी। जब सीता ग्यारह वर्ष की हुई, तो उसकी मां को उसके विवाह की चिंता लगने लगी। उन दिनों काहन, हलवाई की दुकान पर, अपने पिता के साथ काम करता था। पिता को एक रुपया नित्य मिलता था और काहन को छः आने। रमा को काहन अच्छा लड़का प्रतीत हुआ। उसने यमुना से बात कर दी। यमुना को रमा की लड़की सीता का रिश्ता तो 'अंधे को दो आंखों' के वरदान जैसा लगा। उसने कहा, ''रमा बहिन! मकान तो अपना है, परन्तु बाप-बेटे की कमाई इतनी कम है कि खा-पीकर कुछ बचता नहीं।''

रमा का दृष्टिकोण दूसरा था। उसने कहा, ''सीता मेरा खर्चा चलाने में मेरी सहायता करती है। जब तुम्हारे घर में जावेगी तो वहां भी अपने निर्वाह योग्य पैदा कर ही लेगी। शेष सब प्राणी अपना भाग्य साथ लेकर आते हैं।

''आप यह रिश्ता स्वीकार कर लें तो मेरे सिर का बोझ हलका हो जाय। वह अब सयानी होने लगी है, इसलिये मुझे उसकी चिंता सता रही है।''

यमुना ने स्वीकार किया तो शेष प्रबन्ध भी हो गया। एक दिन यमुना और धनपत के कुछ सम्बंधी एकत्रित हो, रमा के घर गये और गुड़ से मुख मीठा कर, लड़की को विवाह लाये। काहन अब पति बन गया।

सीता ने देखा कि यह घर तो मां के घर से भी गंदा है। उसने घर में आते ही अपनी बाल-बुद्धि से घर की सफाई करनी आरम्भ कर दी। अब गोबर की पुताई के साथ-साथ नित्य कपड़ों को धोने का भी नियम बन गया। धनपत और काहन, पहले से अधिक साफ-सुथरे रहने लगे तो उनमें आत्म-सम्मान बढ़ने लगा। साथ ही वे सीता का मूल्य भी समझने लग गये।

सीता ने काहन को समझाना आरम्भ कर दिया कि कमाई बढ़ाने का यत्न करना चाहिये। इसके लिये विचार होने लगा। निर्णय चाट और पानी के बताशों का हुआ। सीता समझती थी कि अभ्यास से काम आता है। बुद्धि सत्संग से बढ़ती है। उसने अपने पति को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कहा कि इस काम का ज्ञान प्राप्त कर, उसका अभ्यास करना चाहिये। बाप-बेटे ने राय की, दूसरों से बात की और फिर अभ्यास करने लगे। इसी बीच, एक दुर्घटना हो गई। धनपत को एक दिन पेट में शूल उठा और उपयुक्त चिकित्सा के अभाव में दूसरे दिन उसका देहान्त हो गया। अब तो पुत्र के लिये यह और भी आवश्यक हो गया कि वह अपनी आय में वृद्धि करे। अतः मां, पुत्र और पुत्र-वधू दिमाग लड़ा बताशे बनाने, भल्ले और पकौड़ी बनाने, उसके लिये सौंठ बनाने तथा दही का मट्ठा बनाने का अभ्यास करने लगे। पिता की तेरहवीं के बाद ही काहन ने हलवाई की दुकान छोड़ी और चाट का खौंचा लगा, गली के बाहर बैठने लगा। काम चल निकला और उसमें भी धीरे-धीरे सफाई और चाट में बढ़ियापन उत्पन्न किया जाने लगा।

सीता नित्य यह देखती थी कि उसके पति के कपड़े, बेचने का सामान और खौंचे के बर्तन, साफ और चमचमाते हों। यह प्रवृत्ति अपने पति के घर की गन्दगी और मैलेपन की प्रतिक्रिया-मात्र थी।

इस उज्ज्वलता का ही परिणाम था कि पहले दिन से ही खौंचे पर भीड़ लगने लगी। इस काम में उत्तरोत्तर उन्नति होती गई। परन्तु एक समय आया कि उन्नति अवरुद्ध हो गई। काहन और सीता का विचार था कि खौंचे के काम की यह चरम सीमा है। इसलिये सीता का कहना था कि अब दुकान कर लेनी चाहिये।

इस समय तक उन दोनों के विवाह को बारह वर्ष हो चुके थे और उनके घर में तीन बच्चे हो चुके थे। दो लड़के और एक लड़की। काहन का अपने बचपन के साथी डॉक्टर बलराम से इस समय तक पुनः परिचय और वैमनस्य भी हो चुका था।

सीता ने प्रस्ताव किया तो काहन ने स्वीकार कर लिया। उस समय उसके पास तीन सहस्र रुपये के लगभग जमा हो चुका था। मां ने आशीर्वाद दिया तो काहन दुकान ढूंढने लगा। परमात्मा ने सहायता की और एक बड़ी-सी दुकान अनारकली के नाके पर डेढ़ सौ रुपया मासिक पर मिल गई। दुकान का छः मास का किराया और फर्नीचर तथा बर्तन इत्यादि बनवाने में ढाई हजार लग गया। दुकान पर चाट, मिठाई, पूरी, लस्सी, शर्बत, चाय इत्यादि का प्रबन्ध होने लगा। चाट तो घर से बनकर जाती थी। मिठाई इत्यादि दुकान के पिछले भाग में बनती थी। बीस ग्राहकों के बैठकर खाने का प्रबन्ध था।

प्रथम छः मास में दो मास तो सामान फिट कराते-कराते लग गये। और फिर चार मास तक बिक्री न होने से घाटे पर काम चलता रहा। सीता अपने पति को समझाती रहती थी कि सामान बढ़िया ही बनाना चाहिये। भले ही वह न बिके और दरवाजे के बाहर बाग में बैठे भिखारियों में बांटना पड़े। दूसरी बात जिस पर सीता का आग्रह था, दुकान की और दुकान पर काम करने वालों की स्वच्छता।

शनैः-शनैः दोनों बातों का प्रभाव हुआ। ग्राहक आने लगे और सन्तुष्ट होकर जाने लगे। सातवें मास में खर्चा निकला तो सीता के प्रसन्नता के आंसू टपक पड़े। मां को भी इस समाचार से प्रसन्नता हुई। उसने नगर-भर के भिखारियों को एक दिन खाना खिलाकर परमात्मा के प्रति अपने मन की कृतज्ञता प्रकट कर दी।

जिस दिन काहन लिल्ली को गंगादेवी के मकान के नीचे मिला था, उसने लिल्ली को अपनी दुकान करने की बात बताई थी। उस समय उसको दुकान करते हुए एक वर्ष से अधिक हो गया था। दुकान खूब चलने लगी थी।

उसी दिन जब लिल्ली और डॉक्टर में झगड़ा हो सुलह हुई, डॉक्टर तीन बजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्याह्नोत्तर लिल्ली और बच्चों को लेकर काहन की दुकान पर जा पहुंचा। मोटर दुकान पर रुकी, तो काहन ने देख लिया। वह पहचान कर दुकान से नीचे उतर आया और उसने हाथ जोड़ उन दोनों का अभिवादन किया। कहने लगा, ''आओ भैया! आज तो बड़ी कृपा की जो इस दुकान को पवित्र करने के लिये चले आये।''

दुकान के द्वार बंद थे। भीतर जाने का मार्ग भी स्प्रिंगदार पल्लों का बना था, भीतर सफाई और शांति थी। अभी ग्राहकों की भीड़-भाड़ का समय नहीं हुआ था। इस पर भी कुछ ग्राहक तो अंदर बैठे ही थे। एक बड़ी-सी मेज पर ले जाकर काहन ने उनको बैठने के लिए कहा। उन सबके बैठने पर काहन ने पूछा, ''हां, तो भैया! क्या खिलाऊं?''

बलराम मुस्कराकर बोला, ''सामने खोंचा तो है नहीं कि जिसे देखकर बता सकूं कि यह खिलाओ।''

''तो भैया आज मेरे कहे पर खाओ।''

''ठीक है, देखें तुम्हारा चुनाव कैसा रहता है।''

खिलाने के लिए एक लड़का रखा हुआ था। काहन ने उसको बुलाकर समझा दिया।

पहले रसमलाई। फिर बंगाली चमचम आया। फिर पानी के बताशे और अंत में कुल्फी। कुल्फी के बाद जलजीरा। इतना होने के बाद उसने कहा, ''अब इनमें से जो आपको सबसे अधिक पसंद आया हो, वह फिर आ सकता है।''

''बस, अब तो पेट भर गया है।'' लिल्ली ने बताया। बच्चे तो पहले ही बस कर चुके थे।

जब किसी ने कुछ लेने की इच्छा व्यक्त नहीं की तो बलराम ने पूछा, ''बिल?''

''भैया! मैं अगली बार ले लूंगा। इस बार इस गरीब दोस्त की तुच्छ भेंट समझ लो।''

बलराम ने प्रश्नमय दृष्टि से लिल्ली की ओर देखा तो वह कहने लगी, ''मित्र-मित्र आपस में निर्णय कर लें, मैं इसमें कुछ नहीं कहूंगी।''

''मैं तो यह पूछ रहा हूं कि यह भेंट तुम्हें स्वीकार है?''

''यह भेंट मुझे नहीं, यह तो एक गरीब मित्र की धनी मित्र को भेंट है।''

''हां, भैया!'' काहन ने बीच में कह दिया। ''भाभी की सेवा करने के तो मैं योग्य हूं नहीं। यह तो अपने बचपन के सम्बन्धों के निमित्त ही है।''

लिल्ली उठ खड़ी हुई। उसने काहन से कहा, ''भैया! माताजी का रविवार के लिए भोजन का निमन्त्रण आया है। क्या वह भोजन भी इतना ही स्वादिष्ट होगा?''

''वहां का प्रबन्ध सीता के हाथ में है, देखें किस प्रकार का प्रबन्ध करती है।''

जब वे दुकान से निकल रहे थे, तो काहन ने बलराम से पूछ लिया, ''डॉक्टर, भैया! आओगे न?''

''आशा तो नहीं है। आगे देखें क्या होता है।''

''नहीं भैया! जरूर आना, नहीं तो माताजी का दिल टूट जावेगा।''

''मैं यही विस्मय कर रहा हूं कि उसके पास इतना रुपया आया कहां से!''

''वह तो कहती हैं कि तुमने दिया है और संगति में तुम्हारा ही नाम हो रहा है।''

''यह तो धोखा है।''

''कैसे?''

''मेरा नाम लेकर वह अपने परमात्मा को धोखा दे रही है। मैं इस सब का अच्छा अथवा बुरा जो भी फल होगा, लेने के लिए तैयार नहीं। इससे स्वर्ग अथवा नरक जो मिलने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वाला है, वह उन्हीं को मिलना चाहिये।''

काहन मुख देखता रह गया। डॉक्टर अपने परिवार के साथ मोटर में सवार हो, कोठी को चल दिया। मार्ग में लिल्ली ने काहन की मिठाई और चाट की प्रशंसा की, तो डॉक्टर ने कह दिया, ''मुझे तो काहन कुछ फ्लर्ट-सा प्रतीत होता है?''

''आज तक तो स्त्रियों को ही फ्लर्ट करते सुना था, अब आपके मुख से पुरुषों को भी सुन लिया है?''

''वह तुमको प्रसन्न करना चाहता है।''

''मुझे तो ऐसी कोई बात प्रतीत नहीं हुई।''

''हुई भी होगी तो तुम बताओगी ही क्यों?''

''आज फिर लड़ने का विचार है क्या? उस दिन भी आपने ऐसी ही बात की थी। मैं इसको बिल्कुल पसंद नहीं करती।''

''देखो लिल्ली! मनोविज्ञान यह कहता है कि जिस वस्तु को मनुष्य जितने बल से अस्वीकार करे, समझना चाहिये कि उतनी ही व्यग्रता से वह उस वस्तु की अच्छा करता है। जितने आग्रह से तुम काहन के प्रति अपने अनुराग को अस्वीकार करती हो, इस विज्ञान के अनुसार मैं समझता हूं कि उतनी ही व्यग्रता से तुम उसके अनुराग में फंसी हुई हो।''

इस लांछन पर लिल्ली अवाक् बैठी रही। फिर कुछ विचार कर बोली, ''मैं तो समझती हूं कि उक्त सिद्धान्त को स्थिर करने वाला या तो मनोविज्ञान से सर्वथा अनभिज्ञ है, अथवा आप उसका आशय ठीक प्रकार से नहीं समझ पाये हैं। मेरा काहन के प्रति किसी प्रकार का अनुराग नहीं है। मैं देखती हूं कि यह कितना पुरुषार्थी और बुद्धिशील व्यक्ति है कि एक मैले-कुचैले हलवाई की नौकरी से दुकानदार और रईस बन गया है। मैं केवल उसकी इस प्रतिभा और परिश्रम की प्रशंसिका हूं। मन में उसके शरीर का कोई आकर्षण नहीं है। उसकी बुद्धि, उत्साह और परिश्रम की मैं सराहना करती हूं।''

''सब लोग अपने मन की दुर्बलताओं को छिपाने के लिये कुछ इसी प्रकार की बातें कहा करते हैं। मैं एक विख्यात साईकोलोजिस्ट की बात को असत्य नहीं मान सकता।''

''तो क्या मैं यह समझूं कि आप अपनी माता से उत्कट प्रेम करते हैं? उनसे घृणा तो आपके आन्तरिक मन की अवस्था को छिपाने के लिये ही है?''

''हां, परन्तु यह इस प्रकार है कि मेरा अपनी मां के प्रति इतना अधिक प्रेम है कि उसकी बेहूदा बातों पर मुझे उसपर अत्यंत क्रोध आ जाता है। संसार में अनेकों और हैं जो यह पूजा-पाठ, कीर्तन, जप-तप तथा दान-दक्षिणा करते और देते हैं। मैं उनके विषय में कभी चिंता नहीं करता। परन्तु जब यही बात अपनी माता जी को करते देखता हूं, तो मैं क्रोध से भर जाता हूं।''

''परन्तु क्या इस मतभेद को मिटाने का यही उपाय है, जो आप कर रहे हैं?''

''मैं इस उपाय को प्रोटेस्ट कहता हूं।''

: 2 :

लिल्ली को अपने पति की बात से संतोष नहीं हुआ। अपितु उसके अपने व्यवहार पर डॉक्टर द्वारा संदेह व्यक्त किये जाने पर तो उसका मन पुनः उद्विग्न हो उठा। अपने पति के प्रति वह अब अरुचि अनुभव करने लगी थी। वह विचार करती थी कि उसका पति व्यर्थ में और अकारण ही उसके चरित्र पर संशय करने लगा है।

रविवार में अभी दो दिन शेष थे। और दो दिन वह मन में यह निर्णय करती रही कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वह अपनी सास के निमंत्रण को स्वीकार करे अथवा न करे। वह विचार करती थी कि वहां काहन और सीता भी आवेंगे। उसका पति मन में समझेगा कि वह उनसे मिलने ही गई है।

अपने पति के मन की अवस्था को समझ, वह विचार करती थी कि वह भी अपनी सास के घर पर न जाये। यह लगभग निश्चय ही था कि उसका पति वहां नहीं जा रहा। फिर वह यह भी सोचती थी कि वह सर्वथा निर्दोष है। उसके मन में कुछ भी मैल नहीं। ऐसा है तो फिर वह अपने पर असत्य लांछन से भयभीत, यदि वहां नहीं जाती, तो अपने मन के दूषण का इससे वह प्रमाण दे ही देगी। इतना विचार कर, वह पुनः विद्रोह करने का विचार करने लगी।

वह दो दिन में भी निर्णय नहीं कर सकी। रविवार प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होने के समय तक भी वह किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सकी थी। अनिश्चित मन, वह प्रातः का अल्पाहार करने के लिये खाने के कमरे में गई तो डॉक्टर ने ही पूछ लिया, "तो तुम जा रही हो?"

"कहां?"

उसने यह प्रश्न केवल इसलिये पूछा था कि वह अपने मस्तिष्क में उठने वाले विद्रोह को अपने से भी छिपाने का यत्न कर रही थी।

"अपनी सास के निमंत्रण पर, खाना खाने।"

"आप चल रहे हैं या नहीं?"

"मैं तो नहीं जा रहा।"

"तो मैं भी नहीं जा रही। मैं अपनी सास नहीं, आपकी माता जी के निमंत्रण का तिरस्कार करना नहीं चाहती थी। जब आपके मन में उनके लिये कोई स्नेह-भाव नहीं, तो मैं तो आपके साथ हूं।"

डॉक्टर बलराम भौंचक्का हो, उसका मुख देखता रह गया। वह उससे विद्रोह की आशा कर रहा था। इस अकस्मात् उत्पन्न हुई अनुकूलता ने उसको आश्चर्य और संशय में डाल दिया। उसको दो दिन पहले की बात स्मरण थी। उसने लिल्ली पर लांछन लगाया था कि उसके मन में काहन के लिये प्रेम अंकुरित हो रहा है। इस लांछन से वह डर गई क्या? उसके डरने में कारण है क्या? अर्थात् लांछन में सच्चाई है क्या?

इन प्रश्नों के मन में उठने पर उसके मन में इनके उत्तर भी उठने लगे। उसके मन में यह आया कि लांछन निर्मूल हों तो डरने का कोई कारण नहीं था। अभिप्राय यह कि लांछन में सच्चाई है। भले ही यह सब-कुछ अभी तक उसके अचेतन मन में ही हो।

इस प्रकार मन में युक्ति-प्रतियुक्ति कर, वह और भी अधिक सतर्क रहने का निश्चय कर बैठा। उसने ऊपर से लिल्ली के निर्णय पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "खैर, तुम को समय पर ज्ञान हो गया है। कहते हैं कि दिन-भर का भूला हुआ रात को भी घर आ जाय, तो उसको भूला नहीं मानना चाहिये।

"मैं चाहता हूं कि काहन की दुकान पर भी कभी नहीं जाना चाहिये।"

"मैंने निर्णय कर लिया है कि मैं वही करूंगी, जो आप करने के लिये कहेंगे। विशेष रूप में आपके सम्बन्धियों तथा मित्रों के विषय में आपकी इच्छा माननीय होगी।"

"बहुत ठीक है। अच्छा लिल्ली! आज तुम्हारे इस निर्णय की खुशी में हम सब शालीमार गार्डन में चलेंगे। वहां फैमिली-पिकनिक होगी।"

लिल्ली को इस प्रस्ताव पर किसी प्रकार की प्रसन्नता नहीं हुई। उसने अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
विवशता प्रकट करते हुए कह दिया, "आप जिससे प्रसन्न होंगे, उसी में मुझे प्रसन्नता होगी।"

रविवार के दिन डॉक्टर का क्लिनिक बंद रहता था। कभी कोई एमरजैंसी केस आ जाता तो डॉक्टर ले लेता था। आज अभी तक ऐसे किसी केस की सूचना नहीं थी। इससे मध्याह्न का भोजन कर और कुछ विश्राम कर वे सायंकाल की चाय का सामान ले, बच्चों के साथ शालीमार बाग जा पहुंचे।

इस पिकनिक में लिल्ली चुपचाप वैसा ही करती रही, जैसा उसका पति उसको करने के लिये कहता रहा। बलराम को लिल्ली में यह सब-कुछ अस्वाभाविक ही लग रहा था। परन्तु उसको उसके इस अस्वाभाविक व्यवहार पर नाराज होने का भी तो कोई कारण दिखाई नहीं देता था।

तीन घंटे-भर वह अपने पति की इच्छा का पालन कर, उसके साथ ही घर लौट आई। आज के पिकनिक में बलराम को भी कुछ विशेष आनन्द नहीं आया। जैसा अन्य पिकनिक के अवसरों पर हुआ करता था, वैसा इस बार कुछ भी नहीं हो पाया।

लिल्ली के पूर्व व्यवहार को ध्यान में रखकर उसकी सास और यमुना अनुमान लगा रही थीं कि लिल्ली तो अवश्य ही आवेगी और सम्भव है वह बलराम को भी साथ ले आवे।

जब सब भोजन कर चुके तो गंगा को चिंता होने लगी। उसको यह ज्ञात था कि लिल्ली गर्भवती है। अतः सर्वप्रथम उसके रुग्ण होने के विषय में विचार आया, परन्तु इसका भय होते हुए भी मन में यह टिका नहीं। रह-रहकर यही बात उसके मन में आती थी कि पति-पत्नी में झगड़ा हुआ होगा और पत्नी को पति की आज्ञा का पालन करने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं रहा होगा।

इस विचार के आते ही वह पुत्र से ममतावश इच्छा करने लगी कि वास्तविक बात जाने। सभी अभ्यागत विदा हो चुके थे। केवल यमुना, सीता और उसकी मां वहां पर थे।

गंगा भोजन के बाद विश्राम करने लगी तो एकाएक उसके मुख से एक दीर्घ निःश्वास निकल गया। उसने कहा, "भगवान जाने, यह औरत का दोष है अथवा पति का?"

सीता की सहानुभूति लिल्ली के साथ थी। उसने कह दिया, "ताई! क्या तुम को अभी भी लिल्ली पर संदेह है?"

"मुझको विदित है कि औरत जैसा चाहे, पति से करवा सकती है। मैंने अपने जीवन-काल में ऐसा कराया है। बलराम के पिता निपट नास्तिक थे। परन्तु मैं उनसे धर्म-कर्म, साधु-संत की सेवा और दान-दक्षिणा करवाती रहती थी। मैंने अपने विचार से उनको कभी किसी बुरे कर्म के लिये नहीं कहा। इस पर भी वे मेरे इस प्रकार के कार्यों को व्यर्थ का धन-व्यय मानते रहे हैं।"

"बलराम पिता की प्रतिलिपि है। उसको मेरे समान निष्ठावान पत्नी नहीं मिली। तभी वह सीधे मार्ग पर आ नहीं सका।"

"मैं तो ऐसा समझती हूं, ताई! यहां परदेश में पड़ी हुई अपने सम्बन्धियों और समाज से दूर होने के कारण, लिल्ली अपने को निस्सहाय पाती है। और वह पति द्वारा त्याग दिये जाने के भय से उसके अधीन रहने में ही कल्याण मानती है।"

"पिछली बार जब वह आई थी तो ऐसा प्रतीत हुआ था कि उसने पति को यहां आने के लिये राजी कर लिया था और काहन के कहने पर उसकी दुकान पर आये थे। उस समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तो मेरी समझ में यही आया था कि दोनों में समझौता हो रहा है। मैं कुछ इस प्रकार समझ रही हूं कि वह बलराम से किसी बात के लिये हठ कर रही थी और मेरे साथ सम्पर्क, उस हठ को मनवाने के लिये ही किया गया था। आज उसका हठ स्वीकार हो गया और वह बलराम के अनुकूल हो गई है।''

''ताई! बात तो वही हुई कि प्रथम दोषी भैया ही हैं। वे आपसे सम्बंध रखना नहीं चाहते। उनकी इस दुर्बलता से लाभ उठाकर, लिल्ली कोई लाभ उठा रही है। यह कोई विशेष अपराध नहीं। सब औरतें ऐसा ही करती हैं। आपका ताया जी से धर्म-कर्म करवा सकना भी तो उनकी किसी दुर्बलता का लाभ उठाने से ही सम्भव हुआ होगा।''

गंगा गम्भीर हो, विचार करने लगी। उसको अपनी लिल्ली की विपरीत युक्ति गलत प्रतीत हुई। साथ ही उसको अपने पति से धर्म-कर्म के कार्य करवाने की श्रेष्ठता पर भी सन्देह होने लगा था। वह जानती थी कि उसका पति उसके रूप-लावण्य पर अति मुग्ध था और पति के अपने प्रति मोह के अधीन ही वह उससे सब कार्य करवाती थी, जिनको वह उचित समझती थी।

अब सीता के कहने पर उसकी समझ में ऐसा आया कि उसके पति में दुर्बलता थी और वह उस दुर्बलता का लाभ उठा, यह कार्य करवा रही थी। यह दुर्बलता से लाभ उठाना तो अनुचित था। भले ही उससे कोई बुरा काम नहीं कराया। सीता का अनुमान था कि लिल्ली भी अपने आकर्षण से कुछ वैसा ही करवा रही है।

इस पर गंगा की सहानुभूति, अपने पुत्र के साथ और भी बढ़ गई। वहां वह अपने पुत्र की दयनीय दशा पर चिन्तन करने लगी।

सीता ने ताई को चुप विचार-मग्न देखा तो अपनी बात को और स्पष्ट कर दिया, ''मैं इसमें औरत का दोष नहीं मानती। परमात्मा ने औरत को ऐसा ही बनाया है। वह अपने स्त्री-सुलभ गुणों से अपने पति पर शासन करती है। यह शासन करना पाप नहीं। जिनको भगवान ने शासन की सामर्थ्य दी है, उनको करना ही चाहिए। दोष तब हो जाता है, जब शासक अपने शासन से कोई अनुचित कार्य कराना आरंभ कर दे।''

''मुझको तो आप में कोई दोष प्रतीत नहीं हुआ। कारण यह कि आपने अपनी सामर्थ्य का दुरुपयोग नहीं किया। न ही उससे अपना किसी प्रकार का स्वार्थ सिद्ध किया है।

''परन्तु, लिल्ली की बात इससे उलटी प्रतीत होती है। वह विदेश में और अपने समाज से पृथक हो जाने के कारण दुर्बल है और भैया उसकी दुर्बलता का लाभ उठा, उससे उसकी इच्छा के विपरीत कार्य करवा रहे हैं। यह विपरीत कार्य यदि स्वार्थ से रिक्त हो, तो कुछ बात नहीं। मुझको तो इसमें भैया का कुछ स्वार्थ समझ में आया नहीं। हां मूर्खता जरूर प्रतीत होती है।''

''मूर्खता कैसी?''

''मां से झगड़ा करना तो किसी अन्य श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। आप अपने पुत्र से क्या चाहती हैं? जहां तक मैं जानती हूं, आप कुछ भी अनुचित कार्य कराना नहीं चाहतीं। इस पर भी वह आपसे मिलना तक पसंद नहीं करता। इसको मैं मूर्खता ही मानती हूं।''

सीता की बात से गंगा का मन बुझ-सा गया। जब से बलराम भारत में लौटा था, वह उसकी अपने प्रति तटस्थता का दोष, लिल्ली पर लगाती थी। बाद में जब लिल्ली उससे मिलने लगी तो उसको लिल्ली के व्यवहार में कूटनीतिज्ञता ही प्रतीत हुई थी। धीरे-धीरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके मन से लिल्ली के प्रति सन्देह मिटते जाते थे। परन्तु उस दिन की घटना से वह पुनः लिल्ली को ही दोषी मानने लगी थी। पहले तो सीता के कथन में उसको अपनी बात का समर्थन प्रतीत हुआ था, परंतु बाद में सीता ने बात इस प्रकार बदली कि वह पुनः निराश हो गई।

उसी सायंकाल जब शेष अभ्यागत अर्थात् सीता, यमुना, रमा और सीता के बच्चे भी चले गये तो गंगा अत्यंत उदास मन बैठी रही। उसकी ऐसी अवस्था सदा ही रहती थी। परन्तु एकान्त में वह पुत्र से स्नेह में डूब जाया करती थी। और इस स्नेह के पात्र को समीप न पा, जीवन की नीरसता का अनुभव किया करती थी। आज यह नीरसता अति उग्र हो गई थी।

एक बार पहले भी ऐसा अनुभव कर, वह अनामन्त्रित, पुत्र से मिलने चल पड़ी थी। और वहां से पुत्र का तिरस्कार पाकर ही लौटी थी। आज भी वह कुछ ऐसा ही अनुभव करने लगी थी। ममता के अधीन वह उस तिरस्कार को भूल गई, जो उसका पहले पुत्र की कोठी पर जाने पर हुआ था। अतः मन के आवेश में वह उठी, वस्त्र बदले, तांगा कर, निस्बत रोड वाली कोठी पर जा पहुंची।

: 3 :

बलराम अपनी पत्नी और बच्चों को शालीमार गार्डन से लेकर लौटा ही था कि मां आ पहुंची। उस समय बलराम आदि अपने ड्राइंग-रूम में बैठे थे।

बलराम मां को इस प्रकार उनके सामने आकर खड़ी होते देख, आश्चर्य में खड़ा हो पूछने लगा, "मां! तुम यहां? भला किललिये आई हो?"

"अपने पुत्र और पौत्रों से मिलने।"

"पोते-पोतियों से भला तुम्हारा क्या सम्बंध है?"

"बलराम! मैं तुम्हारी-जितनी पढ़ी-लिखी न होने के कारण, मन की बात शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकती। इस पर भी इतना तो जानती हूं कि मेरे मन में इच्छा थी और मैं चली आई हूं।"

"तो देख लिया है, मैं जीवित हूं। बच्चे भी स्वस्थ और प्रसन्न हैं। अब तुम जा सकती हो।"

इस प्रकार दो टूक बात सुन तो गंगा विस्मय में खड़ी ही रह गई। वह समझ नहीं सकी कि बलराम उसके प्रति इतना शुष्क व्यवहार क्यों कर रहा है। इससे उसको अपना दिल बैठता अनुभव हो रहा था। वह अनामन्त्रित एक कुर्सी पर बैठकर बोली, "हां, देख लिंया है और इससे चित्त को शान्ति मिली है। परन्तु आज मैं तुमसे एक-दो बातें करने आई हूं।"

"पर, मां! मेरी इच्छा नहीं हो रही कि मैं किसी प्रकार की बात करूं।"

"इसी कारण तो आठ वर्ष तक वह बात पूछ नहीं सकी। तुमको हिन्दुस्तान लौटे आठ वर्ष होने जा रहे हैं। और तुमने मेरे साथ एक विशेष प्रकार का व्यवहार अपना रखा है। मेरे सब परिचित, मित्र, सम्बन्धी इस विषय में मुझसे पूछते हैं और मैं उनको कोई समाधानकारक उत्तर नहीं दे सकती। कोई मुझको दोषी मानते हैं, कोई तुमको और कुछ ऐसे हैं, जो तुम्हारी बहू को इसमें कारण समझते हैं। मैं आज इस विषय में समझने के लिये आई हूं कि वास्तविक दोष कहां पर है।"

"क्या करोगी समझकर?"

"जहां कहीं भी वह दोष होगा, उसे दूर करने का यत्न करूंगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"भला, जो दोष स्वाभाविक हो, उसे तुम क्या दूर कर सकोगी। स्वभाव तो बदले नहीं जा सकते।"

"यत्न तो किया ही जा सकता है।"

"यत्न करना चाहती हो तो सुन लो। दोष तुम में है। मां! तुम अपने सौन्दर्य और स्त्री-सुलभ आकर्षण को, पिताजी से अपने मन की बात मनवाने में प्रयोग किया करती थीं। मैं इसको वेश्यावृत्ति समझता हूं। इसलिये मैं तुमसे घृणा करता हूं, अब तुम जाओ।"

"नहीं, अभी नहीं। यह तो तुमने न केवल मुझे ही गाली दी है, अपितु अपने स्वर्गीय पिता को भी पतित घोषित कर दिया है। मैं यह जानना चाहती हूं कि क्या तुम्हारे पिता ने तुमसे कभी ऐसी शिकायत की थी कि मेरे मोह-जाल में फंसे हुए वे बहुत दुःखी थे?"

बलराम अपने मन की बात प्रगट तो कर बैठा, परन्तु इसको सिद्ध करने के लिये प्रमाण मांगे जाने पर, बितर-बितर मुख देखता रह गया। लिल्ली सामने बैठी अपने पति और सास में उसी विषय पर विवाद होते सुन, जिसको वह स्वयं भी जानने के लिये उत्सुक थी, सतर्क हो गई। वह अपने पति के व्यवहार को अस्वाभाविक मानती थी और इसका कारण जानने के लिए उत्सुक थी। इससे वह इस वार्तालाप को दत्तचित्त होकर सुन रही थी।

बलराम ने कुछ विचार कर कहा, "उन्होंने अपने मुख से तो ऐसी शिकायत कभी नहीं की। परन्तु मैं उनके मुख पर सदा उनकी विवशता देखता था। वे सर्वथा नास्तिक थे। कभी उन्होंने परमात्मा के अस्तित्व को नहीं माना। इस पर भी तुम्हारे कहने पर वे सदा सैकड़ों साधुओं, महात्माओं को दान-दक्षिणा दिया करते थे।

"यहां तक कि तुमने मेरी अनुपस्थिति में प्रायः सब सम्पत्ति दान करवा दी। मैं आया तो विदित हुआ कि मेरे लिये यह कोठी और तुम्हारे लिये उस मकान के अतिरिक्त, सब का ट्रस्ट बन चुका है। एक बार तो मैं यह समझने लगा था कि मैं इस संसार में निस्सहाय हूं।"

"तो यह बात है? तुम्हें अपने पिता के सम्पत्ति दान कर देने का गिला है। यह तुम किस प्रकार जानते हो कि यह दान मैंने अपने प्रभाव से करवाया है? और फिर तुम्हारी शिक्षा के लिये पैंतीस हजार रुपया दिया जा चुका था। तुम्हारे लाहौर में प्रैक्टिस चलाने के लिए बीस हजार बैंक में जमा करा दिया था। मेरे लिये सौ रुपया मासिक का प्रबंध भी उन्होंने कर दिया था। यह भी नहीं कि तुमको अपनी मां के खर्च का बोझा उठाना पड़े। इस पर भी तुमको गिला है कि उन्होंने अपना परलोक सुधारने के लिये, शेष किसी को क्यों दे दिया है?"

"परलोक? कहां है परलोक? किसने देखा है उसे? किसी झूठी कल्पना के लिये, बाप-दादाओं की संचित सम्पत्ति, किसी काम के लिये व्यय कर दी, जिसका कोई आधार नहीं। और यह पुराने जमाने की गली-सड़ी बात ही है।"

"मैंने लाला कृष्णचंद्र वकील से पूछा है कि यह कैसे हुआ है। पिताजी न तो आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास रखते थे, न ही परलोक अर्थात् स्वर्ग-नर्क में। उन्होंने बचपन से ही मुझको एक बड़ा डॉक्टर बन, हिन्दुस्तान में चिकित्सा-विज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिये उच्च शिक्षा दिलवाई थी। परन्तु मेरे आने से पूर्व ही पांच लाख का ट्रस्ट आयुर्वेद के लिये बन जाना तो वास्तव में विस्मय की बात थी। कृष्णजी बताते थे कि उनको स्वयं पिताजी की इस कलाबाजी पर आश्चर्य हुआ था। उनका विचार था कि यह सब तुम्हारे धार्मिक विचारों के परिणामस्वरूप हुआ है।"

"उनके अपने इस विचार का तुम्हारे पास कोई भी प्रमाण है क्या?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो तुम्हीं बताओ कि क्या हुआ?"

"मैं नहीं बताऊंगी। इसका पति-पत्नी की गुह्य बातों से सम्बंध है। इतना कह देती हूं कि जो कुछ हुआ, उसमें मेरी आत्मा सर्वथा निर्मल है। मैंने कोई ऐसी बात नहीं की, जिसका मुझको कभी भी पश्चाताप करना पड़े।

"उस सम्पत्ति में से तुमको इतना मिला है इसका भी उनको खेद था। परन्तु किसी के कहने पर कि तुम उनके लड़के हो, तुम उनकी वंश परम्परा चलाने वाले हो, इससे तुमको संसार में निस्सहाय छोड़ जाना उचित नहीं। इस कारण वे मान गये थे।"

"तो तुम्हें अफसोस है कि यह मुझे क्यों मिल गया?"

"मैंने ऐसा कहा है क्या? या आप अपने व्यवहार से कभी मैंने ऐसा कुछ प्रकट किया है?"

"तुमने मुख से भले ही न कहा हो, परन्तु यह देख कि एक लखपति की विधवा रामायण के पाठ पर केवल एक सहस्र ही व्यय कर सके, अवश्य तुम्हारे दुःख और क्लेश का विषय रहता होगा।"

"बलराम! इतना पढ़-लिखकर इस प्रकार की मूर्खता का प्रदर्शन करते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती क्या? अपने पिता के प्रति तुमने कभी मेरे मुख से कोई निन्दात्मक शब्द सुना है? अथवा आज किसी ब्राह्मण को इस कारण कम दक्षिणा मिली है कि मेरे पास धन की कमी है?

"देखो, आज ग्यारह ब्राह्मणों का भोजन था और सबको वही कुछ मिला है, जो ऐसे अवसरों पर तुम्हारे पिता दिया करते थे। कथा करने वाले को एक सौ ग्यारह मिले हैं। सब सम्बन्धियों को भोजन भी ऐसा स्वादिष्ट मिला है, जैसा कि कभी तुम्हारे स्वर्गीय पिता ने खिलाया होगा।

"तुम्हारे मामा हरिकृष्ण भी आये हुए थे और कह रहे थे कि मैंने अपने परिवार की नाक रख ली है।"

"रख ली है अथवा काट दी है?"

"यह तुम हरिकृष्ण से पूछना कि उसने क्या कहा है। मुझे तो इस बात का खेद है कि जिसने तुमको पढ़ा-लिखाकर इस योग्य बना दिया है कि तुम दो-तीन हजार प्रति मास पैदा कर लो, तुम उसकी ही निन्दा कर रहे हो।

"मैं एक बात और जानने के लिये आई हूं कि आज के भोजन पर तुम्हारी बहू स्वेच्छा से नहीं आई या तुम्हारे मना करने के कारण नहीं आ पाई?"

"यह तुम्हारे सामने बैठी है, तुम स्वयं ही पूछ लो।"

"तुम बताओ बलराम! उस बेचारी को कठिन परिस्थिति में मत डालो। और देखो, झूठ मत बोलना। सत्य सदैव उतर आता है, वह कभी छिप नहीं सकता।"

बलराम ने मुस्कराते हुए कहा, "मां! यह पति-पत्नी की गुह्य बात है, मैं इसे नहीं बताऊंगा।"

मां हंस पड़ी। वह समझ गई कि पुत्र ने मां के कथन का बदला ले लिया है। वह उठ खड़ी हुई। उठते हुए उसने कहा, "खैर! तुम्हारे नाराज रहने का कारण पता चल गया है। तुम्हें शोक है कि पिता ने तुम्हें पांच लाख रुपया क्यों नहीं दिया। पर मानो-न-मानो, मैं बताती हूं कि इसमें मैं दोषी नहीं हूं। यह तुम्हारे पिता के अपने मन की विचार की हुई बात थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगा जाने लगी तो उसने विन्सेंट और फ्लोरा को अपने समीप बुलाते हुए कहा, ''वसंत और फूल! इधर आओ।''

अपने पर्स में से दो पांच-पांच के नोट निकाल कर उनको दिखाते हुए कहा, ''तुम लोग आज आये नहीं, इस कारण तुमको यह देने के लिये आई हूं।''

विन्सेंट ने अपनी मां की ओर देखा, मानो वह पूछ रहा हो कि ले अथवा नहीं। लिल्ली ने कह दिया, ''विन्सेंट! ले लो।''

फ्लोरा तो पहले ही कूद कर दादी के गले से लगने वाली थी। उसने पहले हाथ पसारा। दादी ने दोनों को पांच-पांच रुपये दिये और विन्सेंट के सिर पर हाथ फेर कर प्यार दिया तथा फ्लोरा को गले लगाकर उसका मुख चूमा।

इसके बाद गंगा ने अपनी पुत्र-वधू की ओर देखते हुए कहा, ''भगवान तुमको चिरायु करे और तुम्हारा सुहाग अखण्ड रहे।'' इस प्रकार एक ही वाक्य में बहू और पुत्र को आशीर्वाद दे, वह वहां से चल पड़ी।

तांगा बाहर खड़ा था। तांगे में बैठ, वह कोठी से निकली तो बलराम ने विन्सेंट और फ्लोरा को सम्बोधित कर पूछा, ''विन्सेंट! क्या करोगे इन रुपयों का?''

विन्सेंट इस प्रश्न का अभिप्राय नहीं समझ सका। रुपये खर्च करने के लिये होते हैं, भला इसमें पूछने की भी आवश्यकता थी क्या? वह बितर-बितर पिता का मुख देखता रह गया। लिल्ली ने उसको उत्साहित करते हुए कहा, ''हां-हां, बताओ ग्रांड-मां से मिले रुपयों का क्या करोगे?''

विन्सेंट को एक बात सूझी। उसने कहा, ''मैं कल अपने स्कूल के मित्रों को दावत दूंगा।''

''किस उपलक्ष्य में?''

''दादी के भोज की स्मृति में।''

''इससे तुमको खुशी होगी?''

''अवश्य! मेरे मित्र बहुत प्रसन्न होंगे और वे मेरी ग्रांड-मां के लिये दीर्घ-जीवन की कामना करेंगे।''

''किंतु, तुम्हें इससे क्या?''

''मेरी ग्रांड-मां के लिए यह अच्छा होगा।''

''और फ्लोरा तुम! क्या करोगी?''

''मैं मम्मी से पूछ लूंगी कि क्या करूं?''

लिल्ली को इन दोनों का उत्तर सुनकर, बहुत हर्ष हुआ। उसने दोनों बच्चों को अपने पास खींचकर अपने गले से लगा लिया और उनकी पीठ पर हाथ फेरने लगी।

डॉक्टर बलराम कहने लगा, ''मैं यह सब पसंद नहीं करता।''

लिल्ली ने कन्धों को झटका दे, असंतोष व्यक्त कर दिया। परन्तु उसने मुख से कुछ नहीं कहा। इस पर डॉक्टर ने कहा, ''लिल्ली! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, जो तुम आज मेरे कहने पर उस बुढ़िया के घर पर भोज के लिये नहीं गईं। इस प्राचीन काल की स्मृति से सम्पर्क रखना मुझे पसंद नहीं।''

इसमें भी उत्तर देने के लिये कुछ था नहीं, इस कारण लिल्ली चुप रही।

: 4 :

बलराम के पिता ने पांच लाख रुपया लगाकर अपने मोहल्ले में एक आयुर्वेदिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
धर्मार्थ चिकित्सालय के लिये ट्रस्ट बना दिया था। वह चिकित्सालय उसी मकान में खोला गया था जहां संतराम अपने परिवार के साथ 1907 की प्लेग से पहले रहता था। यह पिछले पांच वर्ष से काम कर रहा था। इस ट्रस्ट में तिलोत्तमा का पति प्रोफेसर सुदर्शन, वकील कृष्णचंद्र और एक वैद्य थे। ट्रस्ट-डीड में यह लिखा था कि जब तक शुद्ध आयुर्वेद से चिकित्सा सम्भव हो, चलाई जाए। यदि किसी कारण से यह सम्भव न हो सके तो इसी धन से संस्कृत पढ़ाने का प्रबन्ध किया जाय। संतराम को कुछ ऐसा प्रतीत हुआ था कि समय पाकर सरकार आयुर्वेद को चलने से रोक देगी। उसका विचार था कि यह वैसे ही होगा जैसे सरकार अपने कार्यालयों में देशी पोशाक पहनने के स्थान पर कोट पतलून पहिन कर आना पसंद करती है।

आयुर्वेद पर उसका बिल्कुल विश्वास नहीं था परन्तु बुद्धि का कांटा बदला तो वह ऐलोपैथी पर ही विश्वास खो बैठा। इस विचार परिवर्तन में गंगा कारण तो नहीं बनी थी परन्तु साधन अवश्य बन गई थी।

सुदर्शनलाल को तीव्र ज्वर हुआ था। नगर के प्रसिद्ध डॉक्टर चिकित्सा कर रहे थे। किन्तु ज्वर टस-से-मस नहीं हो रहा था। जहां संतराम अपनी लड़की तिलोत्तमा के सुहाग के लिये डॉक्टरों के पास दौड़ रहा था वहां गंगा अपनी लड़की के लिये नगर के निर्धनों, विद्यार्थियों और कन्याओं को भोजन, वस्त्र इत्यादि दान कर रही थी।

दिन व्यतीत हो रहे थे और पूर्ण परिवार भाग्य से संघर्ष कर रहा था। ज्वर हुआ सातवां दिन था। जिस दिन ज्वर आरम्भ हुआ था थर्मामीटर में एक सौ पांच से कम हुआ ही नहीं था। डॉक्टर निराश थे। मेडिकल कॉलेज के प्रिंसिपल डॉक्टर संडरसन को बुलाया गया था और डॉक्टर कौल वहां पहले ही उपस्थित था। दोनों ने देखा और जो चिकित्सा वहां हो रही थी, उस पर विचार हो रहा था। डॉक्टर रोगी के निरीक्षण के बाद मकान की बैठक में खड़े-ही-खड़े विचार कर रहे थे कि कितनी देर में शरीर शांत होगा। डॉक्टर संडरसन का विचार था कि रोगी अधिक-से-अधिक सायंकाल तक श्वास ले सकेगा। उसका अनुमान था कि फेफड़े में शोथ और प्रदाह है और औषधि कार्य नहीं कर रही।

संतराम अपनी लड़की के वैधव्य का विचार कर डबडबाई आंखों से दोनों डॉक्टरों की ओर देख रहा था। उसे इस प्रकार दुखी देख डॉक्टर कौल ने कहा, "लाला जी! बहुत शोक है, परन्तु साइंस इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकती।"

संतराम ने जेब से बत्तीस रुपये निकाल संडरसन के सम्मुख किये तो उसने रुपये लेते हुए कहा, "परमात्मा को स्मरण करो, वही इसको जीवन देने में समर्थ हैं।"

संतराम ने डॉक्टर कौल को पन्द्रह रुपये फीस के दिये तो डॉक्टर ने, जो इस चिकित्सा में चार-पांच सौ रुपया ले चुका था, कह दिया, "अब मैं नहीं लूंगा। मैं अपनी पराजय स्वीकार करता हूं।"

इस समय गंगा पण्डित मनीराम को लेकर आ गई। डॉक्टर संडरसन तो जा चुका था परन्तु कौल रुपया लेने से इनकार कर रहा था। और गंगा का पति तरल आंखों से डॉक्टर के मुख पर याचना के भाव में देखता हुआ रुपये उसकी जेब में डाल रहा था।

गंगा ने यह देखा तो उसके पांव तले से मिट्टी खिसकने लगी। उसने समझा कि जीवन समाप्त हो चुका है। इससे वह अवाक् खड़ी रह गई। पण्डित मनीराम भी ऐसी ही बात समझ शोक-मुद्रा में सन्तराम की ओर देख रहा था।

पण्डितजी तो वहीं खड़े रह गये और गंगा रोगी के कमरे में चली गई। तिलोत्तमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रोगी के पलंग के पास बैठी उसके सिर पर बरफ की टोपी लगा रही थी। गंगा ने देखा कि रोगी पथराई आंखों से सामने दीवार की ओर देख रहा है। कभी-कभी आंख झपक लेता है, सांस में खड़खड़ाहट चल रही थी।

उसने जो समझा था वह अभी घटित तो नहीं हुआ था, किन्तु घटने वाला ही दिखाई दे रहा था। इस पर भी डूबते को तिनके का सहारा की भांति वह भागी हुई बाहर आई। डॉक्टर कौल उस समय सन्तराम से हाथ मिला अपना बैग उठा द्वार की ओर मुख किये खड़ा था कि गंगा आई और पण्डितजी को संकेत से भीतर ले गई।

पण्डितजी ने रोगी की नाड़ी को देखा तो कहने लगे, ''यह सिर पर क्या है?''

''बर्फ लगाने को कह रहे हैं। उनका विचार है कि इससे ज्वर काबू में रहेगा।'' तिलोत्तमा ने बताया।

''कब से लगा रही हो?''

''जब से ज्वर चढ़ा है।''

''यह व्यर्थ है, छोड़ो इसको।''

सन्तराम इस समय भीतर आ गया और धीरे-धीरे पण्डितजी को कहने लगा, ''प्रिंसिपल साहब कह गये हैं कि सायंकाल तक खेल समाप्त होने वाला है।''

''उसका सिर समाप्त होने वाला है। वह भगवान है क्या?''

''तो क्या...।''

''इस बरफ को हटा दीजिये और थोड़ा गरम पानी और मधु लाइये।''

सन्तराम को पण्डितजी के अभिमानपूर्ण वाक्य पर क्रोध आ रहा था। परन्तु आशा-विहीन व्यक्ति की भांति वह विरोध की शक्ति खो चुका था। इस कारण चुप रहा। गंगा भाग-दौड़ कर रही थी। वह रसोई घर में गई और गरम जल ले आई। पण्डित जी ने अपनी पोटली में से एक काले रंग की गुट्टी निकाली और एक छोटी-सी पत्थर की चकली निकाल गरम जल की दो बूंद में वह गुट्टी घोटनी आरम्भ कर दी। जब कुछ घिस गई तो उसी पर दो बूंद मधु डाल उसको एक चम्मच में एकत्रित कर उंगली से रोगी की जिव्हा पर चुपड़ दिया। जिव्हा अकड़ कर लकड़ी हो रही थी।

पण्डित जी कुर्सी पर बैठे रोगी की नाड़ी पकड़े हुए थे। बरफ की टोपी हटा दी गई थी। एक क्षण के लिए तो रोगी में बेचैनी दिखाई दी, परन्तु अगले ही क्षण वह जिह्वा पर लगा मधु चाटता प्रतीत हुआ। पण्डित मनीराम मुस्करा रहा था।

पण्डित जी ने तिलोत्तमा से पूछा, ''ज्वर कब देखा था?''

''अब तो ये मुख में थर्मामीटर पकड़ते ही नहीं। इससे प्रातःकाल से केवल बदन पर हाथ लगाकर ही अनुमान लगाया जा रहा है कि ज्वर कम नहीं हो रहा।''

''अच्छा, अब हाथ लगाकर देखो तो।''

तिलोत्तमा ने कुरते के अंदर पेट पर हाथ लगाया और विस्मय में पण्डितजी के मुख को देखने लगी। पण्डित जी ने पूछा, ''क्यों, क्या है?''

''इनके पसीना आ रहा है। यह तो पिछले सात दिन से एक बार भी नहीं आया था।''

''ज्वर कैसा प्रतीत होता है।''

''कम हो रहा प्रतीत होता है।''

रोगी ने आंखें बंद कर लीं। सन्तराम तो इसे काम समाप्त होता समझने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पण्डित जी जो अभी भी नाड़ी पकड़े हुए थे, बोले, "भगवान की कृपा प्रतीत होती है।"

"कृपा?" सन्तराम के मुख से निकला। फिर बोला, "हां, कष्ट समाप्त हो रहा है।"

पण्डित ने सन्तराम के मुख पर देखा, तो वह रुमाल से अपनी आंखें पोंछता हुआ कहने लगा, "पण्डितजी! क्या फीस लेते हैं?"

"मैं अभी जा नहीं रहा। वह चकली दिखाओ।"

इस बार पण्डितजी ने वही गुट्टी फिर रगड़ी और उसी में एक अन्य गुट्टी जो लाल रंग की दिखाई दी थी, वह भी रगड़ दी, दोनों को घिस कर मधु में उसका लेप बना पुनः रोगी का मुख खोल उसकी जिव्हा पर लगा दिया।

रोगी के सांस की खड़खड़ाहट रुक गई। श्वास नियम से चलने लगी। रोगी ने अब मुख खोला तो पण्डित जी ने चम्मच से गरम ज़ल उसके मुख में डाल दिया। इससे औषधि गले से नीचे उतर गई।

रोगी ने एक बार आंखें खोलीं और फिर बंद कर लीं। सन्तराम देख रहा था कि अभी जीवन तो है। अब उसने सुदर्शन के पेट पर हाथ रख कर देखा। उसका हाथ रोगी के पसीने से भीग गया।

पण्डित मनीराम आधे घण्टे तक वहां बैठा रहा। फिर उसने पुनः नाड़ी देखी और सन्तोष प्रकट कर कहा, "अब यह सोयेगा। कई दिन से इसे नींद नहीं आई। जब यह मुख खोले, तो इसके मुख में उष्ण जल डालते रहिये। दो घण्टे बाद दुकान पर समाचार भेजना।"

सन्तराम पण्डितजी के साथ-साथ कमरे से बाहर निकलते हुए पूछने लगा, "तो लड़का बच जावेगा?"

"लाला जी! बच गया है। अब रोने-धोने की आवश्यकता नहीं। ईश्वर का धन्यवाद करिये और कुछ दान-पुण्य करिये।"

सन्तराम परमात्मा, ईश्वर, दान-पुण्य के शब्द ऐसे सुन रहा था, मानो स्वप्न देख रहा हो। वह कुछ न समझ सकने के कारण यह भी भूल गया था कि पण्डित जी को भी कुछ भेंट देनी चाहिये। पण्डित जी भी बिना कुछ मांगे पैदल ही चल दिये।

सन्तराम भीतर आया तो रोगी के मुख पर मुस्कुराहट देख उसकी आंखों के सम्मुख चक्कर आने लगे। उसके जीवन-भर के विश्वासों का विस्फोट हो रहा था।

गंगा ने कहा, "अब तो सत्य ही सुदर्शन हो रहा प्रतीत होता है।"

सन्तराम ने उसके नाक के आगे हाथ रखकर देखा, श्वास चल रहा था। उसका मुख खिल गया। इस समय गंगा ने पूछा, "पण्डित जी को फीस दी है?"

"ओह, मैं घबरा गया था, मुझे याद ही नहीं रहा।"

"अच्छा, अब मत देना, मैं स्वयं दे दूंगी।"

"कहां मिल गये थे, ये पण्डित जी?"

"मैं आज सर्वथा निराश रामद्वारे गई थी। ठाकुर जी के सामने माथा नवा अविरल आंसू बहा रही थी। पण्डित रामेश्वर दयाल जी ने देखा तो मुझसे पूछने लगे कि क्या बात है।

"मैंने सुदर्शनलाल की बात बता कर कह दिया कि डॉक्टरों से निराश हो ठाकुर जी के चरणों में आई हूं। उसने पूछा कि किसकी चिकित्सा चल रही है। मैंने उसको बता दिया कि डॉक्टर कौल की चिकित्सा चल रही है और सब बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखा चुके हैं। आज डॉक्टरी के कॉलेज के बड़े डा्क्टर को बुलाया है पर पण्डितजी अब तो खेल समाप्त ही दिखाई देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वे कहने लगे कि डॉक्टरों की बात छोड़कर पण्डित मनीराम को दिखा दो। क्या जाने भगवान उनको ही यश दे दे।

"उनसे पण्डितजी का नाम सुन मैं उनके घर पहुंच गई। जब उनको स्थिति बताई गई तो वे अपनी पोटली ले मेरे साथ चल पड़े। उनको लेकर मैं यहां आ गई।"

सन्तराम समझ नहीं सका कि क्या हुआ है। क्यों, इतने पढ़े-लिखे विद्वान लोग उसके जामाता को ठीक नहीं कर सके और एक घर पर पढ़ा हुआ पण्डित चुटकी में यह चमत्कार करके दिखा गया है।

सुदर्शनलाल को उठकर काम पर जाने में एक मास लग गया। पण्डित जी से जब उनकी फीस और औषधियों का मूल्य पूछा गया तो उन्होंने कह दिया कि फीस कुछ नहीं। विद्वान लोग अपनी विद्वत्ता का मूल्य नहीं लेते। औषधियों का मूल्य उन्होंने दस रुपया बता दिया।

सन्तराम मुस्कराकर पूछने लगा, "पूरे दस रुपये, कम ज्यादा नहीं?"

मनीराम हंस पड़ा। उसने कहा, "यह औषधि का मूल्य भी नहीं है। औषधि का मूल्य तो मैं लगा नहीं सकता। मैं तो एक औषधि बनाने के लिए यह रुपया मांग रहा हूं। आप से दस रुपया लेकर औषधि तैयार करूंगा और फिर उससे सैकड़ों रोगियों को लाभ होगा। अनेकों निर्धनों को निर्मूल्य औषधि दूंगा।"

"किस रोग की औषधि बना रहे हैं?"

"श्वास कास की। यह देखिये, लगभग दस वर्ष हुए, इसे बनाया था।" पण्डित जी ने अपनी पोटली में से लगभग पूर्ण घिसी हुई गिट्टी दिखा दी। "सैंकड़ों रोगियों को ठीक कर चुका हूं। अब यह समाप्त हो गई है। इस कारण इसको बनाने के लिये आपसे दस रुपये मांग रहा हूं।"

गंगा वैद्य जी की बातें सुन रही थी। वह पण्डित जी के कहने का अर्थ भी समझ रही थी। पण्डित रामेश्वरदयाल ने बताया था कि वे फीस तो वेश्याओं की समझते हैं। उनको ब्राह्मण समझ जो उचित समझें भेंट दी जा सकती है।

इस कारण वह उठकर दूसरे कमरे में गई और वहां से रेशमी धोती, दुपट्टा, पगड़ी और कुरते के लिये रेशमी कपड़े का तीन गज का टुकड़ा ले आई। इन कपड़ों के ऊपर उसने एक सौ एक रुपये रखे और उन्हें पण्डित जी के चरणों में रख हाथ, जोड़ बोली, "यह तुच्छ भेंट तो आपको स्वीकार कर ही लेनी चाहिए।

"पण्डित जी! हम तो आपके जीवन-भर कृतज्ञ रहेंगे। आपकी कृपा बनी रहे बस, यही कामना है।"

सन्तराम ने उसके अतिरिक्त इक्यावन रुपये देते हुए कहा, "इससे और औषधियां बनाकर लोक सेवा करिये।"

इस प्रकार भेंट ले, प्रसन्नवदन पण्डित जी घर को चले गये। सन्तराम ने कहा, "बड़ा विचित्र जीव है! यदि यह कहता कि एक हजार दो तो मैं देने के लिये तैयार बैठा था, परन्तु इस प्रकार इसका निर्वाह कैसे चलता होगा?"

"मैंने पण्डित रामेश्वरदयालजी से पूछा था। वे कहते थे कि किसी ब्राह्मण को निर्वाह की कभी कमी नहीं होती। भगवान स्वयमेव देता है। वे अपनी विद्वत्ता की दुकान लगाकर तो बेच नहीं सकते। यह प्रभु की देन है। जैसे यह अनायास ही मिलती है वैसे ही वे दोनों हाथों से इसको बांटते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 5 :

सन्तराम के मस्तिष्क में क्रान्ति उत्पन्न हो गई थी। वह अब कभी-कभी पण्डित मनीराम के घर जा उससे बातें करने में रुचि अनुभव करने लगा था। धीरे-धीरे यह परिचय मित्रता में परिणत हो गया।

एक दिन पण्डित जी ने सन्तराम का हाथ देखकर बताया, "लाला सन्तराम! अपनी वसीयत कर दी है अथवा नहीं?"

"नहीं, एक ही लड़का है। इस कारण वसीयत की आवश्यकता अनुभव नहीं हो रही।"

"तो जायदाद क्या संतान के लिये इकट्ठी की जाती है?"

"यदि सन्तान के लिये नहीं तो फिर किसके लिये इकट्ठी की जाती है?"

"धर्म-कर्म के लिये।"

"वह क्या होता है?"

"अभी आपने देखा नहीं कि एक रोगी पेट-पीड़ा से कराहता हुआ आया था। दवाई दी तो उसकी पीड़ा कुछ कम हो गई है। वह मुझे बिना कुछ दिये चला गया है। इसे धर्म-कार्य कहते हैं।

"पण्डित जी! मैं यही देख रहा हूं और आपके निर्धन रहने का कारण भी समझ गया हूं। किसी डॉक्टर के यहां से यदि इस प्रकार ठीक होकर रोगी चला जाय तो वह दस वर्ष में आधा लाहौर मोल ले ले।"

पण्डित मनीराम हंस पड़ा। फिर वह पूछने लगा, "तब क्या होता? क्या वह उस आधे लाहौर को छाती पर रख कर ले जाता? सन्तराम जी! मरने के बाद न धन-दौलत साथ जाती है और न पुत्र-कलत्रादि। ये सब यहीं रह जाते हैं।"

"तो फिर साथ कौन जाता है?"

"जिन निर्धन, अपंगों और बूढ़ों की सेवा की जाती है, उनका आशीर्वाद साथ जाता है।"

"उससे क्या होता है?"

"पुण्यलोक प्राप्त होता है।"

"वह कहां है?"

"मैं उसे दिखा नहीं सकता। मेरा कहा मानिये, आपका पुत्र विलायत में पढ़ाई कर रहा है। उसकी पढ़ाई और काम आरम्भ करने के लिये कुछ रुपया रखकर, शेष सब निर्धनों की सेवा में लगा दीजिये। ऐसा करने के बाद मैं कहता हूं कि दो मास के भीतर ही आप उस पुण्य-लोक के दर्शन कर लेंगे जिसके विषय में आप पूछ रहे हैं।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि दो मास के भीतर ही आपका देहान्त होने वाला है। मैं उस समय की तैयारी के लिए कह रहा हूं।"

संतराम का मुख पीला पड़ गया। मनीराम ने पूछा, "क्यों? डर गये हैं? मृत्यु से डर लगता है। कदाचित् ऐसा इसलिये कि आपने वहां जाने की तैयारी नहीं कर रखी।"

"तो क्या मरने के लिये भी तैयारी की जाती है?"

"हां, यह तो एक स्थान को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर जाने के तुल्य है इसकी तैयारी यही है कि इस स्थान के साथ, जिसको छोड़ना अवश्यम्भावी है, मोह छोड़ देना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
चाहिये। यहां रहे, संसार का भोग किया, परन्तु सदा मन में यही विचार रहना चाहिये कि हम यहां बैठे नहीं रह सकते। सभी इस संसार को छोड़ कर जाते हैं। इस कारण हमको भी जाना है। मन का ऐसा भाव बना लेना तैयारी का एक अंग है।

"इस तैयारी का दूसरा अंग है, वहां जाकर मकान किस प्रकार का लेना होगा। इसलिए किसी अच्छे-से मकान को प्राप्त करने के लिये सामर्थ्य उत्पन्न करना। यह तो सब जानते हैं कि धन-दौलत तथा सम्बंधी साथ नहीं जाते। हां, इनकी शुभ-कामना साथ जाती है। परन्तु इनका हित तो इस संसार में तुष्टि के कारण होता है। जो कुछ इनके साथ किया जाता है, उसका फल तो प्रसन्नता और सुख के रूप में यहीं मिल जाता है। कोई अपनी पत्नी को आभूषणों से लाद देता है और वह कृतज्ञता अनुभव करती हुई, उसकी प्रत्येक प्रकार से सेवा करती है। स्त्री को देने का फल तो मिल गया। यहीं और तुरंत ही। आगे के लिये कुछ नहीं रहा। यही बात पुत्र की है। परन्तु अकिंचनों को, जिनको आप जानते नहीं और जो आपको नहीं जानते, उनको यदि निस्वार्थ भाव से दिया जाये, तो अगले जन्म के लिए संचित समझना चाहिये। वास्तव में यही कार्य है, जो आगे मकान पाने की सामर्थ्य उत्पन्न करता है। यदि यह सामर्थ्य पुण्य-लोक पाने योग्य है तो वहां जाने में भय नहीं। प्रत्युत प्रसन्नता होती है। इसलिये कि वह अच्छा लोक है।"

"पण्डित जी! यह सब 'हाइपोथैटिकल' (कल्पना-मात्र) नहीं है क्या?"

"वह क्या चीज होती है?"

"आनुमानिक, काल्पनिक।"

"शास्त्र में यह सब-कुछ लिखा हुआ है। परन्तु मैं इसको दिखा नहीं सकता। इसके देखने और दिखाने की शक्ति योग-साधना से आती है। हां, बाबू साहब! आप इसे नहीं भी मान सकते। कोई आपको विवश तो करता नहीं।"

"परन्तु आपको यह कैसे पता चला कि मेरी मृत्यु इतनी निकट आ गई है?"

"यह भी एक शास्त्र में लिखे के अनुसार है। इसको भी यदि आप चाहें तो न मानें।"

"परन्तु इससे आपने मेरे मन में भय तो उत्पन्न कर ही दिया है।"

"मरने का भय मैंने उत्पन्न किया है क्या? यह तो संसार में हर कोई जानता है कि एक दिन यहां से जाना ही होगा। मैंने कोई अनहोनी बात तो आपको नहीं कही। फिर यह भी तो देखा जाता है कि लोग सहसा दुर्घटना-वश भी मर जाते हैं। कोई लम्बी बीमारी के कारण मरते हैं। किसी को यह कह देना कि उसकी मृत्यु सहसा बिना किसी प्रकार का कष्ट पाये होगी, तो यह भय का विषय कैसे हो गया? यह तो एक प्रकार से शुभ समाचार मानना चाहिये।"

सन्तराम हंस पड़ा। इस पर भी उसके मुख का रंग अभी भी अपने स्वाभाविक रूप में नहीं लौटा था। पूर्वापेक्षा उसका चित्त स्वस्थ तो हो गया, परन्तु फिर भी मृत्यु के विचार से उत्पन्न अवस्था का प्रभाव पूर्णतया मिटा नहीं था।

पण्डित मनीराम ने बात बदलकर कहा, "मेरे जन्म-पत्र से यह विदित होता है कि मेरी मृत्यु पचहत्तर वर्ष की आयु में चैत्र मास में होगी। मैं तो उसके लिये तैयार बैठा हूं और ज्यों-ज्यों समय समीप आता जाता है, मैं मन में उत्साह अनुभव करता हूं। मुझको विश्वास है कि वहां पर मेरे लिये इससे अच्छा स्थान बन चुका है।"

"आपकी पूर्ण बात का आधार तो यह है कि एक आत्मा है, एक परमात्मा है। आत्मा के कार्यों का बही-खाता परमात्मा के घर में लिखा जाता है और मरने के बाद आत्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को यमराज के दूत पकड़कर ले जावेंगे। वहां उनके बही-खाते की पड़ताल होगी और जैसा-जैसा उसका वहां जमा निकलेगा, वैसा-वैसा उसके भाग्य का निर्णय यमराज कर देगा। यह सब 'फैन्टास्टिक' नहीं है क्या?''

मनीराम फिर मुस्कराया और पूछने लगा, ''वह क्या होता है?''

''असंगत, अनहोनी, अस्वाभाविक, मनघड़न्त।''

''देखिये, इन बातों को मानने के लिये कोई विवश नहीं करता। आप एक बात बताइये—बोलने वाला, सुनने वाला, सूंघने वाला और स्पर्श करने वाला तथा देखने वाला—इस शरीर से भिन्न कोई है अथवा नहीं? यदि नहीं तो मृत्यु के बाद वह देख, सुन, श्रवण, कथन और स्पर्श क्यों नहीं कर सकता?''

''वह इसलिये कि शरीर में विकृति आ जाती है और आप जानते हैं कि बिगड़ी मशीन तो काम कर ही नहीं सकती।''

''मशीन बिगड़ने में और मृत्यु में अंतर है। अंधे, बहरे, गूंगे, लंगड़े में और मृत शरीर में अंतर है। प्रश्न यह नहीं कि यह अंतर प्रकृति का अंग है अथवा इस जड़-पदार्थ से कोई भिन्न प्रकार का पदार्थ है। विचारणीय बात यह है कि जिसके कारण यह अंतर है, वह इस शरीर के साथ ही समाप्त हो जाता है अथवा इसके बाद भी रहता है। यदि वह साथ ही समाप्त हो जाता है तो फिर बलशाली व्यक्ति, जो भी अत्याचार, अनाचार करे, वह उसके लिये स्वाभाविक है। इस जन्म में अपने अत्याचार के प्रतिकार से बचने का उसमें सामर्थ्य होना चाहिये।

''यह प्राकृतिक बात हो जावेगी। क्रिया और प्रतिक्रिया इस संसार का नियम है। यदि इस जन्म में प्रतिक्रिया नहीं हुई तो वह विफल गई क्या, संसार का नियम भंग हो गया क्या?

''ऐसा नहीं होता। वह पदार्थ जो इस जीवन में चेतना का कारण है, वह इस जीवन में समाप्त नहीं हो सकता। हो जाय तो क्रिया-प्रतिक्रिया का नियम भंग हो जावेगा।''

वे बात कर ही रहे थे कि दो व्यक्ति आंख में दवाई डलवाने के लिये आ गये। पण्डित मनीराम सन्तराम को छोड़, उनको देखने लगा। सन्तराम ने यद्यपि मन से पण्डित जी के कथन को माना नहीं था, परन्तु भीतर-ही-भीतर उसका मन बैठने लगा था। वह विचार कर रहा था कि क्या पण्डित जी का कथन सत्य होने वाला है? क्या उसके जीवन का अंत समीप आ गया है? अपने मन में वह घबराहट अनुभव करता हुआ उठा और बिना नमस्कार किये ही वहां से चल पड़ा। वह कमरे के द्वार से निकला ही था कि आंख के रोगी के साथ आया व्यक्ति पण्डित जी से पूछता सुनाई दिया, ''पण्डित जी! इन लाला जी का कोई सम्बन्धी बीमार है क्या?''

''नहीं, ये स्वयं बीमार हैं।''

सन्तराम आड़ में खड़ा हो सुन रहा था कि पंडित जी क्या कह रहे हैं। पंडित मनीराम ने आगे कहा, ''ये एक असाध्य रोग से ग्रस्त हैं, इनको जब यह बात बताई गई तो ये घबरा गये हैं।''

''मैंने समझा था कि कहीं इनकी पत्नी बीमार न हों। वे बेचारी बहुत भली हैं। सैकड़ों का जीवन उनके आश्रय चलता है। ईश्वर उनको चिरंजीवी करे।''

सन्तराम वहां से निकल कर सीधा घर पहुंचा। भय एवं चिन्ताग्रस्त-सा वह पलंग पर पड़ गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगा कथा सुनकर लौटी तो पति को पीत मुख, पलंग पर करवटें लेते देख, चिन्ता अनुभव करती हुई पूछने लगी, ''क्यों क्या बात है? कुछ कष्ट है आपको? कहें तो वैद्य जी को बुलाऊं?''

''उनके पास से ही तो आ रहा हूं। उन्होंने मेरा रोग बताकर उसकी चिकित्सा भी बता दी है, परन्तु मुझे दोनों पर विश्वास नहीं आया।''

''तो डॉक्टर कौल को बुला लेती हूं।''

''वह मूर्ख मेरे रोग को समझ नहीं सकेगा।''

''आखिर उन्होंने बताया क्या है?''

अपने मुख पर मुस्कराहट लाने का प्रयत्न करते हुए सन्तराम ने कहा, ''उनका कहना है कि रोग असाध्य है और इसकी चिकित्सा यही है कि इसके अस्तित्व को न मानो। पर जब पता चल गया है तो कैसे न मानूं?''

''रोग का नाम भी तो बताया होगा? किसी अन्य से उसकी चिकित्सा के विषय में पूछ लेते?''

इस समय तक वह पलंग पर अपने पति के समीप बैठ गई थी और उसके माथे पर हाथ रख कर देख रही थी कि कहीं ज्वरादि तो नहीं है। माथा तो साधारण स्थिति से भी ठंडा हो रहा था।

इस पर सन्तराम ने पूर्ण वार्तालाप का सारांश बता दिया। यह सुन तो गंगा हंस पड़ी। फिर बोली, ''परन्तु आपको तो विश्वास नहीं आया न?''

''बिलकुल नहीं।''

''फिर चिंता क्यों कर रहे हैं? उठिये, मैं गरमागरम जलेबी लाई हूं, देखिये कितनी स्वादिष्ट हैं।''

अपनी स्त्री के इस प्रसन्नता के प्रदर्शन पर सन्तराम का कुछ उत्साह बढ़ा और वह उठकर बैठ गया। बोला, ''यहीं ले आओ।''

गंगा गई और एक प्लेट में जलेबी और एक गिलास ठंडा पानी ले आई। जलेबी खाते हुए सन्तराम ने कहा, ''मृत्यु की बात ही ऐसी है कि मनुष्य इससे भयभीत हो जाता है।''

''इससे भय करने का कोई कारण तो है नहीं। पण्डित जी ने भय-निवारण विधि भी तो बता दी है, उसे कर लीजिये।''

''मैं यही विचार करता हूं कि दान-दक्षिणा भी कर दूं, और फिर मरूं भी नहीं। तब यह सब-कुछ व्यर्थ चला जाएगा न?''

''इसका भी एक उपाय है।''

''क्या?''

''आप अभी दान न करिये। वसीयत लिख दीजिये। उसमें अपने प्रिय-जनों के लिये कुछ रख कर, सब किसी भले काम के लिये दे डालिये। जिस दिन आपकी मृत्यु का भय नहीं रहेगा, उस दिन वसीयत को रद्द कर दीजियेगा।''

इस प्रस्ताव पर तो सन्तराम प्रसन्नता से हंस पड़ा। फिर सहसा वह गम्भीर हो गया। गंगा ने पूछा, ''क्यों, क्या हुआ?''

''प्रस्ताव तो तुम्हारा सुन्दर है। परन्तु मैं सोचता हूं कि क्या किसी समय मैं मृत्यु के भय से मुक्त भी हो सकूंगा। इन दो महीनों में न भी मरूं तो भी एक दिन तो मरना ही है।''

''बात तो ठीक कह रहे हैं।'' गंगा ने मुस्कराते हुए कहा, ''तो फिर वसीयत रद्द न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करिये। उसको रहने दीजिये। यह सम्भव है कि आपके विचार से दान दिया हुआ धन परलोक में भी काम न आये। इस पर भी मरने के बाद यहां पड़ा रहा तो भी आपके किसी काम में नहीं आयेगा।''

''अच्छा विचार कर लूं।''

अगले दिन विलायत से बलराम का पत्र आया। उसमें उसने लिली का चित्र भेजा था और लिखा था कि उस लड़की से कचहरी में जाकर उसने विवाह कर लिया है। जब वह हिन्दुस्तान लौटेगा, तब वह उसके साथ ही आयेगी। इसलिये उसका खर्चा बढ़ा दिया जाए, जिससे कि नव-दम्पति का व्यय आसानी से चल सके।

सन्तराम ने अपने मन में बलराम के डॉक्टर बन, भारत में लौटने के अवसर का एक चित्र बनाया था। उसमें पुष्प-मालायें, बाजे-गाजे, आतिशबाजी, दावतें, बारात, डोली इत्यादि अनेकों रंग थे। इस पत्र से वे सब मिट गये थे और अब एक फीका रंग-विहीन चित्र रह गया था। इस चित्र में बलराम एक लन्दन की आवारा, नाइट क्लबों में नृत्य करने वाली लड़की को लिये हुए उसकी सम्पति का मालिक बन जीवन-रस का भोग कर रहा है।

इस घटना से उसके हृदय में दौरा पड़ा। यह प्रथम दौरा था। वैद्य जी को बुलाकर चिकित्सा आरम्भ कर दी गई। कुछ लाभ भी होने लगा। इस पर भी एक बात उसके मन में बैठ गई कि बलराम को क्यों वह अपनी सम्पति का भोग करने दे। उसने उसको क्या दिया है? विवाह करने से पूर्व, उसने पूछा भी नहीं कि वह करे अथवा नहीं।

सबसे अधिक अखरने वाली बात यह थी कि बलराम ने लिख भेजा था कि उसका खर्चा बढ़ा दिया जाय, जिससे कि वह अपनी पत्नी के साथ सुख-सुविधा से रह सके। बलराम सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा उत्तीर्ण कर, विलायत चला गया था। वहां उसने बैचलर ऑफ साइंस की परीक्षा पास की, फिर डॉक्टरी कॉलेज में भरती हो गया, इस प्रकार उसको वहां गये छः वर्ष हो गये थे। इन छः वर्षों में पच्चीस हजार रुपया भेजा जा चुका था। इस बार तो उसने ऐसे मांगा था, मानो उसका अपना रुपया बैंक में जमा हो।

इससे चिढ़कर सन्तराम ने पूरी सम्पत्ति ही निर्धनों, अपाहिजों, बूढ़ों और बच्चों के लाभ के लिए दे देने का निर्णय कर लिया। एक दिन पण्डित मनीरामजी आये तो उसने एकान्त देख पूछ लिया, ''क्यों पण्डितजी! क्या यह अंत आने के लक्षण हैं?''

''देखिये, रोग की चिकित्सा तो है, परन्तु मौत की चिकित्सा नहीं। आपकी मृत्यु होगी अथवा नहीं, यह तो भगवान ही जानता है। जहां तक हृदय के दौरे का सम्बंध है, वह तो ठीक हो रहा है।''

''मैंने अपने मन में निश्चय कर लिया है कि अपनी सम्पत्ति की वसीयत कर दूं।''

''बहुत शुभ काम है।''

''आप बताइये किस प्रकार इसका सदुपयोग करूं।''

''कितनी है?''

''पांच से छः लाख तक की है।''

''मासिक आय कितनी होगी?''

''बारह-तेरह सौ रुपया की है। इसके अतिरिक्त तीन-चार मकान हैं।''

''तो ऐसा करिये, एक मकान और इतनी आय की सम्पत्ति का एक ट्रस्ट बना दीजिये और उससे एक निःशुल्क आयुर्वेदिक चिकित्सालय खोल दीजिये। यह निश्चय जानिये कि इतने में एक सहस्र रोगी नित्य औषधि पा सकेंगे।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उस ट्रस्ट में आप सम्मिलित हो सकेंगे क्या?"

"हां, यदि आपकी इच्छा हुई तो।"

इस समय गंगा आ गई। मनीराम जी ने उसको सन्तराम का निर्णय बताया तो अत्यंत प्रेममय दृष्टि से उसने उनकी ओर देखा।

ट्रस्ट-डीड लिख दिया गया। उस ट्रस्ट में पण्डित मनीराम, वकील कृष्णचन्द्र और प्रोफेसर सुदर्शन ट्रस्टी बना दिये गये। सन्तराम तो अपनी पत्नी के गुजारे के लिए छोड़, शेष सबका ट्रस्ट बनाने वाला था, परन्तु गंगा के कहने पर बलराम की अवशिष्ट पढ़ाई के लिये चार सौ रुपया मासिक के हिसाब से और बीस हजार उसकी प्रैक्टिस चलाने के प्रारम्भिक दिनों के लिये और रहने के लिये निस्बत रोड वाली कोठी, छोड़ दी गई।

: 6 :

वसीयत लिखने के दस दिन बाद, रात को सोये-सोये सन्तराम का देहान्त हो गया। इस पर बलराम को उसके पिता के देहान्त और उसके द्वारा लिखी गई वसीयत की सूचना भेज दी गई। बलराम यही समझ पाया कि उसकी मां ने बरगला कर यह वसीयत लिखवाई है। इस कारण उसने अपनी मां को अपना सुख-समाचार लिखने के अतिरिक्त और सब कुछ लिखना बंद कर दिया। यहां तक कि विन्सेंट के जन्म की सूचना भी उसने नहीं दी। इस विषय में तो गंगा को केवल उस दिन पता चला, जब बलराम के हिन्दुस्तान लौटने का पत्र आया। उस पत्र में डॉक्टर ने लिखा था, "मैं सितम्बर की दस तारीख को लाहौर पहुंच जाऊंगा। मेरे साथ मेरी पत्नी लिल्ली और हमारा एक बच्चा विन्सेंट भी होगा। हमारे रहने के लिये निस्बत रोड वाली कोठी ठीक करवा दी जाय।"

यह पत्र दो सितम्बर को गंगा को मिला था। उसको इस पत्र में भी आदेश की ही गन्ध आई थी। इस पर भी मां को यह बुरा प्रतीत नहीं हुआ। उसने कोठी की मरम्मत करवा, साफ करवाई और उसमें उचित फर्नीचर लगवा दिया।

दो मास का काम आठ दिन में करवा दिया और माली रखकर बाग भी ठीक करवाना आरम्भ कर दिया। बलराम अपनी पत्नी और लड़के के साथ आया। वह पुरानी अनारकली वाले मकान में गया, परन्तु कुछ घंटे वहां ठहर कर वह निस्बत रोड वाली कोठी में चला गया।

वह वकील कृष्णचंद्र से मिला और वसीयत का पूर्ण विवरण जान, अपने भाग का रुपया लेकर, अपनी पत्नी तथा बच्चों के साथ रहता हुआ अपनी प्रैक्टिस को बढ़ाने का यत्न करने लगा।

अब उसको लाहौर आये सात वर्ष हो चुके थे। यहां आकर आज उसने प्रथम बार अपनी नाराजगी का कारण अपनी मां को बताया। लिल्ली को ज्ञान हो गया कि क्यों उसका पति अपनी माता से नाराज है।

एक गरीब मां की बेटी को जीवन का वह सुख प्राप्त हो रहा था, जिसकी वह स्वप्न में भी आशा नहीं करती थी। वह आशा कर रही थी कि किसी दुकान पर काम करने वाले किसी सेल्समैन से उसका विवाह हो जायेगा। पति-पत्नी दोनों जीवन-भर काम करेंगे और ज्यों-त्यों कर, जीवन चलायेंगे। अब वह घर पर राज्य करती थी। उसके पति को अनायास ही ढाई हजार पौंड की वार्षिक आय हो रही थी। अब तो वे कई उद्योगों के हिस्से खरीद, अपनी आय को बढ़ा रहे थे। लिल्ली को अपने जेब-खर्च के लिये भी पांच सौ रुपया महीना मिल जाता था। इसमें वह अपना एक एकाउण्ट लन्दन के एक बैंक में खोले हुए थी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें धन एकत्रित हो रहा था। और इस समय लन्दन बैंक में उसका डेढ़ हजार पौंड जमा हो चुका था। अपनी इस अवस्था से लिल्ली पूर्णतया सन्तुष्ट थी।

वह मन में विचार करती थी कि उसके पति को अपनी अवस्था से संतोष क्यों नहीं है। उसको अपने पिता की सम्पत्ति नहीं मिली तो कितनी हानि हुई है? यदि वह अपने आप कमाई न कर सकता और अपने निर्वाह में कष्ट अनुभव करता, तब तो पैतृक सम्पत्ति के चले जाने का शोक करना कुछ अर्थ रखता था, परन्तु वर्तमान परिस्थिति में तो शोक के लिए कोई कारण नहीं था। विशेषरूप में जब पैतृक सम्पत्ति में से ही उच्च शिक्षा की गई हो और व्यवसाय के प्रारम्भिक खर्च के लिये भी उसमें से मिला हो।

जब उसने अपना असंतोष प्रकट करने के लिये कंधे को केवल-मात्र झटका देकर वह चुप रही और पति के उसके व्यवहार पर प्रसन्नता प्रकट करने पर भी उसने किसी प्रकार के मनोद्गारों का प्रदर्शन नहीं किया, तो वह स्वयं भी पत्नी के व्यवहार पर असन्तुष्ट उठा और भोजन के लिये चल पड़ा।

गंगा भी यह समझ कर गई थी कि उसका अपने पुत्र से सदा के लिए सम्बंध-विच्छेद हो गया है। परन्तु भाग्य ने अभी एक सूत्र बना रखा था। वह था विन्सेंट। वह अब दस वर्ष का किशोर हो रहा था और अपनी इच्छाएं और भावनाएं बनाने लगा था। दादी ने पांच रुपये का नोट दिया तो उसने अपने मित्रों को स्कूल की 'कैंटीन' में चाय-पार्टी दे दी। उसने अपने दस-बारह मित्रों और अपने ट्यूटर को आमन्त्रित कर लिया। चाय-पार्टी पर पांच रुपये से अधिक खर्च हो गए। शेष उसने अपने जेब-खर्च में से दे दिए।

विन्सेंट का ट्यूटर था जॉन माइकल। वह एक नवयुवक, रैवरैंड की उपाधि-प्राप्त पादरी था। और स्कूल में केवल निर्वाह पर काम करता था। विन्सेंट से उसका अधिक प्रेम था और विन्सेंट उसका बहुत आदर करता था। वह चाय पीते समय विन्सेंट के समीप बैठा था और उससे पूछने लगा, "यह चाय-पार्टी किस उपलक्ष्य में दे रहे हो?"

ट्यूटर का विचार था कि यह विन्सेंट का जन्म-दिन होगा। इस लिए जब विन्सेंट ने कारण बताया तो वह विस्मय में उसका मुख देखता रह गया। विन्सेंट ने अपने कार्य की अधिक व्याख्या करते हुए कहा, "ग्राण्डी ने मुझको अपने घर दावत पर बुलाया था, किन्तु डैडी हमें वहां लेकर नहीं गए। इस कारण वे हमें ये रुपये घर आकर दे गई हैं। उनका कहना था कि इनसे अपना मनोरंजन करूं। मैंने समझा कि अकेले में पांच रुपये तो कई दिन में भी समाप्त नहीं हो पावेंगे। इस कारण मित्रों के साथ मिलकर उन पांच रुपयों का रसास्वादन कर रहा हूं।"

"पर तुमने तो पांच रुपये से अधिक व्यय कर दिए हैं?"

"यह मैं अपनी ओर से ग्राण्ड मां के लिए कर रहा हूं।"

"तुम अपनी ग्राण्ड मदर को बहुत पसंद करते हो?"

"मेरे मन में उसके लिए बहुत ही आदर है।"

"परन्तु, तुम्हारे पिता तो सम्भवतया उनको पसंद नहीं करते?"

"हां, वे उससे घृणा करते हैं।"

"क्यों?"

"मैं समझ नहीं सका। रात डैडी कुछ जायदाद की बात करते थे। ग्राण्डी कहती थीं कि उनको बहुत मिला है। डैडी कहते थे कि उसने उनके पिता को भड़का दिया था।"

"देखो विन्सेंट, तुमको अपनी ग्राण्डी से प्रेम करना चाहिये। वह बूढ़ी है, विधवा है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और उसके कोई अन्य बच्चा नहीं है। उसने यदि भूल भी कर रखी है तो यह तुम्हारा काम नहीं कि उस भूल का बदला लो। यह उसके और उसके प्रभु के बीच छोड़ दो। हमको किसी से घृणा नहीं करनी चाहिये। प्रभुपुत्र यीशु मसीह का यही आदेश है कि निस्सहायों की सहायता करो।''

यह बात विन्सेंट के मन की थी। उस दिन चाय-पार्टी के बाद वह अपनी दादी से मिलने के लिए चला गया। गंगा, राम-द्वारे से लौटी ही थी कि विन्सेंट वहां जा पहुंचा। गंगा उसको अकेले आया देख विस्मय करने लगी।

''वसंत! आओ। मम्मी भी आई हैं क्या?''

''नहीं, मैं तो सीधा स्कूल से आ रहा हूं।''

''किसी काम से आये हो?''

''हां।''

''तो आओ, इधर मेरे पास बैठो।'' गंगा ने समझा कि उसकी मां ने किसी प्रकार का सन्देश भेजा होगा। वह उसके मुख से सुनना चाहती थी कि उसके वहां से चले आने के बाद उसके माता-पिता में किसी प्रकार का झगड़ा तो नहीं हुआ।

''वसंत! चाय पिओगे अथवा दूध?''

''ग्रांड मां! आज मैंने उन पांच रुपयों से जो तुमने दिये थे अपने मित्रों और ट्यूटर को चाय-पार्टी दी थी। सबको मैंने बताया था कि तुमने वे रुपये मेरे खाने-पीने के लिये दिये हैं और मैं उन सबके साथ मिलकर उनका मजा ले रहा हूं।

''इस पर सब बहुत प्रसन्न हुए थे और तुम्हारी लौंग एण्ड हैप्पी लाइफ के लिए कामना करते थे। मेरे ट्यूटर मिस्टर माइकल ने तो कहा है कि मैं तुमको उन सबकी शुभकामना पहुंचा दूं।''

गंगा अपने पोते के इस काम के लिये बहुत ही प्रसन्नता अनुभव कर रही थी। उसने विन्सेंट की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, ''वसंत! तुम मुझको बहुत ही अच्छे लग रहे हो। भगवान तुमको चिरायु और धन-धान्य सम्पन्न करे।''

''ग्राण्डी! मेरे ट्यूटर कहते हैं कि तुम बूढ़ी हो गई हो। इस कारण मुझे तुम्हारी सेवा करनी चाहिये।''

''सत्य? बहुत अच्छा है, तुम्हारा मास्टर।''

''हां, और वे कहते थे कि संसार में किसी से घृणा नहीं करनी चाहिये।''

गंगा ने बात बदल दी। अपने पोते की बातें सुन उसकी आंखें तरल हो रही थीं। उसने कहा, ''वसंत! कितने लोग थे, तुम्हारी चाय-पार्टी में?''

''ट्यूटर सहित कुल ग्यारह लोग थे।''

''तो पांच रुपये तो कम पड़ गये होंगे?''

''पर ग्रांड मां! मेरे पास अपने पैसे भी तो थे। डेढ़ रुपया तो चाय पर अधिक खर्च आया था और आठ आने बैरे को टिप दिये थे।''

''यह टिप क्या होती है।''

''यह बख्शीश होती है।''

''ठीक है, तो तुमको दो रुपये और मिलने चाहिये।''

''मैं रुपये लेने नहीं आया।''

''ठीक है, परन्तु तुमने व्यय तो किये हैं। इसलिये मिलने भी चाहिये।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह उठी और सामने की अलमारी खोल उसमें से दो रुपये निकाल कर ले आई। रुपये देते हुए गंगा बोली, "देखो वसंत! यह तुम ले लो। आज तुमने मेरे नाम से पार्टी दी है न, इसलिए उसका सब खर्च मुझे ही देना चाहिये। अच्छा देखो, तुम अपनी मां की सेवा करोगे तो मेरी सेवा हो जावेगी। इसलिए नित्य प्रातः उठकर मां के पांव छूकर माथे को हाथ लगाया करो। मां का आदर करने का यही हिन्दुस्तानी तरीका है।"

"परन्तु मैं तो हिन्दुस्तानी नहीं हूं!"

"तो तुम कौन हो? तुम्हारी दादी हिन्दुस्तानी है, तुम्हारे पिता हिन्दुस्तानी हैं और तुम्हारी मम्मी भी हिन्दुस्तानी है।"

"मम्मी किस प्रकार हिन्दुस्तानी है।"

"क्या नाम है तुम्हारी मां का?"

"लिली।"

"यह तो पूरा नाम नहीं है।"

"पूरा नाम तो लिल्ली साहनी है।"

"हां, साहनी हमारी जाति है। तुम हो वसंत साहनी।"

विन्सेंट हंस पड़ा और बोला, "डैडी कहते थे कि मैं अंग्रेज हूं। परन्तु यह सब तो मैंने सोचा ही नहीं था। मम्मी बताती थी कि उनकी मां का नाम हैंडरसन है। परन्तु मेरा और मम्मी का नाम साहनी है।"

"हां, बेटा! तुम हिन्दुस्तानी हो। अपने ट्यूटर से पूछना, वह तुमको समझा देगा।"

"पर तुम मुझको वसंत क्यों कहती हो?"

"वसंत वर्ष की वह ऋतु है जिसमें फूल निकलते हैं। तुम मुझको फूल की भांति प्यारे लगते हो। इसलिए मैं तुम्हें वसंत और तुम्हारी बहिन को फूल कहती हूं।"

आज दादी के घर आने से दो बातें हो गई। एक तो विन्सेंट को सायंकाल स्वतंत्र रूप से घूमने की इच्छा होने लगी और दूसरे वह अपने दादी से सम्पर्क की बात अपनी मम्मी को बताने लगा।

पहले ही दिन वह घर गया तो लिल्ली उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। डॉक्टर किसी मेजर ऑपरेशन पर गया हुआ था।

"विन्सेंट! इस समय स्कूल से आ रहे हो?"

"नहीं मम्मी! ग्रांड मां के दिये रुपयों से मैंने अपने मित्रों और ट्यूटर को चाय-पार्टी दी थी। इस पर मिस्टर माइकल ने कहा कि उनकी शुभकामना, मैं ग्रांड मां को पहुंचा दूं। इस कारण मैं उनके घर गया था।"

"ओह! तो मिली थीं दादी?"

"हां, और जब मैंने उनको सारी बात बताई तो उनके आंसू निकलने लगे। वे मुझे प्यार करती रहीं।"

लिली की भी आंखों के कोने गीले हो गए। विन्सेंट ने देखा तो पूछने लगा, "मम्मी! तुम भी रोने लगी हो?"

लिली ने सिर हिलाकर स्वीकार किया और विन्सेंट को गले लगाकर उसका मुख चूमते हुए कहा, "विन्सेंट! तुम बहुत अच्छे लड़के बनो।"

"मैं अवश्य बनूंगा मां! दादी ने जो रुपये दावत पर ज्यादा खर्च हुए थे, दे दिए हैं।"

"सत्य? वे बहुत अच्छी हैं। लेकिन दादी से मिलने जाने की बात तुम अपने डैडी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मत कहना।''

''क्यों?''

''वे पसंद नहीं करेंगे। किन्तु मैं कहती हूं कि तुमने वहां जाकर अच्छा किया है।''

''वे क्यों पसंद नहीं करेंगे?''

''देखो विन्सेंट! हमें अपने बड़ों की बातों पर टीका-टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। इस पर भी मैं कहती हूं कि वहां जाकर तुमने कोई बुरी बात नहीं की है।''

अगले दिन विन्सेंट प्रातः उठा तो अपनी मम्मी के कमरे में चला गया। लिल्ली अभी पलंग पर लेटी हुई थी। डॉक्टर किसी रोगी को देखने के लिए जा रहा था। वह कपड़े पहिन, तैयार खड़ा था और लिल्ली को कह रहा था कि एक घंटे में लौटकर प्रातःकालीन अल्पाहार करेगा। लिल्ली ने कहा, ''आज मैं अस्वस्थ-सी लग रही हूं। यत्न करूंगी कि तब तक मेज पर बैठने लायक हो सकूं।''

डॉक्टर गया तो विन्सेंट ने मां के चरण-स्पर्श कर माथे को हाथ लगाया। लिल्ली ने जब यह देखा तो उससे पूछने लगी, ''यह क्या कर रहे हो?''

''दादी ने कहा था कि प्रतिदिन ऐसा ही किया करूं तो तुम हृदय से मुझको आशीर्वाद दोगी।''

लिल्ली हंस पड़ी। उसने कहा, ''तो दादी के भी ऐसे किया करो। जब उनसे मिलो तो उनके चरण-स्पर्श किया करो। वे मुझसे भी बड़ी हैं। इसलिये उनका आशीर्वाद मुझसे भी बड़ा होगा।''

''अब जब जाऊंगा तो उनके भी करूंगा।''

: 7 :

एक दिन विन्सेंट काहन की दुकान पर चाट खाने के लिये पहुंच गया। काहन ने उसको देखा और पहचान गया। उसको विदित था कि वह अकेला अपनी दादी से मिलने जाया करता है। इसलिये इस समय उसको अकेला देख विस्मय तो नहीं हुआ। इस पर भी वह उससे पूछने लगा, ''वसंत! तुम्हारी मम्मी और डैडी अब कभी नहीं आते?''

''डैडी मना करते हैं।''

''क्या कहते हैं?''

''कहते हैं कि रोज चाट खाने से पेट खराब रहता है।''

''और कभी-कभी खाने से?''

''कभी-कभी खाने से कुछ नहीं होगा, इसलिये आ गया हूं।''

''डैडी से पूछकर?''

''नहीं, अब मैं बड़ा हो गया हूं। और अब अपनी जेब में से खर्च करूंगा।''

''अच्छा, क्या खाओगे?''

''जो आप बढ़िया समझें।''

काहन ने आज फिर उसे रस मलाई और फिर पानी के बताशे खिलाये। फिर उससे पूछा, ''कुल्फी खाओगे?''

''जी नहीं, पेट भर गया है।''

''अच्छा, कभी-कभी आ जाया करो। तुम्हारी मम्मी कैसी हैं?''

''वे आजकल प्रायः लेटी रहती हैं।''

''तो उनकी तबीयत ठीक नहीं है?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने पूछा था, वे कहती थीं कि ठीक है। उनको औरतों की बीमारी है और वे तीन महीने में ठीक हो जायेंगी।"

"अच्छा वह देखो।"

विन्सेंट ने उधर देखा जिधर काहन के अपने दोनों लड़के खड़े थे। विन्सेंट ने उनको अपनी दादी के घर देखा था परन्तु परिचय नहीं हुआ था। काहन ने भीम को उंगली के संकेत से बुला लिया। भीम आया तो काहन ने उसका परिचय करा दिया। उसने विन्सेंट से कहा, "यह तुम्हारा भाई है, इसका नाम है भीम।"

विन्सेंट ने उठकर भीम से हाथ मिलाया तो भीम बोला, "मैं तुमको जानता हूं।"

"कहां देखा है मुझे?"

"तुम गंगा दादी के पोते हो और तुम्हारा नाम वसंत साहनी है।"

इस समय अर्जुन भी वहां आकर खड़ा हो गया था। उससे भी परिचय हो गया। विन्सेंट जब मिठाई के पैसे देने लगा तो काहन ने नहीं लिये। उसने कह दिया, "तुम भीम और अर्जुन के भाई हो और ये मेरे बेटे हैं। इससे अपने बेटे से पैसे नहीं लिये जाते।"

यहां आने का परिणाम यह हुआ कि विन्सेंट को दो मित्र और मिल गये। तीनों दुकान से निकले तो भीम ने पूछा, "अब किधर जा रहे हो?"

"अपने घर।"

"कहां है तुम्हारा घर?"

"निस्बत रोड पर।"

"हम भी उधर ही जा रहे हैं, वहां से हम चिड़ियाघर जावेंगे।"

"वह तो माल रोड पर है?"

"तो क्या हुआ, इस रास्ते से जाने पर तुमसे बातें करने का मौका मिलेगा।"

विन्सेंट समझ गया कि वे उसके कारण ही उधर जा रहे हैं। इससे घनिष्ठता बढ़ाने के लिए उसने पूछा, "तुम कौन-सी कक्षा में पढ़ते हो?"

"मैं नवीं श्रेणी में पढ़ता हूं।" भीम ने कहा, "और यह अर्जुन सातवीं में।"

"मैं पांचवीं श्रेणी में हूं पर मैं अंग्रेजी तुमसे अधिक जानता हूं।"

"मैं हिन्दी तुमसे अधिक जानता हूं।" भीम ने कहा

"वह क्या होती है?"

"हिन्दुस्तान की भाषा अर्थात् हमारी मातृ-भाषा।"

"कितनी हिन्दुस्तानी पढ़े हो?"

"मैं नौवीं पुस्तक पढ़ता हूं और हिन्दी की कोई भी पुस्तक पढ़कर, मैं उसका अर्थ समझ लेता हूं।"

विन्सेंट ने विस्मय प्रकट करते हुए कहा, "हमारे स्कूल में तो यह पढ़ाई नहीं जाती। हमारे स्कूल में तो एक उर्दू पढ़ाई जाती है, जो दाईं से बाईं ओर को लिखी जाती है।"

"तुम उसकी कौन-सी पुस्तक पढ़ते हो?"

"अभी तो पहली ही पढ़ रहा हूं।"

"मैं अंग्रेजी की बुक ऑफ गोल्डन ऐसेज पढ़ता हूं।"

"ओह! तब तो तुम अंग्रेजी बहुत जानते हो?"

"बहुत तो नहीं, परन्तु हमारे स्कूल में पढ़ाई ही इतनी जाती है।"

"गणित में क्या पढ़ते हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अलजबरा, ज्योमैट्री और गणित की प्रैक्टिस।"

"तुम तो बहुत कुछ पढ़ते हो, परन्तु तुम अंग्रेजी में बात नहीं कर सकते।"

"हां, हमको अभ्यास नहीं है। हम कॉलेज में जाकर अभ्यास कर लेंगे।"

"तुम्हारे डैडी तुमको कितना जेब-खर्च देते हैं।"

"पांच रुपया मासिक।"

"मेरे डैडी मुझे बीस रुपया प्रतिमास देते हैं।"

"क्या करते हो इतने रुपयों से?"

"खाता हूं और कागज, कलम, पैंसिल आदि खरीदता हूं।"

"ये सब चीजें तो हमारे पिताजी हमें खरीद कर देते हैं। पांच रुपये तो वे हमारे अपने खाने-पीने के लिये देते हैं।"

इस प्रकार बातें करते हुए वे अपना परिचय बढ़ा रहे थे। इस समय वे निस्बत रोड पर पहुंच गये। डॉक्टर और लिल्ली कोठी के बाहर खड़े थे। अपने लड़के को दो अन्य लड़कों के साथ देख, डॉक्टर प्रश्न-भरी दृष्टि से उसको देखने लगा। विन्सेंट की इच्छा थी कि वह उनको अपने घर पर चाय पिलाये। अभी-अभी वह उसके पिता की दुकान पर रस मलाई और पानी के बताशे खाकर आया था। भीम और अर्जुन तो वहीं कोठी के द्वार पर से ही विदा मांगने वाले थे। विन्सेंट ने अपने पिता से कह दिया, "ये मेरे मित्र भीम और अर्जुन हैं। मैं इनको चाय पिलाने के लिए लाया हूं।"

"ठीक है, भीतर ले जाओ। फ्लोरा भी वहीं है, उसे भी अपने साथ बैठा लेना।"

"डैडी! आप किधर जा रहे हैं?"

"इनके जाने के बाद तुम अपने स्कूल का काम करना, हम रात के भोजन के समय आयेंगे।"

लिल्ली काहन के लड़कों को पहचानती थी। परन्तु जब उसके पति ने उनका परिचय नहीं पूछा तो उसने भी बताने की जरूरत नहीं समझी।

जब लिल्ली को यह पता चला कि उसका पति उसकी और बच्चों की बातों में अनाधिकार और अयुक्तिसंगत हस्तक्षेप कर रहा है, तो उसने अपने मन की बातें उससे छिपानी आरम्भ कर दीं। साथ ही उसने विन्सेंट को अपनी दादी के घर की बातें अपने पिता को न बताने की राय दी। बलराम का व्यवहार देख, वह इस प्रकार का लुकाव-छिपाव रखना अपना अधिकार मानने लगी थी। उस रात जब वे लौटे तो भीम और अर्जुन जा चुके थे। लिल्ली ने विन्सेंट को अपने पति से पृथक् ले जाकर पूछा, "ये भीम और अर्जुन कहां मिल गए थे तुमको?"

"मैं काहन अंकल की दुकान पर चाट खाने के लिए गया था। ये वहां मिल गये। अंकल ने परिचय कराया तो हम इकट्ठे इधर को निकल आए। अंकल ने मुझसे चाट के पैसे नहीं लिए थे। इस कारण मैंने उनको चाय पिला दी।"

"वे यहां कितनी देर तक रहे थे?"

"साढ़े सात बजे यहां से गए हैं।"

"इतनी देर तक क्या करते रहे हो तुम लोग?"

"कुछ देर तक ग्रामोफोन सुनते रहे और फिर 'स्नेक्स एण्ड लैडर' खेलते रहे थे।"

"कैसे हैं वे लड़के?"

"वे अंग्रेजी नहीं बोल सकते। इस पर भी भीम बहुत अच्छा है। अर्जुन कई बातें नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
समझता।''

''क्या नहीं समझता?''

विन्सेंट ने अपनी मां को बताया नहीं। उसने बात बदलते हुए कहा, ''मैंने उनको फिर किसी दिन आने का निमन्त्रण दिया है।''

''तुमने ठीक किया है। परन्तु मैं तुम को एक बात बताना चाहती हूं। यदि तुम्हारे डैडी को पता चल गया कि तुम काहन अंकल की दुकान पर चाट खाने के लिए गए थे और ये भीम और अर्जुन उनके लड़के हैं, तो वे नाराज हो जावेंगे।''

''तो फिर?''

''यदि तुम उनसे मित्रता करना चाहते हो तो डैडी को मत बताना कि वे किसके लड़के हैं और तुम, उनके पिता की दुकान पर जाते रहते हो।''

लिल्ली की अन्तरात्मा लड़के को झूठ बोलने के लिए कहने पर दुःख अनुभव करती थी। परन्तु एक तो वह समझती थी कि उसका पति इस विषय में मूर्खता कर रहा है और दूसरे वह लड़के में अपना व्यक्तित्व उत्पन्न करने का यत्न करना चाहती थी। अपने विचारानुसार वह लड़के को स्वतंत्र विचार का बना रही थी।

: 8 :

विन्सेंट एक ऐसे स्कूल में जाता था जिसमें लड़के तथा लड़कियां एक ही साथ पढ़ते थे और अभी से वे अपनी बहुत-सी बातें अपने अध्यापकों तथा अभिभावकों से छिपाकर रखने लगे थे। इस आयु में वे अपने संगी-साथियों से जो भी बातें करते थे, उनमें किसी प्रकार का दूषण नहीं होता था। परन्तु योरोपियन और एंग्लो-इण्डियन समुदाय के बच्चों के घरों के वातावरण की परछाईं उनके व्यवहार पर पड़ रही थी। लड़के-लड़कियों का परस्पर का सम्बंध लुकाव-छिपाव का विषय है। यह प्रथम चरण था, उस जीवन में प्रवेश के लिये। अतः जब विन्सेंट को लिल्ली अपने पिता से बात छिपा कर रखने के लिए कहती तो वह समझ जाता कि यह कुछ उसी प्रकार की बात है, जैसी उसके साथी कहा करते थे।

परिणाम यह होने लगा कि विन्सेंट दूसरे-तीसरे दिन भीम और अर्जुन को अपने घर बुलाने लगा और वह प्रायः नित्य अपनी दादी के घर पर जाने लगा। प्रायः वहीं पर काहन के लड़के उसको मिल जाते थे और वहां से वे निस्बत रोड वाली कोठी में चले आते। घंटा-डेढ़ घंटा खेलकर, भीम इत्यादि अपने घर चले जाते। इस समय उनके पिता को रहने के लिए गंगा के मकान के साथ ही एक भाड़े का मकान मिल गया। अपना शहर वाला मकान बेचकर, वह अनारकली में ही अपने लिए नया मकान बनवा रहा था।

विन्सेंट से गंगा अपनी बहू का सुख-समाचार पूछती रहती थी। उसको विदित था कि उसका प्रसव-काल समीप है, इससे वह चिंता अनुभव करती थी। एक दिन विन्सेंट ने अपनी दादी को बताया कि उसकी मां बहुत बीमार है और हाय-हाय करती है। गंगा के पास बैठी काहन की पत्नी सीता भी बातें सुन रही थी। जब विन्सेंट चला गया तो उसने कहा, ''ताई! यदि कहो तो मैं जाकर पता कर आऊं?''

''मुझे तो डर लगता है कि वे लोग कहीं तुम्हारा अपमान न कर दें?''

''डॉक्टर मेरा क्या अपमान करेगा? वह एक कहेगा तो मैं दो सुनाऊंगी।''

''इससे तो व्यर्थ में ही झगड़ा हो जावेगा।''

''झगड़ा तो होगा, यह ठीक है। परन्तु ताई! यह व्यर्थ क्यों होगा? हमारा दिल करता है कि हम लिल्ली बहिन का सुख-समाचार जानें। यह बुरी बात तो है नहीं। इस प्रकार की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात के लिये भी वह झगड़ा करेगा तो करे। किसी ठीक बात के लिए झगड़ा करना व्यर्थ नहीं कहा जा सकता।''

गंगा चुप रही तो सीता अपने घर गई और कपड़े बदल, डॉक्टर बलराम की कोठी पर जा पहुंची। डॉक्टर बलराम बरामदे में बैठा, एक अन्य व्यक्ति से बातचीत कर रहा था। सीता उस ओर नहीं गई। वह कोठी के पिछवाड़े के बरामदे में जाकर खड़ी हो गई। वहां एक नर्स वाश-बेसिन पर हाथ धो रही थी। सीता उसके समीप पहुंचकर पूछने लगी, 'कैसी है लिल्ली बहिन?''

नर्स ने ध्यान से सीता की ओर देखा। उसके विस्मय को जान, सीता मुस्करा रही थी। वह नर्स पिछले एक मास से लिल्ली की सेवा में थी और उसने सीता को इससे पूर्व कभी नहीं देखा था। फिर कुछ विचार कर नर्स ने कहा, ''ऑपरेशन कामयाब हो गया है, परन्तु अभी अचेत है। लड़का हुआ है और वह ठीक है।''

Central Library
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
167960

''मैं उसको देखने के लिए जाऊं?''

''तुम कौन हो?''

''मैं डॉक्टर साहब के परिवार की एक औरत हूं। मुझको अभी पता चला है कि लिल्ली बहिन बहुत बीमार है।''

''परन्तु, डॉक्टर तो कहता था कि उसके परिवार में कोई भी स्त्री जीवित नहीं है।''

सीता ने मुस्कराते हुए कहा, ''वह हमसे लड़ा हुआ है। इससे वह हमें मरा हुआ ही समझता है। परन्तु सिस्टर! हम तो ऐसा नहीं समझते।''

''अच्छा, तुम उसको देखने जा सकती हो, परन्तु जल्दी बाहर आ जाना। कहीं डॉक्टर भीतर आ गया तो फिर हमसे झगड़ा करेगा।''

सीता भीतर चली गई। लिल्ली पीत-मुख, बिस्तर पर पड़ी थी। उसके शरीर पर सफेद चादर पड़ी थी। केवल मुख खुला हुआ था। सीता उसके पलंग के समीप जा, उसके सिरहाने की ओर खड़ी हो गई। लिल्ली अभी भी अचेत ही थी। समीप बैठी लेडी डॉक्टर ने कहा ''बच गई है। होश में आने में अभी तीन-चार घंटे लगेंगे।''

इस समय डॉक्टर बलराम उसी आदमी के साथ, जिससे वह बाहर बरामदे में खड़ा बातें कर रहा था, भीतर आ गया। साथ वाला आदमी भी डॉक्टर था और जाने से पूर्व वह रोगी की अवस्था देखने के लिए आया था। बलराम ने ऑपरेशन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया था। इस पर भी वह देख रहा था कि डॉक्टर और दूसरे लोग भी उससे राय करके ही सब-कुछ कर रहे थे।

दूसरा डॉक्टर तो लेडी डाक्टर से बातें करने लगा और बलराम लिल्ली के समीप आकर खड़ा हुआ तो वहां किसी हिन्दुस्तानी औरत को खड़ी देख, विस्मय करने लगा। सीता लिल्ली की ओर देख रही थी। वह समझ रही थी कि डॉक्टर उसकी ओर विस्मय से देख रहा है और वह उसको पहचानने का असफल प्रयत्न कर रहा है।

सीता ने भी डॉक्टर को पहली बार देखा था, परन्तु वह उसकी रूप-रेखा के विषय में सुन चुकी थी। इस कारण वह तो पहली नजर में ही जान गई थी कि यह बलराम है। सीता ने निश्चय किया हुआ था कि वह स्वयं कुछ नहीं बोलेगी। केवल यदि उसने कुछ पूछा तो उसको उत्तर-मात्र देगी।

एक मिनट तक वहां खड़े रहकर, उसने वहां से चला जाना उचित समझा। वह जो कुछ जान सकती थी और जानने योग्य था, जान चुकी थी। इससे वह चुपचाप कमरे से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलने के लिये घूमी तो बलराम ने साथ चलते हुए पूछ लिया, "आप कहां से आई हैं?"

"अपने घर से।" सीता ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।

डॉक्टर भी मुस्कुरा पड़ा। सीता कमरे के बाहर आ गई थी, डॉक्टर उसके साथ-साथ था। वह कहने लगा, "यह तो मैं जानता हूं, परन्तु आपका घर कहां है? मैंने आपको यहां पहले कभी नहीं देखा।"

"वह इसलिए कि आप अपने हिन्दुस्तानी सम्बन्धियों से मेल-मुलाकात रखना पसंद नहीं करते। मैं तो लिल्ली बहिन का समाचार लेने आई थी।"

"परन्तु, आपको किसने बताया था कि वह बीमार है।"

"इस बीमारी का तो, गिनती के दिनों से पता चल जाता है। हां, इस ऑपरेशन की बात का पता नहीं था, वह यहीं आकर पता चला है।"

"क्या मैं आपका नाम-धाम जान सकता हूं?"

"जी, रिश्ते में आपकी भाभी लगती हूं। अनारकली बाजार में जो चाट-मिठाई की दुकान है न? मैं उनके घर से हूं।"

"ओह! आप मिसेज काहनचन्द हो? तो ठहरिए! मैं जरा डॉक्टरों को विदा कर लूं। फिर आपसे कुछ पूछना है। काहन भैया से मिले बहुत दिन हो चुके हैं।"

"हां, मैं यहां खड़ी हूं, आप इनसे निबट लीजिये।"

"वहां नहीं। इधर बैठने के कमरे में आ जाइये।"

वह उसको ड्राइंग-रूम में ले गया। वहां सीता को बैठा, बलराम दूसरे डॉक्टर और लेडी डॉक्टर के पास चला गया। वे लिल्ली की अवस्था से संतुष्ट थे। वे गये तो डॉक्टर नर्स को लिल्ली के सचेत होने के समय सावधान रहने की बात कह, बैरे को ड्राइंग-रूम में चाय लगाने के लिये कहने चला गया।

वहां से वह अपने कमरे में गया और फिर क्लिनिक में से होता हुआ ड्राइंग-रूम में जा पहुंचा। वहां सीता विन्सेंट से बातें कर रही थी। बलराम आया तो विन्सेंट वहां से खिसक गया।

सीता जानती थी कि विन्सेंट अपने पिता से चोरी-चोरी अपनी दादी से मिलने जाया करता है। डॉक्टर बलराम ने सीता से पूछा, ""यह क्या कह रहा था?"

"मैं इससे परिचय कर रही थी। मैंने इसको दुकान पर मिठाई खाने के लिये आने का निमन्त्रण दे दिया है।"

"यह तो बहुत मजा रहेगा। मुझे निमंत्रण नहीं दोगी भाभी?"

"ऊं हूं, आप बड़े हैं, पहले आप निमंत्रण दें, तभी हम दे सकेंगे।"

"अच्छा, जरा लिल्ली को ठीक हो जाने दो, तब आप सबको निमंत्रण दूंगा।"

"सब को? क्या मतलब?"

"सुना है, आपके बच्चे भी हैं। कितने हैं?"

"तीन, दो लड़के और एक लड़की।"

"सबसे मेरा अभिप्राय उनसे ही था।"

"और उनके पिता से नहीं, उन बच्चों की दादी और दादी की बहिन से नहीं?"

"बच्चों की मां को देखा है। इसलिए उसको और उसके बच्चों के लिये तो मन में इच्छा होने लगी है। अन्य को तो देखने के बाद ही बता सकता हूं।"

"अपनी माताजी को भी देखा है अथवा नहीं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलराम इस तर्क पर चुप रह गया। वह समझ गया कि वह तो बुद्धू ही है। फिर साहस करके बोला, ''मां को देखा है। वे तो मां हैं। भाभी युवा हैं और उनकी आंखों में प्रेम और सहानुभूति की लाली है। इस कारण, मां और भाभी की तुलना नहीं की जा सकती।''

''यह तो ठीक है···· ।''

बलराम ने बात बीच में ही काट कर कहा, ''मैं तो ठीक बात ही कह रहा हूं। मां में वह आकर्षण नहीं जो भाभी में है। अभी तो आप कुछ दिन तक लिल्ली को देखने के लिए आया ही करेंगी। आशा है, तब तक भाभी का वास्तविक परिचय भी मिल जावेगा। और फिर निमंत्रणों की आवश्यकता नहीं रहेगी।''

''और मैं, यह पूछ रही थी···· ।''

इस समय बैरा चाय ले आया। सीता ने कहा, ''मैं तो चाय घर से पीकर आई हूं।''

''एक प्याला और पीने से क्या हो जायेगा? ले लीजिए।''

''वह तो तभी पिऊंगी, जब लिल्ली बहिन ठीक होकर, हमारे साथ बैठकर चाय पीने लायक हो जायेगी।''

''वह ठीक हो जायेगी। सब डॉक्टरों की यही राय है। तब तो बहुत शानदार पार्टी दूंगा। इस समय तो यह केवल चाय ही है।'' इतना कह, बलराम ने अपने और सीता के लिए चाय बना दी।

चाय का प्याला सीता के सामने रखते हुए बलराम बोला, ''आपकी दुकान की चाय की तुलना में यह कैसी है, जरा पीकर तो बताइये?''

विवश सीता को चाय पीनी पड़ी। और फिर जाने से पूर्व वह एक बार पुनः लिल्ली के कमरे में गई। उसको अभी भी अचेत देख, वह अपने घर को चल दी।

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय परिच्छेद

सीता ने जब अपने पति को डॉक्टर बलराम के साथ हुए वार्तालाप से अवगत किया तो वह भौंचक्का रह गया। सीता मुस्करा रही थी। आखिर काहन ने पूछा, "तो वह बहुत अच्छा लगा है तुमको?"

"क्यों, इसमें संदेह है क्या? यदि आप उसकी पत्नी के रूप-लावण्य की प्रशंसा नहीं कर सके तो मैं क्या करूं? डॉक्टर आपसे तो अधिक रूपवान प्रतीत होता है।"

"तो ऐसा करना, कल तुम अपने होठों पर थोड़ी सुरखी और मुख पर पाउडर लगा कर जाना। इससे तुम्हारा मूल्य बढ़ जावेगा।"

"पाउडर-सुर्खी तो वे लगाया करती हैं, जिनका अपना रूप घटिया हो। यहां तो बिना इसके ही पसंद कर ली गई हूं।"

"परन्तु, सीता! तुम्हारी जेठानी तो सुर्खी और पाउडर लगाने के बाद भी तुमसे घटिया ही प्रतीत होती है। कम-से-कम डॉक्टर की दृष्टि में तो ऐसा ही होगा, तभी तो उसने लिल्ली से तुम पर उपमा दी है।"

"लेकिन आपको मेरी तुलना में वह कैसी लगती है?"

"मुझे यदि वह तुमसे बढ़िया प्रतीत हुई होती, तो मैं उसके घर वाले से चोरी-चोरी उसकी प्रशंसा में उससे बातें करता। पाउडर-सुर्खी लगाने के बाद भी तुम्हारी तुलना में अभी तक तो वह जंची नहीं। आगे की बात कह नहीं सकता।"

"और मैं कहती हूं कि आपका पढ़ा-लिखा मित्र, आपसे अधिक बुद्धू है।"

"तुम्हारे कहने का अभिप्राय यह है कि बुद्धू तो मैं भी हूं। हां, वह मुझसे कुछ अधिक है।"

"बुद्धू तो सब पुरुष होते हैं, किन्तु आपके मित्र की अपेक्षा आप में यह गुण कुछ कम मात्रा में है। इस पर भी अभी आपकी परीक्षा नहीं हुई। इससे अभी तो आपके विषय में यही कहा जा सकता है।"

"औरतों के विषय में तुम्हारा क्या विचार है। वे तो देवी सरस्वती हैं न?"

"जी नहीं! यद्यपि उनमें कुछ देवियां भी हैं। इस पर भी मैं यह देख रही हूं कि एक साधारण औरत तनिक-सी भी मुस्करा दे, तो विद्वान-से-विद्वान पुरुष मूर्ख बन जाता है।"

"और यदि कोई देवी मुस्कुरा दे तो क्या होता है?"

"तब तो पुरुष की सात पीढ़ी तर जाती हैं।"

"तो मेरी सात पीढ़ी तर गई होंगी?"

"क्यों, कौन देवी आपको मुस्कराती हुई मिली है?"

"एक थी सीता देवी।"

"किन्तु, वह देवी है क्या?"

"मैं तो यही समझता हूं।"

"तब तो ठीक है, आपका कुल तो तरेगा ही। देखना तो यह है कि उसकी मुस्कान से आपके उस बुद्धू मित्र का भी कुल तरता है अथवा नहीं!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार बात हंसी में टल गई। काहन के मन में अपने मित्र के लिये मान कम हो गया और सीता के विषय में भय समा गया। यह तो उसके मन में कभी नहीं आया कि सीता अनिष्ठावान पत्नी होगी। भय था तो केवल इस बात का कि अंग्रेजी-सभ्यता का पुजारी डॉक्टर बलराम, कहीं बल प्रयोग न करने लग ज़ावे। वह यह चाहता था कि सीता को उसके घर जाने से मना कर दे।

अगले दिन जब सीता जाने लगी, तो उसने पूछ लिया, "मैं चलूं तुम्हारे साथ?"

"मैं ताई जी के साथ जा रही हूं।" यह कहती हुई सीता हंस पड़ी। "अभी एक-दो दिन बाद जाइयेगा, अभी आप लिल्ली के दर्शन नहीं कर पायेंगे।"

"मैं लिल्ली के दर्शनों की लालसा नहीं रखता।"

"बीमार तो वही है न? हम भी तो उसी को देखने जा रहे हैं।"

"मैं तो वहां के एक पशु की बात सोच रहा था।"

"उसको हांकने की क्षमता मुझ में है। यह मैं आपकी सहायता के बिना भी कर लूंगी।"

"अच्छी बात है।"

इस पर भी काहन को चिंता लगी रही। जब तक सीता वापस नहीं आई, तब तक वह दुकान पर नहीं गया। वह जब आई तो पूछने लगी, "आप दुकान पर नहीं गये क्या?"

"मैं तुम्हारे आने की प्रतीक्षा कर रहा था। कैसी है अब लिल्ली?"

"बहुत खूब! चिंता हो रही थी मेरी और पूछा जा रहा है लिल्ली के विषय में? मैं समझती हूं कि अब आपमें भी बुद्धूपन का रंग भरता जा रहा है।

"लिल्ली ठीक ही प्रतीत होती है। कुछ ज्वर हो गया है, वैसे वह हिल-डुल नहीं सकती।"

"बच्चा कैसा है?"

"आपकी भांति गोल-मटोल है। मैंने आपके मित्र को भी यही बताया तो वह कहने लगा कि उसे पहले से ही संदेह हो रहा था।"

"क्या संदेह हो रहा था?"

"यही कि वह बच्चा आपका है।"

"वह महा-मूर्ख है।"

"कल मैंने बताया तो था कि आपसे कुछ अधिक ही है।"

"भला, इसमें मैं कहां से आ गया?"

"आपको भी तो अपनी पत्नी की निष्ठा पर विश्वास नहीं रहा न?"

"नहीं रानी! मुझे अपने मित्र की भलमनसाहत पर विश्वास नहीं रहा। वह बलात्कार भी तो कर सकता है।"

"इसीलिए तो कहती हूं कि आपमें छिपा हुआ बुद्धूपन अब उभरने लगा है। भला किसी भी सती-साध्वी स्त्री पर कोई बलात्कार कर सकता है? कभी करके देख लीजिये, आपको विदित हो जावेगा।"

"एक सती-साध्वी तो सामने बैठी बात कर रही है, उससे तो कभी बलात्कार करने की आवश्यकता पड़ नहीं सकती। तो क्या इसके लिए कोई अन्य ढूंढनी पड़ेगी?"

"परीक्षा करने के लिए तैयार रहिये, कोई-न-कोई तो मिल ही जावेगी।"

काहन खिलखिलाकर हंस पड़ा। सीता बोली, "ताई जी वहीं रह गई हैं। डॉक्टर तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कहता रहा कि उनकी वहां आवश्यकता नहीं है। वे चली जावें। इस पर ताई जी ने उसको डांट दिया और कहने लगीं कि वे उसका एक पैसा भी खर्च नहीं होने देंगी। वे अपने सौ रुपयों में से ही अपना गुजारा करेंगी। उसको भले ही उनकी आवश्यकता न हो, किन्तु किसी को उनको आवश्यकता है, इसके लिए वे यहां रुक रही हैं।

"डॉक्टर पूछने लगा कि उनको किसकी आवश्यकता है? ताईजी ने बताया कि उसकी संतान की। वे देखना चाहती हैं कि उनकी मां बनी रहे और वे मां की वात्सल्यता से पोषित होते रहें।

"डॉक्टर कहने लगा वह बनी रहेगी। बिना उसकी सहायता के भी बनी रहेगी। ताई जी कहने लगीं वह उसके शरीर की बात कर रहा है, वे उसकी आत्मा की बात कर रही हैं। उन्होंने कहा कि वे देख रही हैं कि उसके व्यवहार से उसकी आत्मा मर रही है।

"इससे डॉक्टर गम्भीर विचारों में डूब गया। कुछ देर तक विचार कर कहने लगा कि कभी वह लिल्ली को हमारे सम्पर्क में आने पर मना करता रहता था, किन्तु अब वह लिल्ली में रुचि नहीं रखता, इसलिए वे उसके पास रह सकती हैं।

"ताई कहने लगीं कि वे समझती हैं कि वह वास्तव में अब उसका हित करने लगा है। फिर तो ताई जी ने अपनी रामायण, तुलसी की माला, चटाई आदि आवश्यक वस्तुएं मंगवा लीं। मैं यह सब लेकर अभी फिर वहीं जा रही हूं।"

"डॉक्टर ने बताया नहीं कि उसकी लिल्ली में किस कारण अरुचि हो गई है?" काहन ने पूछा।

"स्पष्ट तो उसने बताया नहीं। परन्तु मेरा और ताई का अनुमान भिन्न-भिन्न है। मैं तो समझी थी कि उसको अपने दूसरे पुत्र की आकृति आपसे मिलती प्रतीत हो रही है, इस कारण उसे लिल्ली की निष्ठा पर संदेह होने लगा है। परन्तु ताई जी ने कहा है कि जो नर्स लिल्ली की सेवा कर रही है, वह इसका कारण है। बच्चे की बात तो लिल्ली को घर से निकालने के लिए एक बहाना मात्र है।"

"नर्स कब से है वहां?"

"एक मास हो गया है।"

"मैं भी यही समझता हूं कि ताई जी का अनुमान ठीक है।"

"मुझको इस अनुमान में संदेह इसलिये है कि डॉक्टर मुझ पर लट्टू हो रहा है।"

"क्यों, आज फिर कोई बात हुई है क्या?"

"जी, ताईजी तो लिल्ली के पास थीं और नर्स प्रातः का अल्पाहार करने गई हुई थी। डॉक्टर ने मेरे लिए डाइनिंग हॉल में चाय का प्रबन्ध कर दिया। मैंने आज मना नहीं किया। इससे उसे प्रसन्नता हुई। फिर मुझसे कहने लगा कि यदि मैं रात को लिल्ली के पास रह जाऊं तो लिल्ली को बहुत प्रसन्नता होगी।

"मैंने कहा कि ताईजी को यहां रहने के लिए कहो। वह कहने लगा कि उसने कल भी कहा था कि मेरी ताईजी में तनिक भी रुचि नहीं है। इस पर मैंने कह दिया कि वह रुचि की बात कर रहा है अथवा लिल्ली की प्रसन्नता की? वह कहने लगा कि उसे प्रसन्न देखकर ही लिल्ली को प्रसन्नता होती है।

"मैंने कहा, वह कह तो ठीक रहा है, किंतु मुझे भी किसी अन्य की प्रसन्नता का विचार करना है। वह आपका नाम लेने लगा तो मैंने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"वह आश्चर्य दिखाता हुआ बोला कि एक अनपढ़, चाट-पकौड़ी बेचने वाले की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तुलना, एक डॉक्टर, जो तीन-चार हजार रुपया अर्जन करता है, से करके में अपना मूल्य कम नहीं कर रही हूं क्या?

''मैंने जब पूछा कि भला मेरी कीमत क्या है? तो वह कहने लगा कि एक सहस्र रुपया प्रति मास। मैंने उसकी प्रशंसा करते हुए कह दिया, आप तो वास्तव में एक अच्छे पारखी हैं। आपका प्रस्ताव विचारणीय है। परन्तु क्या मुझे इस घर में स्थायी स्थान मिल जावेगा?

''वह कहने लगा कि हां, यदि मैं भल्ले-पकौड़ी वाले का घर छोड़ दूं तो मिल जावेगा। जब मैंने पूछा कि लिल्ली का क्या होगा तो कहने लगा कि यदि वह नौकरानी बनकर रहना पसंद करेगी तो रहेगी। मैंने कहा, इससे तो उसकी, मेरी और चाट वाले की बहुत बदनामी होगी। वह कहने लगा कि उसकी तो मैं चिंता न करूं। मेरी नेकनामी ही होगी और चाट वाले को तो वह लात मारकर निकाल देगा।

''मैंने कहा, इससे झगड़ा होगा और चाट वाला उसके पेट में छुरा घोंप देगा। वह कहने लगा कि उसे फांसी का डर नहीं होगा क्या? मैंने कहा, फांसी जब होगी तब होगी, किन्तु उसका तो काम तमाम हो ही जावेगा। लिल्ली भी विधवा हो जायेगी, इससे उसको उसकी सारी सम्पत्ति मिल जावेगी और फिर मैं निस्सहाय रह जाऊंगी। धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का, वाला हिसाब होगा।

''वह पूछने लगा कि इस सबसे बचने के लिए मुझे कितना कुछ मिल जाना चाहिए? मैं कुछ जवाब देती कि इतने में नर्स वहां आ गई। वह डॉक्टर से कहने लगी कि वह बूढ़ी औरत रोगी की देख-भाल कर लेगी क्या? डॉक्टर ने जब इसका कारण पूछा तो वह कहने लगी कि वह स्वयं थकी हुई है, इस कारण विश्राम करना चाहती है। डॉक्टर ने उसे आराम करने के लिए कह दिया।

''मैं भी वहां से उठी और लिल्ली के कमरे में आ गई। लिल्ली ताईजी को धीरे-धीरे कुछ बता रही थीं। मैं वहां से आने की तैयारी में थी कि डॉक्टर आ गया और ताईजी ने उसके सम्मुख अपने वहां रह जाने का प्रस्ताव रख दिया। मेरे विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब डॉक्टर सहज ही मान गया।

''इस पर ताईजी मुझको उनके घर से लाने वाली वस्तुओं को बताने के लिए बरामदे में ले आईं। उन्होंने वस्तुएं बताईं तो मैंने डॉक्टर की लिल्ली में अरुचि की बात चला दी। किन्तु अभी ताईजी को मैंने वह बात नहीं बताई है, जो डॉक्टर ने मुझसे मेरे विषय में की थी।''

: 2 :

सीता ने वह सब सामान जो गंगा ने मंगवाया था, भीम के हाथ उसके पास भेज दिया। उसने भीम को कहा, ''देखो यह सब सामान 12 नम्बर निस्बत रोड में जाकर ताईजी को दे आओ।''

भीम स्कूल में छुट्टी हो जाने के कारण ग्यारह बजे ही आ गया था। उसे देख, सीता को विचार आया कि कोठी का नम्बर बता, उसको तांगे में भेज दिया जाय तो ठीक रहेगा। डॉक्टर को स्वाद आ जावेगा। जब भीम को नम्बर बताया गया तो वह बोल उठा, ''वसंत की कोठी में?''

''हां, तुम्हें पता है?''

''हां, मैं दूसरे-तीसरे दिन वसंत के साथ वहां जाया करता हूं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"ठीक है। यह सामान वहां ले जाना है।"

भीम तांगे में सामान लेकर वहां जा पहुंचा। डॉक्टर कोठी के बरामदे में बैठा, सीता के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। इस समय विन्सेंट के मित्र को वह बिस्तर और बर्तन लिए तांगे में आते देख, लपककर पिछले बरामदे में जा पहुंचा, जहां भीम तांगे से सामान उतार रहा था। नर्स वहां पहले से ही विद्यमान थी। बलराम ने उसके पास जाकर पूछा, "यह किसका सामान है?"

"ताई जी का।"

"कौन ताई जी?"

"विन्सेंट की दादी जी।"

"तुम उसके क्या लगते हो?"

"मेरी भी वे दादी होती हैं।"

"कब से?'

भीम विचार करने लगा कि इस प्रश्न का क्या अर्थ हो सकता है। फिर कुछ विचार कर वह बोला, "सर! पता नहीं। मेरे जन्म के पहले से ही वे दादी रही हैं। कहिये तो मैं अपने पिताजी से पूछ आऊं?"

"तुम्हारे पिताजी का क्या नाम है?"

"काहनचन्द।"

"ओह!" आश्चर्यवत् बलराम देखता रह गया। फिर बोला, "तुम काहन चाट वाले के लड़के हो?"

"जी।"

"यह सामान तुम्हारी माताजी ने भेजा है?"

"जी।"

"वे स्वयं क्यों नहीं आयीं?"

"वे पिताजी के लिए भोजन बना रही हैं।"

"वे भोजन स्वयं ही बनाती हैं क्या?"

"जी।"

"घर में नौकर आदि नहीं है?"

"घर की सफाई और चौका-बासन के लिए नौकर है।"

"ठीक है, तुम्हारी दादीजी भीतर हैं, उनसे पूछ आओ कि सामान कहां रखना है।"

भीम लिल्ली के कमरे में चला गया। नर्स पूछने लगी, "यह क्या झगड़ा हो रहा है?"

"कुछ नहीं, तुम्हारे लिए स्थान बन रहा है।"

"डॉक्टर! सावधानी से बात किया करो। वह बुढ़िया भयानक औरत है।"

"क्या किया है उसने?"

"औषध् देने से पहले उसने नुसखा देखने के लिए मांगा था। मैंने नुसखा दिया तो वह उसने जेब में रख लिया और दवाई सामने रखवा दी। वह उसने देने नहीं दी।"

"क्या मतलब है इसका?"

"यही कि उसको औषध् पर संदेह है। मेरे कहने पर कि औषध् लेने का समय हो गया है, लिल्ली कहने लगी कि अभी उसकी तबियत नहीं करती, वह थोड़ी देर से ले लेगी। लिल्ली के लिए पौरेज भी उस बुढ़िया ने अपने हाथ से बनाया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सत्य ! तो उसको हम पर संदेह हो गया है ?"

"हां, लिल्ली उसे बहुत बातें करती रही है ।"

"तो लिल्ली ने कुछ बताया होगा ।"

"मैं कहती थी न, उससे सावधान रहना चाहिए ।"

"सावधान तो हम थे ही । परन्तु संदेह हो जाना स्वाभाविक ही है । औरतों का तो यह स्वभाव ही है ।"

"ऐसी अवस्था में मैं यहां नहीं रह पाऊंगी । इस बुढ़िया को निकालना होगा ।"

इस समय भीम कमरे से निकला और तांगे में, जिसमें सामान लाया था, सवार हो अपने घर की ओर चल दिया । इस पर दोनों भीतर गये तो बलराम ने लिल्ली से पूछा, "औषध् ले ली है ?"

"आज मेरी औषध् लेने में रुचि नहीं है । लूंगी तो कै हो जावेगी और डॉक्टर कह गया है कि उल्टी होने से घाव के टांके खुल जाने का डर है ।"

"कहां है औषध् ?"

"मांजी ने कहीं रख दी है ।"

इस पर नर्स डॉक्टर की ओर अर्थ-पूर्ण दृष्टि से देखने लगी तो डॉक्टर ने पूछा, "मां कहां है ?"

"अपने लिए खाना बनाने गयी हैं ।"

"खाना कहां बनायेंगी ?"

"अपने कमरे के एक कोने में मेज पर स्टोव रख कर दलिया बना रही हैं ।"

बलराम मां के कमरे में चला गया । नर्स लिल्ली के पास बैठ कर कहने लगी, "औषध् खा लेनी चाहिए थी । बिना उसके ज्वर किस प्रकार कम होगा ?"

"एक दिन कम न हुआ तो न सही, किन्तु उल्टी होने से तो अधिक हानि होने की सम्भावना है ।"

"अच्छा कुछ देर बाद ले लेना ।"

"हां, यदि इच्छा हुई तो ले लूंगी ।"

इतने में बलराम आया और कहने लगा, "नर्स ! उस औषध् को ढूंढो ।"

"क्यों ?"

"मां कहती है कि यहीं कहीं रखी हुई है ।"

नर्स ढूंढने लगी तो लिल्ली ने कहा, "फिर ढूंढ लेना । अभी मैं सो रही हूं, पर्दा डाल दो ।"

पर्दे डाल दिए गये और डॉक्टर तथा नर्स कमरे से बाहर चले गये । लिल्ली सोने का बहाना करने लगी ।

दो घण्टे बाद फिर भीम आया और लिली के कमरे के बाहर बैठी नर्स से पूछने लगा, "दादीजी कहां हैं ?"

"पिछवाड़े के तीसरे कमरे में बैठी हुई हैं ।"

भीम उधर ही चला गया । गंगा ने उसे कमरे के भीतर बुला, कमरे का द्वार भीतर से बंद कर लिया । फिर पूछने लगी, "क्या हुआ ?"

"मैं अपने पिताजी को साथ लेकर ई० प्लौमर की दुकान पर गया था । पिताजी ने वहां दवा दिखाई तो कम्पाउण्डर ने बोतल का लेबल देखकर नुसखा देखा और कह दिया कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
यह वह दवा नहीं है, जो प्रातःकाल यहां से गई थी। इस पर कम्पाउण्डर पिताजी को भीतर मैनेजर के पास ले गया। आधे घंटे में पुलिस आ गई और पिताजी के बयान लिख लिए। मेरे भी बयान हो गये हैं। दवा को सील कर, पुलिस ले गई है। मैं नई दवा ले आया हूं। वह दवा लाल रंग की थी और यह तो सफेद है।

"पिताजी ने कहा है कि दवा में विष था। इस कारण उन्होंने, यह कहकर मुझे भेजा है कि मैं आपको सब-कुछ बता दूं।"

गंगा नहीं जानती थी कि बात इतनी दूर तक पहुंच जावेगी। उसने तो भीम को यह कह कर भेजा था कि वह काहन को कहकर दवाई की कम्पनी से पता करे कि यह दवा नुसखे के अनुसार है अथवा इसमें कुछ भूल हो गई है।

लिल्ली को संदेह हुआ था। जब चपरासी दवा बनवाकर लाया था तो उसने दवा देखी थी। उसका रंग पानी के समान श्वेत था। नर्स उस बोतल को लेकर उसकी सील खोलने के बहाने बाहर डॉक्टर के क्लिनिक में ले गई। डॉक्टर उस समय बाथ-रूम में था। दस मिनट बाद नर्स जिस दवा को लेकर आई, उसका रंग गुलाबी था।

डॉक्टर और नर्स के अनुचित सम्बन्धों के विषय में लिल्ली को संदेह तो कई दिनों से था, अब इस घटना से तो वह डर गई और दवा न लेने के लिए बहाना बनाने लगी। डॉक्टर ने कहा था कि भोजनोपरान्त दवा लेनी चाहिए। लिल्ली ने कह दिया कि उसकी भोजन में ही रुचि नहीं है। वह कुछ खायेगी तो उसको उलटी हो जावेगी, इससे औषधि में विलम्ब होने लगा। भाग्य से गंगा और सीता आ गईं। तब नर्स को लिल्ली ने अल्पाहार लेने के लिए भेज दिया। बलराम संकेत से सीता को ड्राइंग-रूम में ले गया और लिल्ली को अवसर मिला, तो उसने अपना संदेह अपनी सास पर प्रकट कर दिया। गंगा ने कह दिया कि वह अब यहां से जायेगी ही नहीं और लिल्ली को जो कुछ भी खाना-पीना हो वह उसके हाथ से ही ले।

जब भीम गंगा का सामान लेकर आया तो उसने दवाई और नुसखा उसको देते हुए कहा कि अपने पिता को भेजकर वह पता लगाये कि दवा नुसखे के अनुसार बनी है अथवा नहीं। गंगा का विचार था कि रंग देखकर ही वे बता देंगे कि दवा ठीक बनी है अथवा नहीं।

भाग्यवश कम्पनी के कम्पाउण्डर को स्मरण था कि प्रातःकाल उसने उस नुसखे की दवाई बनाई थी और उसका रंग पानी के समान ही था। उसको संदेह हो गया कि किसी ने उसकी कम्पनी को बदनाम करने के लिए दवाई में गड़बड़ कर दी है। वह उस दवाई को मैनेजर के पास ले गया। मैनेजर को भी उस पर संदेह हुआ तो उसने दुकान के पिछवाड़े भंगियों के कुत्ते को मधु मिलाकर थोड़ी दवा चटाई तो वह तड़फड़ाने लगा और दस मिनट के भीतर ही उसका शरीर शांत हो गया।

काहन यह सब नाटक देख रहा था। मैनेजर ने उससे पूछा, "पुलिस में रिपोर्ट कर दूं?"

"जरूर करनी चाहिए। यह तो भारी अपराध किया गया है।"

मैनेजर ने फोन किया तो थानेदार और मजिस्ट्रेट वहीं आ गये। काहन के बयान हुए और फिर भीम के भी बयान हुए। दोनों ने सत्य-सत्य बात बता दी।

भीम ठीक दवाई बनवाकर निस्बत रोड पर जाने लगा तो काहन ने समझा दिया कि वह ताईजी को सब बात बता दे।

: 3 :

जब भीम ने दवाखाने वाली सारी बात गंगा को बताई, तो उसके पांव तले से मिट्टी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
खिसकने लगी। वह विचार करने लगी थी कि अभी कुछ ही क्षणों में पुलिस कोठी में आकर यहां जांच-पड़ताल करने लगेगी। उसको पूर्णरूप से संदेह था कि यह सब नर्स की करतूत है। इस कारण उसके मन में आया कि बलराम को सतर्क कर दे, जिससे वह किसी प्रकार का गलत बयान न दे बैठे।

उसने भीम को तो विदा कर दिया और स्वयं बलराम को ढूंढने चल पड़ी। बलराम और नर्स ड्राइंग-रूम में बैठकर बातें कर रहे थे। इस समय बच्चे के रोने का शब्द हुआ, तो गंगा ने नर्स से बच्चे को देखने के लिए कह दिया।

नर्स उठकर प्रसूतिका-गृह में चली गई। गंगा ने बलराम को कहा, "बलराम! इस नर्स ने तो लिल्ली की औषध् में विष मिला दिया था। वह औषध् पुलिस के पास चली गई है। सम्भवतया शीघ्र ही पुलिस यहां जांच के लिए आवेगी।"

"किसने दी है पुलिस में?"

"मैंने वह औषध् दवा की कम्पनी में भेजी थी, यह जानने के लिए कि उसका रंग ठीक है अथवा नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि कम्पनी वालों को संदेह हो गया और उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट कर दी है।"

"बहुत बुरा किया है मां तुमने! मैं तो फांसी पर लटक जाऊंगा।"

"तो यह तुमने किया है?"

"हां।"

"यह नर्स का काम नहीं था?"

"वह सर्वथा बेकसूर है।"

"लिल्ली को नर्स पर संदेह था, उसने कम्पनी से आते समय दवा का रंग देखा था, नर्स उसको लेकर सील खोलने गई। जब वह वापस लाई, तो उसका रंग बदला हुआ था। इसी से उसने दवाई ली नहीं। उसने मुझे कहा, तो मैंने दवाई भीम के हाथ दवाखाने में भेज दी।"

एकाएक बलराम उठा और क्लिनिक की ओर जाने लगा तो पुलिस और मजिस्ट्रेट वहां आ धमके। बलराम को क्लिनिक की ओर जाने से रोक दिया गया। क्लिनिक के पास प्रहरी बैठा दिया गया।

बलराम से पूछा गया तो उसने स्पष्ट कह दिया कि उसने ही औषध् में विष मिलाया है।

"क्यों?"

"मैं अपनी पत्नी से ऊब चुका हूं और उससे छुट्टी पाना चाहता हूं।"

"कौन-सा विष दिया था?"

"मेरे क्लिनिक में कई हैं। आधी औषधि सिंक में उड़ेलकर उसमें कई विष मिला दिये। उस समय मेरा मस्तिष्क ठीक काम नहीं कर रहा था और मैंने क्या-क्या मिलाया यह मुझे स्मरण नहीं।"

इस पर गंगा के बयान हुए। उससे पूछा गया, "आप डॉक्टर की क्या लगती हैं?"

"मां।"

"यह बोतल आपने ही दवाईखाने में भिजवाई थी?"

"जी।"

"किसलिए?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अपना दोष किसी और के जिम्मे लगाने के लिए। मैं आज प्रातः काल ही बहू की बीमारी की बात सुनकर यहां आई थी। मैं आई तो नर्स क्लिनिक में दवाई की बोतल की सील तोड़ रही थी। मैं उससे बहू का हाल जानना चाहती थी। इस समय प्रसूति-गृह में बच्चे के रोने का शब्द हुआ, नर्स खुली बोतल छोड़कर बच्चे को देखने चली गई।

"मैं बहू से बहुत तंग आ गई थी। बहू ने लड़के को मेरे विरुद्ध कर रखा था। पिछले साढ़े सात वर्ष से लड़का मुझसे लड़ता रहा है और दिन-प्रतिदिन मेरे विरुद्ध होता जा रहा है। मैंने उसका काम तमाम करने के लिए एक बोतल से, जिस पर 'पाइजन' लिखा था, कुछ बूंदें डाल दीं। फिर उसे वहीं छोड़, मैं बहू के पास चली गई।

"नर्स बच्चे से अवकाश पा, क्लिनिक में आई और औषध् ले गई। बहू को संदेह हुआ और उसने औषध् नहीं ली। बहू ने औषध् का बदला हुआ रंग देख लिया था।

"बाद में बहू ने मुझे वह औषध् कम्पनी को भेजकर पता करने के लिए कहा। वह जानना चाहती थी कि औषध का रंग क्यों बदल गया है। मैंने भेज दी, मेरे कहने पर भीम अपने पिता के पास गया और वह स्वयं दवाईखाने में गया था।

"अब मेरी आत्मा मुझको धिक्कार रही है। इस कारण मैं अपना दोष स्वीकार करती हूं।"

नर्स को बुलाया गया। चपरासी ने आकर बताया कि वह तो लापता है। फिर लिल्ली के बयान हुए। उसने, जैसा वह जानती थी, वैसा ही बता दिया। उससे पूछा गया, "'डॉक्टर और डॉक्टर की मां में परस्पर बनती नहीं थी क्या?"

"हां, दोनों में झगड़ा था।"

"कब से?"

"मैं जब से यहां आई हूं, मैंने उन्हें इसी स्थिति में देखा है।"

"नर्स के विषय में तुम क्या समझती हो?"

"मुझे नर्स पर ही संदेह है।"

"कोई कारण बता सकती हैं?"

"नहीं।"

"किसी और पर भी आपको संदेह है?"

"अपने इस कमरे में लेटी हुई मैं इससे अधिक और कुछ नहीं जान सकती।"

"आपको इस विषय में अपने पति पर संदेह है क्या?"

"नहीं।"

"अपनी सास पर संदेह है?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं।"

"अपनी सास के साथ आपका झगड़ा है क्या?"

"बिल्कुल नहीं।"

इसके बाद नौकरों के बयान हुए। उनके बयानों से भी किसी नई बात का ज्ञान नहीं हुआ।

बलराम और गंगा को हथकड़ी लगा दी गई और पुलिस की हवालात में ले जाया गया। लिल्ली ने अपने चपरासी द्वारा काहन को समाचार भेज दिया।

लिल्ली यह नहीं समझ सकी कि उसकी सास को क्यों पकड़ लिया गया है। उसको संदेह था कि डॉक्टर ने अवश्य अपने बयानों में अपनी मां के विरुद्ध कुछ कहा होगा। इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कारण उसने काहन को बुलवाया था। काहन आया तो लिल्ली ने कहा, "नर्स भाग गई है। उसको ज्यों ही पता चला कि पुलिस आई है, वह कोठी के पिछवाड़े की दीवार फांदकर लापता हो गई है। रसोइये ने उसे भागते हुए देखा है।"

काहन को भी यह जानकर विस्मय हुआ कि पुलिस गंगादेवी को क्यों पकड़ कर ले गई है। उसने लिल्ली को आश्वासन दिया कि वह अपनी पत्नी और मां को उसके पास भेज देगा।

जिसकी चिकित्सा चल रही थी, वह लेडी डॉक्टर आई, तो एक अन्य नर्स का प्रबंध हो गया। काहन घर गया और यमुना और सीता को उसने लिल्ली के पास भेज दिया। भीम और अर्जुन भी वहां आ गये थे।

लिल्ली अपने आपरेशन के कारण हिल-डुल नहीं सकती थी। इस कारण विवश लेटी हुई वह चिंता करती रही। अगले दिन वकील को लेकर काहन गंगा और बलराम से मिलने के लिए हवालात में गया। पुलिस अभी मुकद्दमा तैयार ही कर रही थी। इस कारण वकील को इनसे मिलने की स्वीकृति नहीं दी गई। काहन भी नहीं मिल सका। इस पर भी काहन उस मजिस्ट्रेट से, जिसने दोनों के बयान लिए थे, जा मिला। अपने साथ वह उस मजिस्ट्रेट के किसी परिचित व्यक्ति को ले गया था। मजिस्ट्रेट ने बताया कि अभी तक गंगा और बलराम में से किसी ने भी नर्स को दोषी नहीं बताया है। दोनों ने ही औषधि में विष मिलाने का आरोप अपने-अपने ऊपर लिया है। परन्तु नर्स पुलिस के पहुंचने पर भाग गई है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि नर्स ने भी इस अपराध में किसी प्रकार का भाग लिया है। यदि वह पकड़ी जा सकी तो न केवल यह पता चलेगा कि उसने क्या भाग लिया है, प्रत्युत गंगादेवी और बलराम की समस्या भी सुलझ जावेगी।

काहन विस्मय कर रहा था कि औषधि में विष मिलाने के अपराध को गंगा ने अपने सर पर क्यों ले लिया है। उसको पूर्ण विश्वास था कि गंगा ने यह कुकृत्य नहीं किया है। उसका मन तो कहता था कि बलराम ने ही विष मिलाया होगा। इस पर भी वह समझ रहा था कि डॉक्टर की स्वीकृति से नर्स भी मिला सकती है।

दिन भर की भाग-दौड़ का परिणाम लिल्ली को बताने के लिए काहन आया, तो लिल्ली ने अपना विचार बता दिया। उसका कहना था कि डॉक्टर को विष मिलाने का ज्ञान विष मिलाने के बाद हुआ है। जब माताजी ने दवाई की बोतल अपने अधिकार में कर ली थी, तब नर्स को चिंता लग गई थी। वह डॉक्टर को एकांत में ले जाकर बतलाती रही थी और तब उसके बाद ही डॉक्टर के मुख पर चिंता प्रकट होने लगी थी। वे दोनों ही दवाई की शीशी लेने के लिए माता जी के कमरे में गये थे। वहां से यह जान कि औषध् उसके ही कमरे में रखी है, वे दोनों औषध् ढूंढने के लिए आए थे। परन्तु उसने सोने का बहाना कर, उनको कमरे से निकल जाने के लिए कह दिया। इस पर वे चिंतित-से वहां से चले गये थे।

काहन ने गंगादेवी के लिए फौजदारी का योग्यतम वकील नियुक्त करवा दिया।

:4:

लिल्ली का अनुमान ठीक था। नर्स का डॉक्टर बलराम से अनुचित संबंध बन चुका था। इस पर भी बलराम लिल्ली का आदर-सत्कार वैसा ही कर रहा था, जैसा कभी भी करता था। इससे लिल्ली का अनुमान था कि डॉक्टर की ओर से तो यह सम्बंध अस्थाई रूप में है। ज्यों-ज्यों दिन व्यतीत होते जाते थे, नर्स कुछ स्वेच्छाचारिणी होती जाती थी। लिल्ली ने उसकी भूलों के विषय में एक-दो बार डॉक्टर को कहा भी था। डॉक्टर यह कहकर टाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
देता था कि नर्स भी तो इंसान ही है और भूल करना मनुष्य का स्वभाव है। यदि इसको बदल कर किसी अन्य को रखें, तो वह भी इसी प्रकार की कोई भूल करेगी ही। लिल्ली ने भी इस पर संतोष कर लिया। वह भी समझी थी कि यदि कोई अन्य नर्स आयेगी तो उसका सम्बंध डॉक्टर से नहीं बनेगा, यह किस प्रकार कहा जा सकता था?

ऐसे काम चल रहा था। ज्यों-ज्यों नर्स और डॉक्टर का सम्बन्ध घना होता जाता था, नर्स डॉक्टर से बच्चा होने की सम्भावना पर विचार करने लगी थी। डॉक्टर उसको अनेकों प्रकार के आश्वासन दे रहा था। वह उसके तथा उसके बच्चे के पालन-पोषण के लिए पांच सौ रुपया मासिक तक देने की बात करता था।

नर्स इससे सन्तुष्ट नहीं थी। परन्तु इससे और बढ़िया आश्वासन न पा सकने के कारण चुप थी। जिस दिन बच्चा उत्पन्न होने में कठिनाई अनुभव हुई और बच्चा टेढ़ा होने के कारण आपरेशन की आवश्यकता अनुभव हुई, उस दिन नर्स के मन में पुनः आशा जग्रत हो गई कि लिल्ली के मरने के बाद वह डॉक्टर की विवाहिता पत्नी बनकर रह सकेगी। इस आशा में तब और भी वृद्धि हुई जब 'मेजर आपरेशन' कर, बच्चा निकालने का निर्णय हुआ।

ऑपरेशन हुआ और लड़के का जन्म हो गया। बच्चा स्वस्थ था और ऑपरेशन भी सफल हो गया था। लिल्ली क्लोरोफार्म को भली-भांति सहन कर गई। अब नर्स यह इच्छा करने लगी थी कि वह किसी प्रकार शैया से उठने से पूर्व ही वह मर जाय।

उस रात तो वह लिल्ली के समीप बैठी रही और उसके विस्मय का ठिकाना न रहा, जब लिल्ली को चेतना हुई। वह सर्वथा स्वस्थ दिखाई दी। उसने देखा कि प्रायः रोगियों से भिन्न उसको चेतना होते ही वह सचेत थी और बहुत आराम अनुभव कर रही थी। ऑपरेशन के स्थान पर उसको किसी प्रकार की पीड़ा इत्यादि नहीं थी। उसने होश में आते ही नर्स से पूछा, "बेबी कहां है?"

नर्स ने उसे बताया तो उसने कहा, "उठाकर मुझे दिखाओ।"

नर्स ने उसको गोद में लेकर लिल्ली के सामने लाकर दिखाया। लिल्ली ने उसे देखा और अपने दाहिने हाथ से उसके सिर पर प्यार देकर पूछा, "लड़का है अथवा लड़की?"

"लड़का।"

"थैंक गौड।" उसने मुख से निकल गया।

"आप स्वयं कैसी हैं?"

"मैं बिलकुल आराम से हूं, आशा है एक सप्ताह तक मैं उठने योग्य हो जाऊंगी।"

प्रातःकाल लिल्ली को किंचित् ज्वर था और दुर्बलता थी। इसके लिए डॉक्टर आई और दवा लिख गई। उस समय चपरासी भेज ई० प्लोमर की दुकान से दवा मंगवाई गई। चपरासी दवा लेकर लिल्ली के कमरे में ही आ गया। भूल से अथवा बिना किसी प्रकार की योजना के नर्स ने दवा ली और रैपर को लिल्ली के सामने ही खोल दिया। दवा जल की भांति श्वेत थी। बोतल का मुख मोहरबंद था। नर्स उसको खोलने के लिए डॉक्टर के क्लीनिक में ले गई।

सील खोलने में दो-तीन मिनट से अधिक नहीं लगने चाहिए थे। नर्स को दस से पन्द्रह मिनट तक लग गये। साथ ही जब नर्स आई, तो उसका मुख विवर्ण हो रहा था। जब उसने दवा गिलास में डालनी चाही, तो लिल्ली ने उसका बदला हुआ रंग देख लिया। विद्युत की तेजी से लिल्ली के मन में संदेह दौड़ गया और उसने अपने व्यवहार का निर्णय कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लिया। उसने नर्स से कह दिया, ''मैंने अभी दूध पिया है और उससे मितली होने लगी है। यदि औषधि लूंगी, तो निश्चय खाया-पिया उलट दूंगी। उलटी हुई तो घाव के टांके खुल जाने की सम्भावना है। इससे मैं औषधू ठहर कर लूंगी।''

नर्स भी घबराई हुई थी। इस कारण उसने कुछ काल तक प्रतीक्षा कर लेना ही उचित समझा। इस समय सीता और गंगादेवी आ गयीं। नर्स प्रातः का अल्पाहार लेने गई, तो डॉक्टर सीता को लेकर ड्राइंग-रूम में चला गया। इसे उचित अवसर जान, लिल्ली ने अपना संशय गंगादेवी को बता दिया। उसने नर्स के हाथ से कुछ भी न लेने को कह दिया।

इस समय तक गंगादेवी के मन में दवाई के विषय में कुछ भी निश्चय नहीं हुआ था। उसने यह विचार कर कि नुसखे से नई दवाई बनवा ले, नुसखा नर्स से मांग लिया। फिर वह किसी विश्वस्त व्यक्ति को भेज, दवाई पुनः मंगवाने का विचार करने लगी।

वह अभी किसी ऐसे आदमी के विषय में निर्णय नहीं कर सकी थी कि जिस पर वह विश्वास कर सके। सीता जा चुकी थी और वह उसके लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी। लिल्ली ने बताया कि उसको भूख लग रही है, तो उसने लिल्ली के लिए स्वयं रसोई घर में जाकर पौरेज बनाया और ले आई। नर्स ने यह देखा तो वह अपने मन का चोर बताने डॉक्टर बलराम से कहने के लिए चली गई।

इस समय गंगादेवी का सामान लेकर भीम आ गया और गंगादेवी भीम को दवाई बनवाने के लिए कहने लगी तो उसके मन में यह विचार आ गया कि पहली दवाई के विषय में भी दवाखाने से पता करवा ले। उसने वह बोतल भी भीम को दे दी।

नर्स बलराम को बता रही थी, ''या तो इस बुढ़िया को निकाल दो अन्यथा मैं स्वयं चली जाऊंगी।''

नर्स की चुनौती पर बलराम परेशानी अनुभव कर रहा था। इस कारण उसने पूछा, ''इस बुढ़िया से तुम डरती क्यों हो? मैं अपने सम्बन्धों के विषय में इससे डरता नहीं, कहो तो इसके सामने ही मैं तुम्हें अपनी मिस्ट्रेस घोषित कर दूं।''

''नहीं, यह बात नहीं। यदि लिल्ली को कुछ हो गया तो उस औरत का संदेह मुझ पर जावेगा। मैं इस बात से डरती हूं।''

''परन्तु उसको कुछ होगा नहीं। मैं समझता हूं कि वह शीघ्र ही ठीक हो जावेगी।''

''तो ऐसा करिये कि उस दवाई की बोतल को इस बुढ़िया के अधिकार से ले लीजिए।''

''क्या है उस बोतल में?''

''वह औषधू ठीक नहीं रही।''

''क्या हुआ है उसको?''

''उसमें विष है।''

''विष? कहां से आ गया विष?''

''किसी ने मिला दिया है।''

''किसने मिलाया है?''

उत्तर देने की अपेक्षा नर्स प्रेम-भरी दृष्टि से डॉक्टर को निहारने लगी। डॉक्टर समझ गया कि नर्स ने मिलाया है। वह इसमें निहित उद्देश्य को भी समझ गया। इससे वह भागा हुआ अपनी मां के कमरे में गया और उससे दवा की बोतल के विषय में पूछने लगा। मां ने कह दिया, ''लिल्ली के कमरे में छिपाकर रखी है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"छिपा कर क्यों रखी है?"

"लिल्ली कह रही है कि दवा देखते ही उसको उल्टी करने की इच्छा होने लगती है।"

इस पर डॉक्टर और नर्स दोनों दवा ढूंढने लिल्ली के कमरे में आ गये। परन्तु लिल्ली ने सोने का बहाना कर, उनको वहां से निकल जाने को कह दिया।

जब भीम दवाखाने से लौटा और उसकी सूचना से घबराई हुई गंगा देवी, डॉक्टर को सचेत करने आई, डॉक्टर तथा नर्स ड्राइंग-रूम में बैठे हुए अभी प्रेम-आलाप ही कर रहे थे। डॉक्टर के मन में इस समय तक यही विचार था कि नर्स ने लिल्ली की हत्या के लिए औषध् में विष मिला दिया है, और अब वह उसकी मां से डरकर, दवा वापिस लेना चाहती है। डॉक्टर यद्यपि विष की जांच-पड़ताल से डरता था, परन्तु मन-ही-मन वह भी लिल्ली की हत्या हो जाने पर, संतोष अनुभव कर रहा था। सीता उसको नर्स से भी अधिक सुन्दर और प्रेममय प्रतीत हो रही थी और वह उसमें एक आशा का अंकुर उत्पन्न कर गई थी। अब वह चाहता था कि मां वह औषध् लिल्ली को पिला दे और नर्स पकड़ ली जाय। इस प्रकार सीता को पाने के मार्ग में आने वाले दोनों कांटे, एक साथ ही दूर हो जायें तो ठीक रहेगा।

गंगादेवी आई तो नर्स लिल्ली के कमरे में दवा ढूंढने जाने के लिए उठी। इस समय बच्चा रोने लगा, तो गंगा ने उसको वहां जाने के लिए कह दिया।

जब गंगादेवी ने पुलिस के आने की बात कही तो सबसे पहली प्रतिक्रिया, जो उसके मन में उत्पन्न हुई, वह अपने क्लिनिक में से सब विषों को नाली में बहा देने की थी। वह उठकर क्लिनिक की ओर लपका। परन्तु पुलिस आ गई और उसको उधर जाने से रोक दिया गया।

इसके बाद डॉक्टर के बयान हुए। वह बयान गंगादेवी ने सुने तो उसको अपनी करनी पर पश्चाताप लगने लगा। उसकी इच्छा किसी को पकड़वाने की नहीं थी। नर्स को भी नहीं। उसका पूर्ण आयोजन तो लिल्ली की रक्षा के निमित्त था और यह पुलिस उसकी इच्छा के बिना बीच में आ टपकी। इससे उसने विचार किया कि वह अनायास ही अपने पुत्र की हत्या करने वाली बन गई है। उसने अपने मन में उसको बचाने का निश्चय कर लिया। उसने अपने बयान दे दिये। इसमें उसने स्वीकार किया कि दवा में विष उसने ही मिलाया है और विष मिलाने का उद्देश्य भी उसने बता दिया। साथ ही पुलिस तक बात पहुंचाने में भी उसने अपना स्पष्टीकरण दे दिया।

मुकद्दमा बिलकुल साफ था, परन्तु नर्स के भाग जाने से पूर्ण बात में कुछ विषमता उत्पन्न हो गई। इससे पुलिस नर्स की खोज में लग गई और पन्द्रह दिन का रिमांड ले, नर्स की खोज होने लगी।

: 5 :

कोर्ट की स्वीकृति से काहन द्वारा नियुक्त वकील गंगादेवी से मिला। गंगादेवी ने उसको स्पष्ट शब्दों में कहा, "मैंने लिल्ली को मार डालने का निश्चय करके ही औषध् में विष मिलाया था। मैं अपराधी हूं और अपने अपराध का दण्ड पाना चाहती हूं।"

वकील ने बहुत समझाया कि उसके अपने बयानों के अतिरिक्त उसके विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं। इस कारण उसने अपराध किया अथवा नहीं किया, कोई अंतर नहीं पड़ता। यदि वह इतना कह दे कि वह अपने पुत्र को बचाने के लिए पुलिस में यह बयान दे बैठी है तो वह बच जायेगी। इसका सारा दोष नर्स पर पड़ेगा और वह इस समय लापता है। इस कारण मुकद्दमा फाइल जो जावेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु, गंगादेवी केवल इतना मानी कि वह अपने पुत्र को दण्ड नहीं मिलने देगी। इस कारण अभी अपने बयानों को वह वापिस नहीं लेगी। जब वह देखेगी कि नर्स अपराधिन सिद्ध हो रही है, तब ही अपने बयान बदलेगी। इस पर भी वह यह कहती रही कि अपराधिनी वह स्वयं है और उसको किसी अन्य को इस अपराध के बदले दण्ड पाते देख, दुःख होगा।

गंगादेवी की बात हाकिमराय वकील ने काहन को बता दी और उसको यह भी कह दिया कि गंगादेवी के छूटने की बहुत कम आशा है। वह अपने बयानों से स्वयं ही फंस जावेगी। हां, अगर डॉक्टर बलराम अपनी मां को बचाने में सहयोग दे, तो बात बन सकती है। हाकिमराय ने कहा कि डॉक्टर बलराम अपने बयान में यह कह दे कि वह जानता था कि विष नर्स ने मिलाया है। नर्स ने उसके सामने स्वीकार भी कर लिया था। वह उसके सम्मोहन में फंसा हुआ था, इस कारण उसको बचाने के लिए यह बयान दे बैठा है। इससे पूर्ण दोष नर्स का सिद्ध हो जावेगा और दोनों मां-बेटे बच जावेंगे।

इसके लिए यत्न भी किया गया। बलराम के वकील से मिला गया, बलराम से भी भेंट की गई। परन्तु काम नहीं बना। बलराम अपने बयान बदलने के लिए तैयार नहीं हुआ।

लिल्ली का घाव ठीक हो गया था। वह उठकर चलने-फिरने योग्य हुई तो यह अपने पति से मिलने के लिए गई। उसको काहन, हाकिमराय वकील और सीता इत्यादि का विचार विदित था। इस कारण उसने अपने पति से कहा, "मुझे पूर्ण विश्वास है कि विष नर्स ने ही मिलाया है। आप नर्स को बचाने के लिए झूठा बयान दे रहे हैं और आपकी माताजी आपको बचाने के लिए झूठ बोल रही हैं।"

"नहीं, लिल्ली! तुम नहीं जानतीं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि विष मां ने मिलाया है। मैं मां को बचाने के लिए यह सब दोष अपने ऊपर ले रहा हूं। परन्तु अब मैं तुमको देख, यह विचार करता हूं कि स्वयं को अपराधी घोषित करके मैं तुम्हारे साथ बहुत अन्याय कर रहा हूं। इस कारण मैं स्पष्ट कर देने वाला हूं कि मां मेरे सामने मान चुकी थी कि विष उन्होंने मिलाया था और वे इसके लिए नर्स को फंसाना चाहती थीं। मैं स्वयं निरपराध होते हुए दंड का भागी बन अपनी पत्नी के साथ अन्याय करने वाला बनना नहीं चाहता।"

बलराम को बहुत-कुछ समझाया गया, परन्तु वह नहीं माना और अपने निश्चय पर अटल रहा।

मुकद्दमा हुआ। सिटी मजिस्ट्रेट के सम्मुख बयान हुए और डॉक्टर बलराम ने अपने बयान बदल दिये। उसने कहा, "मां ने उसके सामने यह स्वीकार किया था कि उसने उसकी पत्नी की हत्या के लिए दवाई में विष मिलाया था। मैं अपनी मां को बचाना चाहता था, इस कारण मैंने पुलिस में स्वयं को अपराधी घोषित कर दिया था। परन्तु अब मैं अपनी पत्नी को देखकर, यह अनुभव करता हूं कि यह उसके साथ अन्याय हो जावेगा, अतः अब मैं यह बात सत्य कह रहा हूं कि विष मैंने नहीं मिलाया।"

गंगा यद्यपि जानती थी कि बलराम ने झूठ बोला है, वह परन्तु यह समझी कि अपने बयान बदलने का कारण बताने के लिए ही उसने यह किया है इसलिए वह अपने बयानों पर दृढ़ रही।

डॉक्टर बलराम को छोड़ दिया गया और उसे सरकारी गवाह के रूप में उपस्थित किया जाने लगा। गंगा को पांच वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिल्ली समझ नहीं पाई कि यह सब क्या हो गया है। जब डॉक्टर घर आया तो उसने अपने मन की बात बताते हुए कहा, ''देखिये जी, आप चाहे कुछ भी कहें, मेरा मन यह कहता है कि मेरी दवाई में आपकी माताजी ने विष नहीं मिलाया। विष तो उस नर्स ने ही मिलाया है और आपने झूठे बयान दिये हैं। यदि आप सत्य बात कहते तो माताजी भी अपने बयान बदल देतीं।''

''परन्तु तुम उस बूढ़ी औरत पर इतना विश्वास क्यों करती हो?''

''वह धर्म-कर्म पर विश्वास करने वाली औरत, इस प्रकार का कृत्य करे, यह समझना मेरी बुद्धि से परे है।''

''तुम कुछ पागल हो रही हो। अपराधी अपना अपराध स्वीकार कर रहा है और तुम मुझको अपराधी मान रही हो।''

लिली के मस्तिष्क में एक बवंडर खड़ा हो गया। उसका मन कहता था कि गंगा ने यह अपराध नहीं किया। परन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण इसके विपरीत थे।

गंगा के कहने पर उसकी अपील नहीं की गई और बात लगभग शांत हो गई थी। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में डॉक्टर और लिल्ली में इस विषय पर बात नहीं होती थी, तो भी लिल्ली का मन भीतर-ही-भीतर अपने पति के प्रति विरक्त होता जाता था। दोनों में पति-पत्नी सम्बंध भी शिथिल हो गया था।

मुकद्दमे को अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ था कि बलराम दम्पति धर्मशाला में टिकने वाले दो यात्रियों की भांति जीवन व्यतीत करने लगे थे।

लिली अब अकेली घूमने जाया करती थी। एक दिन वह सैसिल में चाय पीने के लिए गई हुई थी, उसको होटल में, अपनी मेज के सामने की एक मेज पर उसकी ओर पीठ किए, दो व्यक्ति बैठे दिखाई दिये। उनमें एक तो निस्संदेह डॉक्टर बलराम था और दूसरी कोई औरत थी। उसकी ओर पीठ होने के कारण वह उनको पहचान नहीं सकती थी। सामने एक अन्य स्त्री बैठी थी, जो पर्याप्त प्रौढ़ावस्था की थी। लिल्ली यत्न कर रही थी कि डॉक्टर के साथ बैठी स्त्री के विषय में जाने कि वह कौन है। परन्तु डॉक्टर को नाराज किये बिना, ऐसा करना सम्भव प्रतीत नहीं हो रहा था। वह यह भी सोचती थी कि यह डॉक्टर की कोई रोगिणी भी हो सकती है। इस कारण भी वह साहस नहीं कर पा रही थी कि डॉक्टर के पास जाकर बैठ जावे। सबसे बड़ी बात यह थी कि डॉक्टर से उसकी बोलचाल बंद हुए भी एक वर्ष के लगभग होने जा रहा था।

वह मन में संतोष कर, चाय पीने लगी। डॉक्टर और उसके साथियों ने चाय पहले समाप्त की। वे उठकर जाने लगे, तो डॉक्टर की साथिन की दृष्टि लिली पर पड़ी और वह एक क्षण के लिए खड़ी हो गई। डॉक्टर उस समय दूसरी ओर देख रहा था। इस समय लिल्ली की दृष्टि भी उस औरत पर पड़ी। यह वही नर्स थी, जिस पर उसको दवा में विष मिलाने का संदेह था। लिली उसको देख चौंकी। इस पर वह नर्स मुस्कुराई और डॉक्टर के साथ बाहर को चल पड़ी।

अपने पति और नर्स में सम्पर्क को जान, लिल्ली अपने मन में अनेकानेक कल्पनायें करने लगी। उसको विश्वास हो गया कि यह औरत डॉक्टर की जानकारी में लापता हुई थी। डॉक्टर ने इसी के कारण झूठ भी बोला था और इसको फंसाने की अपेक्षा अपनी मां को फंसा दिया था। केवल एक बात वह नहीं समझ सकी थी कि गंगादेवी ने क्यों यह सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दोष अपने सिर पर लिया है?

उसको चाय में कोई स्वाद नहीं आ रहा था। इससे उसने आधा प्याला पीकर ही छोड़ दिया। बैरे को बुला, बिल का भुगतान कर होटल से निकल वह अपने घर की ओर चल पड़ी।

तांगा कर वह अपनी कोठी पर जा पहुंची। उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने डॉक्टर और नर्स को अपने ड्राइंग-रूम में बैठे देखा। उस समय वह दूसरी औरत उनके साथ नहीं थी। लिली ड्राइंग-रूम में आई तो उनको बैठे देख, द्वार पर ही ठहर गई। डॉक्टर ने उसको देखा तो बुला लिया, "लिली डीयर! आओ, तुमसे इनका परिचय कराऊं।"

लिली सामने आकर बैठ गई। डॉक्टर ने कहा, "ये हैं मिस सरोजिनी पटनायक। हमारे यहां कुछ दिन तक अतिथि के रूप में रहेंगी। इनकी मां किसी कार्य से लाहौर आई हैं, वे मेरी लन्दन की परिचित हैं।"

लिल्ली ने कहा, "यदि मैं भूल नहीं कर रही तो यह वह नर्स नहीं क्या जिसने मुझको विष देकर, मार डालने का यत्न किया था?"

"विष तो मां ने देने का यत्न किया था और वह अपने अपराध का दण्ड भुगत रही हैं।" बलराम ने बताया।

"वे तो अपने पुत्र की रक्षा करने का दण्ड भुगत रही हैं। यह तो भाग जाने के कारण बच गई थी।"

"तो तुम इसकी मुखबिरी कर दो।" क्रोध में बलराम बोला।

"नहीं, मैं मुखबिरी तो नहीं करूंगी। परन्तु मुझे यदि इसके हाथ से विष खाकर नहीं मरना है, तो इसके साथ एक ही मकान में नहीं रहना चाहिए।"

"यह तुम देख लो। यह मेरे मित्र की लड़की है। मैंने इनको और इनकी मां को अपने घर में रहने का निमन्त्रण दे दिया है। इनकी मां नीडोज होटल से अपना सामान लेने के लिए गई हैं।"

"तो ठीक है, मैं किसी अन्य स्थान पर रहने का प्रबन्ध करती हूं।"

"किंतु, मुझसे पृथक् रहने पर मैं तुम्हें खर्चा नहीं दे सकूंगा।"

"मेरा जेब-खर्च भी नहीं दे सकते क्या?"

"जेब-खर्च देने का कोई कारण नहीं। तुम रहो तो किसी अन्य के पास और खर्चा मैं दूं? ऐसा नहीं हो सकता।"

"परन्तु आप तो मुझे घर से निकाल रहे हैं?"

"मैंने तुम्हें जाने के लिए नहीं कहा।"

"इस दुराचारिणी को इस घर में लाकर, आप मुझे जाने के लिए ही तो कह रहे हैं?"

"शट्-अप।" नर्स ने माथे पर त्यौरी चढ़ाकर कहा।

लिल्ली समझ गई कि वहां उसकी जान को भय है। इससे वह तुरंत उठी और कोठी से बाहर हो गई। वह अभी बरामदे की सीढ़ियां उतर ही रही थी उसको अपने पति और नर्स के परस्पर खिलखिलाकर हंसने की आवाज सुनाई दी। इससे तो उसको और भी क्रोध आ गया। सड़क पर आकर वह विचार करने लगी कि किधर जावे।

उस समय तो वह क्रोध से बाहर निकल आई थी। किंतु, अब रहने के स्थान की समस्या उसके सम्मुख आई तो वह स्तब्ध रह गई। उसके पर्स में भी बीस-बाइस रुपये से अधिक नहीं थे। उसके अपने हिसाब में बैंक में दो हजार रुपये जमा थे, परन्तु चैक-बुक भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उस समय उसके पास नहीं थी। वह तो कमरे में रखी थी। इससे तुरंत बैंक से भी रुपया नहीं निकाला जा सकता था। वह किसी होटल में जाकर ठहरने के विषय में विचार करने लगी। परन्तु बिना जेब में पैसे हुए किसी औरत का अकेले होटल में जाकर ठहरना भी संदेहास्पद होता।

इस प्रकार अनिश्चित मन, वह अनारकली बाजार की ओर चल पड़ी। जब वह काहन की दुकान के आगे से गुजर रही थी तो उसके मन में विचार आया कि उससे कुछ रुपये उधार ले ले।

इस पर वह उसकी दुकान पर जा पहुंची। काहन वहां पर नहीं था। इससे परेशानी में वह एक टेबल पर बैठ गई। बैरा सामने आकर खड़ा हो गया।

लिल्ली ने कहा, "पहले एक गिलास पानी लाओ।"

पानी पीने के बाद उसने काहनचन्द के विषय में पूछा तो बैरे ने कहा, "वे घर पर ही हैं। आज उनकी तबियत ठीक नहीं है।"

"घर कहां है?"

"पुरानी अनारकली में। थाने के सामने, मकान नम्बर पच्चीस। नया ही बना हुआ तिमंजिला मकान है।"

"अच्छा एक प्याला चाय ले आओ।"

लिली ने देखा कि बैरा और काउन्टर पर बैठा आदमी दोनों नये हैं। वे उसको पहचानते नहीं। इस कारण वह उनसे उधार मांग नहीं सकती थी। तब उसने काहन के घर जाने का निश्चय कर लिया। सीता के वहां होने पर उसे विश्वास था कि उसको रुपया मिल जावेगा।

उसने चाय पी। दाम दिये और पुरानी अनारकली को चल पड़ी। वहां मकान ढूंढने में कठिनाई नहीं हुई। थाने के सामने एक ही नया मकान था और उसके बाहर बड़े अंकों में नम्बर भी लिखा हुआ था। उसने द्वार पर लगी घंटी बजाई तो भीम ने द्वार खोला। लिल्ली को देख वह बोला, "ओह, मम्मी! आओ। माताजी से मिलने के लिए आई हैं?"

"हां, कहां हैं वे?"

भीम लिल्ली को ऊपर की मंजिल पर ले गया। नीचे का भाग किराये पर दिया हुआ था। ऊपर की मंजिल पर लिल्ली को बैठक में बैठाकर, भीम अपनी मां को बुलाने के लिए गया। सूचना मिलते ही पूर्ण परिवार लिल्ली के पास आ गया। केवल काहन नहीं आया।

सीता ने हाथ जोड़ नमस्कार किया। यमुना ने लिल्ली की पीठ पर हाथ फेर प्यार दिया। अर्जुन ने बैठते ही पूछा, "वसंत नहीं आया?"

कुशल समाचार के अनन्तर लिल्ली ने अपने आने का कारण बताया, "मैं वहां उस नर्स के साथ नहीं रह सकती। मुझको भय है कि वह मुझे मार डालेगी। इस कारण घर छोड़ आई हूं। मेरा बैंक में रुपया है, परन्तु इस समय उसे निकाल नहीं सकती। आप लोगों से दो सौ रुपया उधार लेने के लिए आई हूं। मैं दुकान पर गई थी। वहां से विदित हुआ कि काहन भैया घर पर हैं, सो यहां चली आई हूं।"

यों तो सीता अपने पास से इतना रुपया दे सकती थी, परन्तु जब उसने सुना कि लिल्ली काहन से रुपया लेने के लिए आई है, तो उसने भीम को अपने पिता को बुलाने के लिए भेज दिया।

काहन को उस समय भी एक सौ 'डिग्री' से ऊपर ज्वर था। इस पर भी वह आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और हाथ जोड़, नमस्कार कर, सामने बैठ गयी। लिल्ली ने अपनी पूर्ण कहानी बताकर, किसी होटल में जाकर रहने के लिए दो सौ रुपये उधार मांगे।

काहन ने रुपया देने से इन्कार नहीं किया, परन्तु वह बोला, ''यह घर से बहिर्गमन तो अब सदा के लिए ही होगा। इस कारण होटल में जाकर ठहरने के स्थान, कोई मकान भाड़े पर लेकर रहा जावे तो अधिक अच्छा होगा।''

लिली कहने लगी, ''कहां मिलेगा मकान?''

इस पर काहन ने कुछ विचार किया और कहा, ''मकान तो है। कहो तो इसी समय मिल सकता है। कदाचित् मालिक मकान भाड़ा भी नहीं लेगा।''

''कहां है मकान और कौन मकान मालिक इतना दयालु है?''

''मकान यहां से समीप है। और मकान मालिक जेल में है। चार वर्ष तक तो पूर्ण मकान आपके कब्जे में ही रहेगा। जब मकान मालिक छूटकर आयेगा तब विचार कर लेगा कि उसके साथ रहना है अथवा नहीं।''

''तो भैया! तुम समझते हो कि इतने दिन तक मैं घर से बाहर निस्सहाय पड़ी रहूंगी?''

''कुछ नहीं कहा जा सकता। इस पर भी मेरा विचार है कि अब जीवन-भर की बात ही समझो और तदनुसार ही प्रबन्ध करना होगा।''

लिल्ली स्तब्ध रह गई। वह इतने काल के लिए घर छोड़कर नहीं आई थी। परन्तु काहन की बात से वह इस दिशा में विचार करने पर विवश हो गई। इस पर उसने पूछ लिया, ''तो मुझे अपने खर्च के लिए दावा करना पड़ेगा?''

''सम्भव है। परन्तु भाभी! मुकद्दमा भी करना होगा तो होटलों में रहते हुए रुपया व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। भगवान जाने, कितना खर्च करना पड़े?''

लिल्ली समझ गई। उसने कहा, ''माताजी के घर की चाबी किसके पास है?''

''चाबी तो मेरे पास है। आपको अभी उसमें ले जाकर ठहरा देंगे। ताई जी को सूचना देनी होगी, वह मैं दूंगा।''

''हां, और उनसे भाड़ा भी पूछ लीजिएगा।''

: 7 :

उस दिन विन्सेंट और फ्लोरा सायंकाल का भ्रमण करके आये तो अपनी मम्मी से मिलने के लिए उसके कमरे में गये। वह वहां पर नहीं थी। वे उसकी प्रतीक्षा करते रहे। रात को भोजन के समय मम्मी के स्थान पर एक अन्य औरत को देख, विन्सेंट ने अपने पिता से पूछा, ''डैडी! मम्मी कहा है?''

''जहन्नुम में चली गई हैं।''

''वह मर गई है?'' विन्सेंट खाते-खाते रुक गया।

''नहीं, जीवित ही जहन्नुम में चली गई है।''

विन्सेंट लगभग बारह वर्ष का था और वह अनुभव कर रहा था कि पिछले एक वर्ष से उसके माता-पिता परस्पर बोलते नहीं। वह यह भी जानता था कि उसकी दादी मम्मी को विष देने के आरोप में कैद हो गई है। उसको यह भी विदित था कि यह झूठ है। उसकी मां ने उसे समझाया था कि विष देने का यत्न करने वाली वह नर्स थी, जो उसकी सेवा कर रही थी और यदि उसकी दादी न मान जाती कि विष मिलाने वाली वही है, तो उसका पिता पकड़ा जाता। उसके पिता को बचाने के लिए ही उसकी दादी ने ऐसा किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने यह कथा अपने ट्यूटर जोन्स माइकल को बताई, तो उसने उसकी दादी की बहुत प्रशंसा की थी और उसके डैडी की निन्दा। विन्सेंट यही भावना मन में लिए हुए था, परन्तु उसकी मम्मी सदा कहती रहती थी कि उसको डैडी का मान करना चाहिए।

विन्सेंट ने एक दिन पूछ लिया, "दादी का नहीं?"

"वे तो देवी हैं। उनके तो चरण छूने चाहिएं।"

आज वह अपनी मां के स्थान पर उसी औरत को देख, जिसके विषय में उसके मन में यह बैठ चुका था कि उसने ही उसकी मम्मी को विष देने का यत्न किया था, वह माथे पर त्यौरी चढ़ाकर पूछने लगा, "डैडी! यह कौन है?"

"तुम्हारी नई मम्मी।"

"परन्तु, यह तो मेरी मां को विष देना चाहती थी।"

इस पर मिस पटनायक उबल पड़ीं, "मूर्ख! अपनी बकवास बंद करो।"

"तुम हत्यारी हो, इस मकान से निकल जाओ।"

इस पर डॉक्टर ने उठकर विन्सेंट का कान पकड़ना चाहा। परन्तु वह उठकर भाग गया और अपने कमरे में जा, भीतर से द्वार बंद कर, बैठ गया।

फ्लोरा अभी इस बात को उतनी स्पष्टता से नहीं समझती थी जितनी कि विन्सेंट। इस कारण वह वहां बैठी रही। मिस पटनायक यह देख कि उस घर में बच्चे भी उसको हत्यारिन समझते हैं, अपने आप पर घृणा अनुभव करने लगी थी।

वे दोनों बुझे मन से भोजन कर, सोने के लिए चले गये। अगले दिन प्रातःकाल बलराम को विन्सेंट का विचार आया तो वह उठकर उसको समझाने के लिए उसके कमरे में गया। परन्तु विन्सेंट वहां नहीं था। वह अपना बढ़िया सूट पहिन कर चला गया था। डॉक्टर ने समझा कि प्रातः के भ्रमण के लिए गया होगा और अल्पाहार के समय तक लौट आयेगा किन्तु वह नहीं लौटा।

डॉक्टर ने जब उसके न आने की बात मिस पटनायक से कही, तो वह और भी परेशानी अनुभव करने लगी।

विन्सेंट प्रातः उठते ही भीम के घर उसके पिता को अपनी माता के गुम हो जाने की बात बताने के लिए गया था। उसका विचार था कि काहन अथवा उसका ट्यूटर उसकी माता को ढूंढने में उसकी सहायता करेंगे। किन्तु उसको अपने ट्यूटर के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। काहन के घर जाने पर ही उसको अपनी मां मिल गई। भीम ने उसे आते देखा तो नीचे उतरकर उसके समीप आ पूछने लगा, "वसंत! अपनी मां को देखने के लिए आये हो?"

"हां, वे कहां हैं?"

"तुम्हारी दादी के घर में।"

दोनों वहां चले गये। लिल्ली ने विन्सेंट की कथा सुनी तो उसको कह दिया, "विन्सेंट! मैं तुम्हारे पिता से लड़कर आई हूं। मैं नहीं जानती कि अब तुम्हारे डैडी के घर जा सकूंगी अथवा नहीं। अब तुम बताओ, मेरे पास रहोगे या उनके पास?"

"मैं तो अपनी मम्मी के पास ही रहूंगा। ग्राण्ड मां कब आयेंगी?"

"अभी दो-तीन वर्ष लगेंगे।"

"मैं यहीं रहूंगा।"

अब इस बात पर विचार होने लगा कि लिल्ली अपने पति से किस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सम्बन्ध-विच्छेद करे। इसके लिए वकील से राय की गई। उसने कहा, "लिल्ली! तुम कोर्ट में इस बात का प्रार्थना पत्र दे दो कि तुम्हारा पति दुश्चरित्र हो गया है, इस कारण तुम्हें हरजाना और तलाक दिलाया जाय। विन्सेंट की गवाही काम दे जावेगी।"

इस प्रकार विचार-विनिमय में तीन-चार सप्ताह लग गए। इस अवधि में गंगादेवी से मासिक भेंट का अवसर आ गया और लिल्ली भी भेंट के लिए जेल में गई। यों तो गंगा को काहन ने एक पत्र द्वारा पहले ही पूर्ण परिस्थिति से अवगत करा दिया था। इस पर भी गंगा लिल्ली की इच्छा जानने के लिए उत्सुक थी।

भेंट के समय लिल्ली ने कहा, "अब मैं विन्सेंट के साथ आप वाले मकान में रहती हूं और विन्सेंट के पिता पर हरजाना और तलाक मांगने का मुकद्दमा करने वाली हूं।"

गंगा ने मुस्कराकर पूछा, "तलाक के बाद तुम्हारा दूसरा विवाह करने का विचार है क्या?"

"जी नहीं।"

"फिर तलाक से क्या लाभ होगा?"

"हरजाना मिल जावेगा।"

"क्या हर्ज हुआ है तुम्हारा? तुम उससे प्रेम करती थीं। तुम्हारा विवाह हुआ, बच्चे हुए, सबसे बड़ा बच्चा तुम्हारे पास है। कुछ वर्षों में वह भी कमाने लग जावेगा। और तुम क्या चाहती हो? देखो, लिल्ली! दस-बीस हजार में अपना मूल्य लगवा कर अपने को इतनी सस्ती मत बनाओ। इंसान की बच्ची इतने सस्ते दाम पर नहीं बिक सकती।"

लिल्ली मुख देखती रह गई। फिर कुछ विचार कर बोली, "मैं उससे घृणा करती हूं।"

"यह तो जंगली जानवरों का गुण है। इंसान को तो परमात्मा ने अपने नमूने पर बनाया है और वह प्रेम की मूर्ति है।

"मेरी राय मानो। मन से घृणा निकाल दो। परमात्मा का रूप धारण करो। उसने जैसा बनाया है, उससे नीचे मत गिरो।"

लिल्ली की आंखों से आंसू निकलने लगे। उसकी मां भी इसी प्रकार के उपदेश दिया करती थी। वह रोमन कैथोलिक थी। यह हिंदू थी। परन्तु दोनों के मुख से एक ही शब्द और एक ही भाव सुन, उसको लगा कि उसकी मां सामने बैठी उसको समझा रही है।

भेंट समाप्त हुई। गंगा ने काहन को कह दिया, "काहन! मेरा सौ रुपया जो आ रहा है, उसे लिल्ली को दे दिया करो।"

लिल्ली ने जेल से बाहर आकर काहन को कह दिया, "भैया! वकील से कह देना कि मुझे दावा नहीं करना है।"

इसके कई दिन बाद, बलराम विंसेंट को स्कूल से साथ लेकर लिल्ली से मिलने आया। लिल्ली बाइबल पढ़ रही थी। अपनी मां के मत पर उसका पूर्ण विश्वास हो रहा था।

"मम्मी! डैडी आये हैं।" विन्सेंट ने सीढ़ियां चढ़ते हुए कहा।

लिल्ली निश्चिंत बैठी थी। डॉक्टर आया तो उसने न तो उसे बैठने के लिए कहा, न ही स्वयं उठकर उसका स्वागत किया। उसने बैठे-बैठे ही पूछ लिया, "कहिए, किसलिए आये हैं?"

"तुमको ले चलने के लिए।"

"वह भाग गई है क्या?"

"कौन? पटनायक? वह तो अगले दिन ही भाग गई थी। वह डर गई थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''किससे ? मैंने तो उसके विरुद्ध कुछ नहीं कहा । न ही मुखबिरी की है ।''

''उसको परमात्मा से भय लग गया था । जाते समय वह बोली, कि उसे ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे घर की प्रत्येक वस्तु उसको काटने को दौड़ रही है । मेरी मां जेल में बैठी है और वह बाहर आनन्द ले रही है । तुम उसको बंद हुआ देख रही होगी । इस पर भी तुमने मुखबिरी नहीं की, अन्यथा वह अब तक पकड़ ली गई होती । मेरा लड़का उसको हत्यारिन कह गया है ।

''वह उसको अपराधी घोषित कर रहा है । वहां रहकर तो वह ऐसे ही मर जायेगी । ऐसा कह, उसने अपना सामान उठाया और विशाल संसार में विलीन हो गई ।''

''किंतु, इतने दिन तक आप कहां रहे हैं ? मुझको तो आये दो मास से अधिक होने जा रहे हैं ?''

''मुझको तुम्हारे सामने आते लज्जा लग रही थी ।''

''अपनी करनी से तो भय नहीं लग रहा है ?''

''मैं धर्मभीरु नहीं हूं ।''

''अच्छी बात है, आप जा सकते हैं । मैं अब आपके घर नहीं आऊंगी ।''

''क्यों ?''

''मुझको आपसे भय लग रहा है ।''

''परन्तु मैं तो तुमसे प्रेम करता हूं ।''

''वह तो आप पहले भी करते थे ।''

''तो ?''

''तो आप नीचे उतर जाइये । वह सामने थाना है और मैं हल्ला कर, आपको पकड़वा सकती हूं ।''

''मैं खर्चा नहीं दूंगा ।''

''यह तो तब कहियेगा, जब मैं मांगने आऊंगी ।''

डॉक्टर भौंचक्का हो, सीढ़ियां उतर गया ।

❑❑❑

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंटवारा

कर्मसिंह बहुत वृद्ध हो चुका था। उसकी आंखों की बरौनियां सफेद हो गई थीं। कमर टेढ़ी, गर्दन झूलती हुई, टांगें लड़खड़ाती हुई और दांत न होने से बोलने में शब्द भी अस्पष्ट निकलते थे।

"बाबा! कितनी उमर होगी तुम्हारी?" कर्मसिंह के पोते का लड़का खाट के पास बैठा पूछ रहा था। लड़का दस साल का था। उसका नाम सोहनसिंह।

"कौन पूछ रहा है?" कर्मसिंह ने विचारों, जिनमें वह अब कभी-कभी मगन हो जाया करता था और अपनी वर्तमान अवस्था को भूल जाया करता था, से निकलते हुए पूछा।

"सोहन हूं बाबा!" कर्मसिंह के घर के सब प्राणी जानते थे कि उसकी आंखों की ज्योति समाप्त हो चुकी थी। सुनाई भी बहुत कम देने लगा था। इससे वे उसको अपना नाम, और वह भी ऊंची आवाज में बताया करते थे। सोहन ने भी ऐसे ही कहा।

"अच्छा सोहन हो? कहां गया है तुम्हारा बाप?"

"खेत पर गया है बाबा!"

"और तुम्हारी दादी तथा मां?"

"पड़ोसियों के घर गाने पर गई हैं।"

"वहां पर क्या है?"

"नानक का विवाह है।"

"तो जाओ उनको कहो जल्दी घर में आ जायें। यहां भी आज गाना होने वाला है।"

"गाना? क्यों क्या है यहां?"

"मेरा विवाह होने वाला है।"

"विवाह!" सोहन खिलखिलाकर हंस पड़ा, "बाबा! किससे विवाह कराओगे?"

"तुम्हारी परदादी से। कभी देखा है उसको?"

सोहन को इन बे-सिर पैर की बातों से भय लग गया। उसकी परदादी की मृत्यु तो उसके बाप के पैदा होने से पहले ही हो चुकी थी। इससे वह भागा हुआ पड़ौसियों के घर मां और दादी को बुलाने चला गया।

कर्मसिंह की आयु पचानवे से ऊपर हो चुकी थी। उसके तीन लड़के और एक लड़की थी। लड़की सबसे छोटी थी और उसका विवाह अमृतसर में एक तहसीलदार के लड़के से हुआ था। कर्मसिंह के लड़कों में से सबसे छोटे लड़के मदनसिंह का देहान्त हो गया था और दूसरे दो लड़के बाप से लड़कर पृथक् हों चुके थे। उन्होंने बूढ़े बाप से अपनी विधवा पतोहू और उसके एक लड़के बिहारीसिंह के प्रति अधिक स्नेह देख पृथक् हो जाना ही ठीक समझा था। लड़के के देहान्त के समय कर्मसिंह की आयु 60 वर्ष की थी।

जब दूसरे लड़के, सुखनसिंह और मक्खनसिंह, जिनके घर भी लड़के-लड़कियां उत्पन्न हो चुके थे, पृथक् होने लगे तो बाप से जायदाद में हिस्सा-पत्ती मांगने लगे। तब कर्मसिंह ने साफ कह दिया, "कुछ भी नहीं मिलेगा। अपना कमाओ और खाओ।" लड़के अपने पिता के स्वभाव और विचारों को जानते थे। इस कारण दोनों ने अपने पृथक्-पृथक् खेत ले लिए थे और बाप के इन्कार करने पर बिना कुछ लिए ही अलग-अलग खेती-बाड़ी करने लगे और अपने पृथक्-पृथक् मकान बनाकर रहने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सुखनसिंह और मक्खनसिंह की औरतें बटवारे के लिए झगड़ा करने की राय देतीं, परंतु दोनों भाइयों ने वृद्ध बाप को तंग करने का विचार छोड़ अपनी पत्नियों को ही समझा दिया कि आखिर बूढ़ा मरेगा। जमीन छाती पर रखकर ले जा नहीं सकेगा। उनका विचार था कि अधिक-से-अधिक दस वर्ष तक और जियेगा।

कर्मसिंह को कोई ऐब तो था नहीं। न तो वह शराब पीता था, न ही किसी अन्य प्रकार की फिजूल-खर्ची। वह अक्ल का धनी और गांठ का पक्का था। सौ एकड़ भूमि पर लाठी लिए घूमता था और तीन हजार मन गेहूं तथा अन्य अनाज उत्पन्न कर लिया करता था। घर पर गाय-भैंस पलती थीं और घर के समीप वाले कुएं के पास साग-सब्जी पैदा होती थी। केवल कपड़ा और नमक-मिर्च बाजार से लेनी पड़ती थी।

इस कारण धन एकत्रित हो रहा था। परमात्मा ने सुखनसिंह और मक्खनसिंह का भाग्य भी उज्ज्वल कर दिया था। धीरे-धीरे वे दोनों भी अमीर हो रहे थे।

कर्मसिंह का अपने लड़कों से द्वेष नहीं था। वह उनकी सहायता के लिए भी सदैव तत्पर रहता था। केवल वह अपनी जायदाद को अपने जीवन-काल में बांटना नहीं चाहता था। उसका यह विचार था कि जब तक वह भूमि और धन का मालिक है, तब तक पोते, पोतियां सब उसकी सेवा करेंगे, कहा मानेंगे और उसके मरने पर भी उसकी आत्मा के लिए प्रार्थना करेंगे। यदि उसने सब-कुछ बांट दिया तो उसको पानी पिलाने वाला भी कोई नहीं रहेगा।

यह बात बहुत सीमा तक ठीक थी। सायंकाल जब वह खेती से लौटकर आता तो उसके स्वर्गवासी पुत्र की बहू और लड़का तो उसकी सेवा करते ही थे। साथ ही अब उसके बड़े लड़कों की बहुएं और पुत्र भी आते और उसके पांव दबा जाते थे। कर्मसिंह भी ऋतु के अनुसार कभी पिन्नियां, कभी बूंदी के लड्डू, कभी पेड़े और कभी बर्फी बनवा रखता था और जो उसके पास आता, उसको खाने के लिए देता था। कभी उसके पुत्र और पोते कहते भी, "बाबा, अपने जीते-जीते सब बांट जाओ, नहीं तो पीछे झगड़ा होगा?"

"सुखन!" वह कह दिया करता, "अपनी भावज पर विश्वास रखो। वह देवी है।"

इस पर भी जब किसी पोते अथवा किसी पोती का विवाह होना होता वह सब खर्चा अपने पास से करता था। इस प्रकार परिवार का कार्य चलता जाता था। मदनसिंह की मृत्यु के समय उसका लड़का बिहारीसिंह, पांव वर्ष का था और कर्मसिंह अपने लड़के की बहू के शोक को कम करने के लिए बिहारीसिंह से विशेष प्यार करता था। उसकी सब आवश्यकताओं को पूर्ण करता था। मदनसिंह की बहू भी कर्मसिंह की ऐसी सेवा करती थी मानो उसकी लड़की ही हो।

: 2 :

बिहारीसिंह जब बड़ा हुआ तो उसका विवाह कर दिया गया। बहुत ही सुंदर और सुघड़ बहू घर में आई। वह जालन्धर शहर के रहने वाले एक दुकानदार की लड़की थी। नाम था जसवीर कौर। इससे पहले घर की सब बहुएं गांवों की अथवा किसानों की लड़कियां ही थीं। जसवीर कौर पहली बहू थी जो नगर की रहने वाली थी और साथ ही स्कूल की नौवीं श्रेणी तक पढ़ी भी थी।

उसने आते ही अपने कपड़े, आभूषण और जिस पर भी उसका हाथ जाता, अपने अधिकार में करने आरम्भ कर दिये। कर्मसिंह को इस पर संदेह हुआ तो उसने अपने स्वर्गवासी लड़की की, सुन्दरी बहू को बुलाकर कहा, "बेटा सुन्दरी! मेरी जेब में से रेजगारी गायब होने लगी है। कल मैं दस का नोट लेकर एक धोती का दाम देने के लिए गया था उसमें से चौदह आने मेरी जेब में थे। आज एक पैसा भी नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"भापा! मैंने नहीं लिये।"

"यह मैं जानता हूं। तुमको इस घर में आये अट्ठाइस वर्ष हो चुके हैं। एक पैसे का हेर-फेर नहीं हुआ। अब यह नगर की छोकरी आई है। इससे सावधान रहना चाहिए।"

बात बिहारीसिंह के कान में पहुंची तो वह अगले दिन भापा के पास चौदह आने लेकर आ गया। उसने बाबा के पांव पकड़े और अपनी बहू के लिये क्षमा मांगी। उसने कहा, "बाबा! वह शहर की रहने वाली देहातियों के चलन को नहीं जानती। मैंने उसको समझा दिया है और अब वह ऐसा नहीं करेगी।"

"देखो बिहारी! अगर फिर तुम्हारी बहू ने ऐसा किया तो तुमको भी तुम्हारी बीवी के साथ नगर में भेज दूंगा। वहां पर जाकर कमाना और खाना?"

"बाबा! वह कहती है कि आपके दोनों पुत्रों ने पृथक्-पृथक् होने से पहले ही अपने-अपने खेत खरीद लिये थे। वे कहां से लेकर खरीदे थे? वह भी अपने लिए पृथक् खेत खरीदने के लिऐ रुपया इकट्ठा करने लगी थी।"

"तो उसको कह दो कि वे दोनों अपनी ससुराल से रुपया लाये थे। ससुराल का रुपया उन्होंने खेत खरीदने में लगा दिया था। उन खेतों पर वे मेहनत-मजदूरी करते थे और वहां की कमाई फिर खेतों पर ही लगाते जाते थे। चार-पांच सौ रुपये से आरम्भ कर अब वे पचास-पचास एकड़ भूमि के मालिक हो गये हैं। जसवीर भी अपने भूषण बेचकर भूमि खरीद सकती है। साथ ही तुम भूमि पर मेहनत कर धन पैदा कर सकते हो।"

"पर बाबा! तब बीस से तीस रुपये में एक बीघा भूमि मिल जाती थी, पर अब तो एक बीघा का मूल्य भी पांच सौ रुपये से ऊपर हो गया है।"

"ठीक है। तब सोने का मूल्य बारह से पन्द्रह रुपये तोला होता था, अब उसका मूल्य अस्सी रुपये तोला है! बिहारी, तुम्हारे ससुर ने जो दिया है सब मुझको मालूम है। और उसमें से सब-कुछ तुम्हारी बहू ने संदूक में बंद कर रखा है।"

जसवीर कौर समझ गई कि बूढ़ा इस प्रकार से काबू में नहीं जायेगा। उसने दूसरा ढंग रचा। उसने उस ताले की दोहरी चाबी बनवाई जो उस कोठरी में लगा था, जिसमें पूर्ण घर की सम्पत्ति रखी जाती थी। ताली की मोम पर छाप लगा, उसमें अपने छोटे भाई के हाथ शहर भेज दी और वहां से चाबी बनकर आ गई।

गरमी की ऋतु में जब घर के सभी प्राणी घर की छत पर सोते थे, एक रात जसवीर नीचे आई और ताला खोलकर तोशेखाने की तलाशी लेने लगी। एक लोहे का संदूक था। उसको भी एक ताला लगा था। उस ताले की चाबी उसने कभी नहीं देखी थी। उसे कर्मसिंह सदा अपनी कमर से बांधकर सोता था अतः सब परिश्रम व्यर्थ गया।

इस पर भी जसवीर कौर ने अपने ससुर की पूर्ण चल-सम्पत्ति उड़ाने का विचार छोड़ा नहीं। वह उस चाबी पर अधिकार पाने का अवसर ढूंढने लगी। वह अवसर तब मिला जब जसवीर के एक लड़की और फिर एक लड़का भी होकर आठ वर्ष का हो गया था। तब तक कर्मसिंह की दृष्टि दुर्बल हो चुकी थी और हाथ-पांव भी शिथिल पड़ने लगे थे। अब वह खाट के साथ लग गया था। केवल टट्टी-पानी के लिए ही उठता-बैठता था।

अभी भी पोते-परपोते आते थे और कर्मसिंह के पांव दबा जाते थे। कोई आकर उसके कपड़े धो देता और कोई उसको नहला जाता तो कोई खाना आदि खिला जाता था। इसी सेवा के लोभ में वह सम्पत्ति को बांटता नहीं था।

एक दिन अवसर मिला और चाबी जसवीर कौर के हाथ लग गई। बूढ़ा जब सोने के लिए बाहर गया तो उसकी कमर से चाबी गिर पड़ी। उसे पता नहीं चल सका। जसवीर कौर ने चाबी उठा ली। किसी ने देखा भी नहीं। उसने कोठरी खोली और फिर संदूक भी खोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लिया। सोना-चांदी, नोट देखे तो जसवीर कौर कितनी ही देर तक मुग्ध हो देखती रह गई। फिर उसने अपनी चादर का आंचल बिछा दिया—और जितना उसमें बांध सकती थी, बांधकर अपने कमरे में ले गई। तदुपरान्त उसने संदूक और कोठरी को बंद कर संदूक की ताली वहीं भापा की खाट पर रख दी, जहां वह गिरी थी।

चाबी रख वह अपने कमरे में चोरी का सामान संदूक में बंद कर रही थी कि बिहारीसिंह की नींद खुल गई और वह अपने कमरे में दीपक का प्रकाश देख, झांककर सब कुछ समझ गया। उसके मन में आया कि बीवी को पकड़कर और धक्के देकर घर से निकाल दे, परंतु उसको अपने बच्चों की मां पर दया आ गई। उसने कमरे के बाहर खड़े-खड़े ही योजना बना ली और लौट गया। उसके मकान की छत पर सोने के लिए जाने के आधा घण्टा पश्चात् जसवीर कौर ऊपर आई।

अगले दिन बिहारीसिंह ने, जब जसवीर कौर सो रही थी, उसके संदूक की, जिसमें सोना, चांदी और नोट छिपाकर रखे थे, चाबी ली। उसने सब वस्तुएं निकाल लीं और लगभग उतने ही वजन के ईंट के कंकड़ आदि संदूक में भर दिए।

वह सब सामान बिहारीसिंह ने एक गठरी में बंद कर अपनी मां के संदूक में रख दिया। मां के संदूक को ताला नहीं लगता था। उसकी मां को अपने चार कपड़ों को ताला लगाने की आवश्यकता भी अनुभव नहीं होती थी।

अगले दिन जसवीर कौर का भाई आया तो जसवीर कौर ने अपना संदूक उठाकर जालन्धर भेज दिया और कहला भेजा कि जब वह आयेगी तो स्वयं ही उसे खोलेगी। उसकी अनुपस्थिति में उस संदूक की रक्षा की जाए।

जसवीर कौर के भाई ने संदूक के भारीपन का अनुभव कर पूछ लिया, "बहिन! क्या है इसमें?"

"इसमें मेरे आभूषण हैं। ध्यान रखना।"

: 3 :

सुन्दरी ने अपना संदूक खोला तो उसमें आभूषण, सोना-चांदी और नोटों के बण्डल देख वह घबरा गई। उसने कभी इतना धन देखा नहीं था। वह कितनी ही देर तक तो उस सबको देख-देख समझने का यत्न करती रही कि वह सब कहां आ गया। जब कुछ समझ नहीं सकी तो अपने लड़के बिहारीसिंह के, खेतों से लौटने की प्रतीक्षा करने लगी। जसवीर रोटी बना रही थी। सोहन और गुरनाम कौर रसोईघर में बैठे खाना खा रहे थे। बाहर कर्मसिंह से मिलने के लिए सुखनसिंह और उसकी पत्नी आई हुई थी। कुछ बच्चे भी अपने बाबा के पास बैठे उसकी बातें सुन रहे थे।

सुन्दरी ने बिहारी को, जब वह वापस घर आ गया, इशारे से भीतर बुलाकर अपने संदूक में रखी हुई वस्तुएं दिखाईं तो बिहारीसिंह ने सब बात अपनी मां को बता दी। उसने यह भी बताया, "मां! सोहन की मां ने किसी भांति ताला खोला है और यह सब बाबा की कोठरी से निकाल लिया है।"

"तुम कैसे जानते हो यह?"

"जब से बाबा की नजर दुर्बल हुई है, मैं ही संदूक में रखता-निकालता हूं। इन आभूषणों को मैं भली-भांति पहचानता हूं। यह सोने की डली मैं पिछले वर्ष गेहूं बेचकर अमृतसर से लाया था।"

"तो इसका मैं क्या करूं? तुमने मेरे संदूक में क्यों रख दिया है यह सब?"

"मां! मैं विचार कर रहा था कि जिस दिन बाबा कुछ भीतर रखने को अथवा भीतर से निकालने को चाबी देंगे तब मैं यह सब कुछ चुपचाप भीतर रख दूंगा। मुझे जसवीर कौर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
झगड़ा करना ठीक प्रतीत नहीं हुआ। वह मूर्ख है, परन्तु मुझसे अधिक पढ़ी है। मैं जब उसको कुछ समझाने लगता हूं तो समझा नहीं पाता।''

''अच्छा तो मैं इस ट्रंक को ताला लगा दूं। मुझको भय है कि कहीं तुम्हारी बहू को संदेह हो गया तो वह यहां से भी चुरा लेगी।''

''मां! यदि ताला लगाया तो वह संदेह करने लगेगी। मेरा विचार है कि तुम तनिक सतर्क रहना। बनिया सौ मन मकई के दाम देने के लिए आएगा, तब मैं बाबा से चाबी मांगूंगा। उसी समय यह सब भी वहीं पर रख दूंगा।''

अवसर मिलते ही सारा सामान रख दिया गया। कर्मसिंह कुछ दिन से कह रहा था कि उसके पांव ठण्डे रहने लगे हैं। आज मध्याह्नोत्तर उस ने एकाएक सोहन को कहा, ''जाओ, मां और दादी को बुला लाओ।''

सोहन भागा-भागा गया और मां और दादी को बुला लाया। सुन्दरी ने आते ही पूछा ''भापा! क्या बात है?''

कर्मसिंह हंसा और बोला, ''अपने ज्येष्ठों को बुलवा लो। बिहारी को भी बुला लो। मैं समझता हूं कि चलने का समय आ गया है।''

''नहीं बाबा!'' जसवीर ने कहा, ''अभी तो वाहे गुरु की कृपा है। वैसे ही आपको कुछ भरम हो गया है।''

''नहीं, जसवीर! बैठ जाओ और जपजी साहब का पाठ करो।''

जसवीर कौर भीतर चली गई। हाथ-मुंह धो, चटाई ले आई और चटाई को बाबा की खाट के पास बिछा जपजी साहब की पुस्तक निकालकर पाठ करने लगी।

''एक ओंकार। सत नाम। कर्ता पुरुष निभौं निर्वैर। अकालमूर्त अजनीसई भंग गुरुप्रसाद जप आदि सच जुगादि सच।''

जसवीर कौर पढ़ रही थी कि सोहन अपने बाबा के भाइयों और अपने पिता को बुला लाया।

जब तक जसवीर कौर पढ़ती रही, सब चुपचाप बाबा की खाट के चारों ओर बैठे रहे। कर्मसिंह को उठाकर खाट पर बैठा दिया गया था। सुखनसिंह अपने पिता की पीठ के पीछे बैठ उसको आश्रय देकर बैठा था। कर्मसिंह शान्त-भाव से सुन रहा था। जसवीर कौर आगे पढ़ रही थी—

''जात पहारा धीरज सुनार। अमरन पुत्त वेद हथियार
भय खला अगां जप ताओ भायां भाओ अमृत तिहि ढाल
घड़िया शब्द सभी टकसाल। जान को जानदार कर्म तिन कार
नानक नादरी नादार निहाल।।''

अब सब 'वाहे गुरु', कहने लगे। इस समय कर्मसिंह ने कुछ कहा। जब उसके होंठ फड़के तो सब चुप हो गए। सुखनसिंह, जो उसके पीछे उसको ढासना देकर बैठा था, कान के समीप मुख कर बोला, ''भापा!''

कर्मसिंह ने कहा, ''सुखन!''

''हां भापा!''

''मक्खन को बुलाओ।''

''यह बैठा है।''

''बिहारी?''

''बैठा हूं भापा?''

''सुनो, मेरी जेब से चाबी निकाल लो। देखो! धर्म पर अड़े रहना।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक क्षण तक चुप रहने के बाद कर्मसिंह ने कहा, "जसवीर कौर!"

"हां बाबा!"

"इस समय सब-कुछ यहां ही रह गया है। सुन रही हो?"

"हां बाबा!"

"दया, धर्म, दान और क्षमा ही साथ जा रहे हैं। समझी हो?"

"हां बाबा!" उसके मुख का रंग पीला पड़ रहा था।

कर्मसिंह ने कहा, "देखो, लड़ना नहीं। वाहे गुरु तुम सबको बुद्धि दे।" इसके साथ ही कर्मसिंह की गर्दन लुढ़क गई।

: 4 :

सुखन ने बाबा की जेब से चाबी ले सुन्दरी को दे दी। वह नहीं चाहता था कि बंटवारे से पहले चाबी उसके पास रहे।

बाबा की अर्थी धूम-धाम से उठी, बाजे बजे, अर्थी पर झंडियां और गोले लगाये गए। फूल-मखाने और छुआरे निछावर किये गए। आगे-आगे कीर्तन-मंडली थी। पीछे-पीछे औरतें शब्द गा रही थीं। सारा गांव बूढ़े की अर्थी के साथ था। गांव में सिक्खों के अतिरिक्त हिंदू भी रहते थे। अर्थी श्मशान के बाहर पहुंची तो एक हिंदू ने कह दिया, "बोलाई राम।" अन्य लोग इस पर बोल उठे, "राम भज राम।" एक सिख ने कह दिया, "शोर न मचाओ। कीर्तन सुनो।"

संस्कार हुआ। कड़ाह-प्रसाद बांटा गया। सबने खाया और सत श्री अकाल के अभिवादन के पश्चात् सब घर लौटे। घर पर ग्रंथ साहब का पाठ रखाया गया और तेरहवें दिन पाठ का भोग पड़ा। उस दिन भोज हुआ। सारे परिवार और गांव के सब लोगों को भोज खिलाया गया।

उस दिन सायंकाल परिवार के लोग घर में एकत्रित हुए। कर्मसिंह की लड़की कुलवन्ती अपने घरवाले सरदार समुन्दरसिंह और अपने लड़के, उसकी बहू और पोतों के साथ आई थी।

सुखनसिंह सबसे बड़ा था। उसने सबके सामने अपनी छोटी भाभी को संबोधित कर पूछा, "भाभी! हम सब अपनी जायदाद में हिस्सा लेने आये हैं। क्या है भापा के पास?"

"भैया!" सुन्दरी ने कहा, "मैं सौगन्धपूर्वक कहती हूं कि मैंने आज तक नहीं देखा कि उनके पास क्या है और कितना है। हां! बिहारी जरूर उसमें रखने और निकालने जाता था। भापा की चाबी आपने मुझको दी थी। वह यह है। अब आप ही देख लो।"

"क्यों बिहारी! क्या है और कहां है?"

"तायाजी! सब कुछ ठीक है। आप सब कुछ पहले विचार कर लें कि किस-किस को क्या-क्या और कितना-कितना लेना है।"

"हां! बिहारी ठीक कहता है। कुछ तो है ही। भूमि भी है। किस प्रकार बंटवारा होगा, यह लिख-पढ़ लो। तब जो कुछ नकद निकले और जो कुछ भूमि का दाम लगे सब जमा कर लो। फिर लिखे के अनुसार सबको मिल जाये।"

इस पर हिस्सेदारों के नाम लिखे जाने लगे। समुन्दरसिंह ने पूर्ण जायदाद के चार हिस्से करने चाहे।

"चौथा किस का?" मक्खनसिंह ने पूछ लिया।

"तुम्हारी बहिन का।"

सब चुप रहे। कुलवन्ती ने जब से उसका विवाह हुआ था, एक दिन भी अपना मुख गांव में आकर नहीं दिखाया था। सोहन ने शान्ति को भंग करते हुए कह दिया, "बाबा! मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताऊं?''

''क्या बताओगे?''

''घर के बच्चे-बूढ़े मर्द-औरतें सब मिलाकर हम सब पैंतीस बंदे हैं। जो कुछ नकद हो उसके पैंतीस हिस्से कर दिये जायें।''

''ओ सोहनू! यह धर्म-शास्त्र तुझको किसने सिखाया है?'' सरदार समुन्दरसिंह का विचार था कि जसवीर कौर ने ही उसको सिखाया होगा, इससे उससे पूछ लिया।

सोहनसिंह ने कह दिया, ''एक दिन बाबा मुझको यह सब बता रहे थे। वे सबकी गिनती करके बोले कि हम सब पैंतीस बंदे हैं। सबको बराबर-बराबर मिलना चाहिये। सब ने ही उनकी बराबर सेवा की है। नकदी सब उनकी कमाई है। वह सबमें बांट दी जाये। भूमि उनके पिताजी की है, इसके तीन हिस्से किये जायें।''

इस बात को सुन सबने कह दिया दिया, ''बाबा की इच्छा पूर्ण की जाये।'' इस प्रकार सबसे कम भाग मिलने वाला था मदनसिंह के परिवार को। वे केवल पांच प्राणी थे। इनकी तुला में सुखनसिंह के घर के चौदह प्राणी थे और मक्खनसिंह के घर के सोलह थे। इस पर सुखनसिंह ने अपनी भाभी सुन्दरी से पूछ लिया, ''भाभी? क्या कहती हो तुम?''

सुन्दरी ने दीर्घ निःश्वास छोड़कर कहा, ''जब भापा की यह इच्छा है तो मैं कैसे अस्वीकार कर सकती हूं? तुम सब जो कुछ भी दोगे मैं बड़ों का आशीर्वाद समझकर ले लूंगी।''

सुखनसिंह को उसके पिता ने एक बार कहा था, 'अपनी भाभी पर विश्वास रखो। वह देवी है।' आज उसकी समझ में आया कि भापा सत्य कहता था। उसने कह दिया, ''भाभी! मैं जानता हूं कि तुमको हानि हो रही है। इस पर भी यह विश्वास रखो कि वाहे गुरु सब ठीक करेगा। भापा की इच्छा का पालन होने दो।''

''कैसे पालन होने दें। इन पैंतीस में मेरे और मेरे बच्चों की गिनती नहीं है।''

''परंतु तुम हो कौन?'' सोहन ने कह दिया, ''तुमको कभी देखा नहीं। कभी तुम्हारी बात तक सुनी नहीं।''

''मैं तुम्हारे बाबा का बहनोई हूं। जानते हो? सरकार ने कानून बना दिया है कि लड़की का लड़कों के बराबर हिस्सा होता है।''

इस पर मक्खनसिंह की पत्नी ने कह दिया, ''बहिन कुलवन्ती अपने पति के ही बुजुर्गों की जायदाद में से लेगी। हमको अपनी जायदाद में से लेने दो।''

समुन्दरसिंह ने खड़े होकर कह दिया, ''देखो! मैं अभी थाने में रपट लिखाने के लिए जाता हूं। किसी ने मेरी अनुपस्थिति में तोशाखाना खोला तो हथकड़ी लगवा दूंगा। कुलवन्ती! तुम यहीं बैठना, मैं जा रहा हूं।''

सुखनसिंह इस झगड़े से बाप की और परिवार की बदनामी समझता था। इसलिए उसने हाथ जोड़कर समुन्दरसिंह की मिन्नत-खुशामद करनी आरम्भ कर दी। उसने कहा, ''जीजा! आप बैठिए। बताइए आप क्या चाहते हैं?''

''मैंने बताया कि जायदाद के चार भाग होने चाहिए। उसके पश्चात् अपने हिस्से में से अपने लड़के-लड़कियों को दिये जायें। बच्चे तो जने तुम्हारी बीवी और हिस्सा जाये मेरा? ऐसा नहीं हो सकता।''

मक्खनसिंह की पत्नी को इस कटाक्ष पर क्रोध चढ़ आया। उसने कह दिया, ''मैं सब फूंककर स्वाहा कर दूंगी, पर इस हमारे बच्चों की गिनती करने वाले को एक पाई भी नहीं लेने दूंगी। भापा के जीवन-काल में तो एक दिन भी नहीं आए और अब आये हैं जायदाद के मालिक बनकर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जाओ बहिन! चुप-चाप चली जाओ, नहीं तो फौजदारी हो जायेगी।"

समुन्दरसिंह उठकर घर से निकल गया। सब यह समझते थे कि वह थानेदार को बुलाने गया है। इस पर सब सुन्दरी का मुख देखने लगे। चाबी अभी भी सुन्दरी के पास थी। सुन्दरी ने अपने जेठ से कह दिया, "भैया! आज यह बंटवारा नहीं होगा। इससे आज सब आराम करो। कल किसी को बीच में सरपंच डाल लेना और उसके कहे मुताबिक बंटवारा कर लेना।"

मक्खनसिंह ने पूछा, "भाभी! तुम जायदाद में समुन्दरसिंह का हिस्सा समझती हो?"

"भैया! यह मेरी समझने की बात नहीं। बात आपकी और आपकी बहिन तथा बहनोई के समझने की है। उसको समझाने का एक ही तरीका है। किसी को पंच बनाकर उसके फैसले पर फूल चढ़ाओ।"

"मेरी तो राय है कि संदूक खोलकर सब को निकालकर उसके आने से पहले ही बांट लिया जाए।"

"यह तो पाप हो जाएगा। ऐसा आप नहीं कर सकोगे। पहले मेरी हत्या करनी होगी तब कोठरी का ताला खुलेगा।"

सुखनसिंह ने बात सम्हाली। उसने मक्खनसिंह से कहा, "भाभी ठीक कहती है। झगड़ा कर कचहरी में वक्त और रुपया बरबाद करने की क्या जरूरत है?"

"पर भापा! जमीन भी बांटी जायेगी क्या?"

"हां! नहीं तो सरकार तीस एकड़ से अधिक लेने का कानून बना रही है।"

इस पर दोनों भाई उठकर बाहर चले गए। परिवार की स्त्रियां और शेष मर्द कोठरी के बाहर लेटे रहे। सुन्दरी उठकर अपने कमरे में चली गई। उस समय जसवीर कौर अपनी सास के पास आ पहुंची और बोली, "माताजी! आप क्यों झगड़ा मोल लेती हैं। चाबी अपने जेठ के सामने रख दें। भगवान जाने बीच में कुछ है भी या नहीं?"

सुन्दरी की समझ में आ गया कि जसवीर कौर क्यों ऐसा कर रही है। वह सोचती थी कि जसवीर को अभी भी विश्वास है कि भीतर कुछ नहीं और सब कुछ वह निकालकर ले जा चुकी है। इससे वह मुस्करा दी और बोली, "बहू! भगवान और धर्म भी कुछ है या नहीं? सारे परिवार की अमानत मैं किस को दे दूं?"

जसवीर कौर यह सुनकर उठी और बाहर चली गई। बिहारीसिंह आया तो उसने मां को एक दूसरी बात कह दी। उसने कहा, "यह सोहन ने सब गड़बड़ कर दी है। अब उसके यह कहने पर कि बाबा की यही इच्छा थी, हमको सबसे अधिक हानि रहेगी।"

"बेटा! मैं तो कुछ जानती नहीं। मेरे लिए तो वे पूज्य थे। इससे मैं उनकी बात पर फूल चढ़ाये बिना नहीं रह सकती। रही हानि-लाभ की बात। धन प्रभु की माया है। सबके पास एक समान नहीं होता। न ही यह सदा रहता है। जितना अपने इन दो हाथों से कमाया जा सकता है उस पर ही संतोष करना चाहिए।"

"मैं तो समझता हूं कि मैंने वह सब कुछ फिर बीच में ही रखकर भूल की है।"

"पर मैं समझती हूं कि तुमने अमानत को ठीक जगह पहुंचाकर धर्म का काम किया है।"

जसवीर कौर पहले तो अपने सब-कुछ ले जाने पर बहुत प्रसन्न थी। परंतु फिर अपनी करतूत का भेल खुल जाने के भय से खाट पर लेट रही। वह कभी सोचती थी कि उसने ठीक ही किया है जो सब कुछ पहले निकालकर ले गई है। फिर सोचती कि जब घर वालों को पता चलेगा कि अंदर तो कुछ भी नहीं, तो खूब होहल्ला होगा। यह भी सम्भव है कि हत्यायें हो जायें। इसी संभावना पर भयभीत हो वह अपने किए पर पश्चाताप करने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 5 :

समुन्दरसिंह थानेदार के पास गया तो वह गांव के सरपंच को लेकर उसके साथ चल पड़ा। घर पर पहुंचा तो देखा कि परिवार के सब प्राणी कोठरी के बाहर बैठे थे। कोठरी को ताला लगा था। सरपंच ने एक ऊंची चौकी पर बैठकर पूछा, "क्या झगड़ा है?"

सुखनसिंह ने अपनी बात कह दी। इस पर समुन्दरसिंह ने कह दिया, "कर्मसिंह ने मरने के समय सुखनसिंह को चाबी देते हुए कहा था, 'धर्म पर खड़े रहना।' परंतु अब ये लोग धर्म से बदल रहे हैं।"

सरपंच ने पूछा, "क्यों मक्खनसिंह! क्या सरदार ठीक कहता है?"

"जी हां! यह ठीक कहता है।"

"तो फिर झगड़ा क्या? तुम सब समझदार हो। धर्म पर खड़े रहो और अपना-अपना हिस्सा ले लो।"

समुन्दरसिंह ने कह दिया, "ये जायदाद के पैंतीस हिस्से करना चाहते हैं और बाल-वृद्ध सबको बराबर-बराबर हिस्सा देना चाहते हैं।"

"क्यों?"

"इसलिए," सोहन ने फिर आगे बढ़कर कह दिया, "कि बाबा ने एक दिन कहा था कि नगदी सब मेरी कमाई है। यह मैं उन सबको देता हूं जिन्होंने मेरी सेवा की है। बाबा ने पैंतीस की गिनती करके कहा था कि सबने मेरी सेवा की है, सबको ही बराबर-बराबर हिस्सा मिलना चाहिए। भूमि के विषय में बाबा ने कहा था कि यह उनके पिता की है। इसलिए इसके तीन हिस्से कर उनके तीनों बेटों को दी जायेगी।"

"यह तुम सत्य कहते हो?"

"हां चौधरीजी! मैं गुरुमहाराज की सौगन्ध खाकर कहता हूं कि बाबा ने यही कहा था।"

"तुम किसके बेटे हो?"

"बिहारीसिंह का।"

"कितने भाई-बहन हो?"

"हम दो ही हैं। मेरी एक बहन है।"

"तो तुम को तो कुछ भी नहीं मिलेगा?"

"पर चौधरी, यह धर्म की बात हो रही है, मिलने-विलने की नहीं।"

जसवीर इस समय सबसे पीछे खड़ी रो रही थी। चौधरी ने उसको देखा तो पूछ लिया, "तुम क्यों रोती हो?"

उत्तर समुन्दरसिंह ने दे दिया, "यह सोहन इसी का बेटा है और इसके कहने से इस बेचारी को सबसे कम मिलेगा। सुखन के घर के चौदह प्राणी हैं। मक्खन के सोलह हैं और इसके घर के केवल पांच। इसलिए यह रोती है।"

"और तुम कौन हो?"

"मैं कर्मसिंह का दामाद हूं। मेरी पत्नी कुलवन्ती का बंटावारे में कहीं जिक्र ही नहीं।"

"अच्छा! कल पंचायत होगी और फैसला होगा। चाबी किस के पास है?"

"भाभी सुन्दरी के पास।"

"चाबी मुझको दे दो। कल सब पंचों के सामने कोठरी खोली जायेगी।"

सुन्दरी ने कोठरी और संदूक की दोनों चाबियां सरपंच को दे दीं। थानेदार ने एक सिपाही को वहां बैठा दिया, जिससे फौजदारी न हो जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगले दिन गांव की पंचायत बैठी। सबसे पहले सुंदरी के बयान हुए, फिर समुन्दरसिंह ने अपनी मांग उपस्थित कर दी। उसने कहा कि सब चल और अचल सम्पत्ति के चार भाग होने चाहिए। तीन तो कर्मसिंह के पुत्रों के लिए और एक उनकी पुत्री के लिए।

इसके पश्चात् सुखनसिंह और मक्खनसिंह के बयान हुए। बिहारीसिंह के भी बयान हुए। बिहारीसिंह ने केवल इतना कह दिया, ''धर्म जो कहता है, वह मुझको मंजूर है।''

इसके बाद पंचायत ने सबको बाहर निकाल दिया और पंचायत में बहुत वादविवाद के बाद फैसला हुआ। फैसला सुनाते हुए सरपंच ने कहा—

''पंचों ने सोहन के बयान को सच्चा माना है। इसलिए धर्म यह है कि चल सम्पत्ति के पैंतीस भाग किए जायें। मर्द-औरतें, बाल-वृद्ध सबको एक-एक हिस्सा दिया जाये। स्वर्गवासी जीव का कहना था कि ये पैंतीस ही उसकी सेवा करते रहे हैं और इनको ही उसकी जायदाद का हिस्सा दिया जाये। इनमें कुलवन्ती अथवा उसके बच्चों का कोई हक नहीं है।

''शेष रही जमीन की बात। धर्म से तीन हिस्से बनते हैं। कानून से चार। हम कानून से धर्म ऊंचा मानते हैं। इस कारण हमारा फैसला है कि तीन हिस्से ही तीनों भाइयों को मिलें। धर्म से लड़की का कोई हिस्सा नहीं बनता।

''इस पर भी यदि कुलवंती धर्म पर फूल नहीं चढ़ाती तो वह अदालत में जा सकती है।''

इसके बाद समुन्दरसिंह ने कह दिया, ''मैं पंचायत के फैसले की जजी में अपील करूंगा। इसके लिए कुछ खुर्द-बुर्द न किया जाय।''

इस पर सरपंच ने आज्ञा दे दी कि पंचों के सामने सब वस्तुओं की सूची बन जाये और उन वस्तुओं को किसी के पास अमानत के रूप में रख दिया जाये।

ऐसा ही किया गया। पूर्ण सम्पत्ति सोना-चांदी और नकदी तोली और गिनी गई। साथ ही उसकी सूची बनाकर सबके हस्ताक्षर करा लिये गए। सब सामान सुन्दरी के हवाले कर उससे रसीद बनवा ली गई। सरपंच ने पंचायत का फैसला लिखकर नीचे लिख दिया कि तीन महीने में जिसे अपील करनी हो कर दे अथवा यही फैसला पक्का होगा।

जब सब विदा हो गये तो जसवीर कौर ने अपने पति से कहा, ''आपने जमीन पर जो मेहनत की और खून-पसीना एक किया तो आपको उसका क्या मिला!''

''मुझको धर्म का फल मिलेगा।''

''मैं यह धर्म-कर्म व्यर्थ की बात मानती हूं। मुझको पहले ही इस बात की आशा थी कि हमको कुछ भी नहीं मिलेगा। हमारी मेहनत और सेवा सब हराम में जायेगी। इसलिए मैंने भी अपना धर्म-पालन किया है। अपनी मेहनत का फल मैंने पहले ही निकाल लिया है।''

जसवीर कौर का विचार था कि उस दिन जल्दी-जल्दी में उसने बहुत-कुछ पीछे भी छोड़ दिया है। इस पर भी उसके मन में संतोष था कि उसने बहुत कुछ, अपने भाग का, पहले ही निकाल लिया है। अब उसने अपनी कार-गुजारी अपने पति को भी बता दी।

बिहारी ने पहले तो यह उचित समझा कि वह भी अपनी कार-गुजारी बता दे, परंतु फिर कुछ विचारकर उसने पूछा, ''सत्य?''

''जी हां! मैं आपकी तरह बुद्धू नहीं हूं।''

''एक दिन चलकर दिखाओ तो सही कि कितना ले गई थीं?''

समय पाकर जसवीर कौर अपने पति को लेकर अपने बाप के घर गई और संदूक निकालकर ताली खोल देखने लगी तो भौंचक्की हो देखती रह गई। बिहारी सिंह उसके पीछे खड़ा था। उसने अपने मन की बात छिपाते हुए पूछ लिया, ''जसवीर! क्यों, क्या हुआ?''

''किसी ने सोना-चांदी सब निकाल लिया है और कंकड़ आदि भर दिये हैं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"किस ने भर दिये हैं?"

"मेरे पिताजी ने ही ऐसा किया होगा?"

"मेरा मन कुछ और ही कहता है।"

"क्या?"

"यही कि परमात्मा ने तुम्हारे इस काम को अधर्म समझा और सोने-चांदी के स्थान पर ये कंकड़-पत्थर भर दिये हैं।"

"यह सब बकवास है। कहां है परमात्मा जो ऐसा कर सकता है? यह तो निश्चय ही मेरे मां-बाप की करतूत है।"

"नहीं जसवीर! यह परमात्मा की ही बात है।"

इस पर जसवीर और उसके पिता बलवन्तसिंह में बहुत झगड़ा हुआ और बाप-बेटी में सदा के लिए लड़ाई हो गई।

बिहारीसिंह के मन में एक बार तो आया कि वह सब-कुछ बता दे, परंतु उस बेईमान बेटी का बाप के साथ झगड़ा ठीक ही प्रतीत हुआ और वह चुप रहा।

वे दोनों उल्टे पांव अपने गांव को लौट आये। बिहारीसिंह ने मार्ग में जसवीर को बता दिया था कि माल चुराने के विषय में वह किसी को भी न बतावे।

घर पहुंच उसने अपनी बूआ को घर बैठी मां से बातें करते देखा तो पूछा, "बूआ! क्या हुआ है, किसलिये आई हो?"

उत्तर सुन्दरी ने दिया, "बूआ कहती है कि इनको घर से निकाल दिया गया है।"

"क्यो?"

कुलवन्ती ने कह दिया, "वे अपील लिखवाकर लाये थे और कहने लगे कि मैं हस्ताक्षर कर दूं। मैंने इन्कार किया तो मार-मारकर घर से निकाल दिया है।"

"पर बूआ! तुमने इन्कार क्यों किया?"

"सरपंच कहता था कि धर्म से लड़की का भाग नहीं होता। मैंने यही सोचा कि अब इस बूढ़ी अवस्था में भला धर्म की बात को क्यों छोड़ूं! इसलिए मैंने हस्ताक्षर नहीं किये।"

बिहारीसिंह भौंचक्का हो बूआ का मुख देखता रह गया।

तीन महीने बाद जब अपील की मियाद बीत गई तो बंटवारा होने लगा। सुखनसिंह ने कह दिया, "भाई! धर्म से ठीक तो हो रहा है परंतु बहिन की बलि धर्म पर चढ़ानी अच्छी प्रतीत नहीं होती। इसलिए मेरा विचार है कि समुन्दरसिंह के कहे अनुसार बंटवारा कर उसका हिस्सा उसको दे दिया जाये।"

सुन्दरी ने कहा, "भैया! सोच लो, बहुत हानि हो जायेगी तुम दोनों को?"

"मैंने सब विचार कर लिया है भाभी! क्यों मक्खन! क्या कहते हो?"

"भापा! बहिन का सुहाग कायम रहे मैं यह चाहता हूं।"

"परंतु भापा!" बिहारी ने कह दिया—"मुझको अकारण लाभ होगा।"

"तो हो जाये। समुन्दरसिंह तो प्रसन्न हो जायेगा।"

"परन्तु धर्म कहां गया?"

बहिन की अपने पति से सुलह होगी। यह क्या कम धर्म की बात है?"

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तलाक

"तो जाती क्यों नहीं न्यायालय में?"

"वहां क्या करने के लिए जाऊं?"

"मुझे तलाक देने।"

"क्यों दूं तलाक?"

"मैं दुराचारी हूं, मैं तुम्हें खर्चा नहीं देता, तुम्हारे बच्चे को मिठाई लाकर नहीं देता और भी जो-जो कुछ तुम चाहती हो उस सबके लिए।"

ऐसी चुनौती सुनकर तो सदारानी टुकर-टुकर मुख देखती रह गई। उसका पति सुरेन्द्रमोहन मुस्कराता हुआ, अपनी आरामकुर्सी पर बैठा था। सिगार का कश लगा धुआं छोड़ता हुआ और छत की ओर देखता हुआ वह बोला—"क्या मजे में कह दिया, मत लाया करो इन लड़कियों को घर में। घर में न लाऊं तो कहां ले जाऊं?"

"मैं तो यह कह रही थी कि आप मेरे खाने-पीने और वस्त्रादि के लिए तो कुछ देते नहीं और जब ये लड़कियां आती हैं तो घर में लहर-बहर लग जाती है।"

"यह तो तुम ठीक कह रही हो। पर मैं विचार करता हूं कि तुमको मैं क्यों दूं? दो लकड़ियां जलाकर उसके चार चक्कर काट लेने से क्या मैं तुम्हारा देनदार हो गया हूं?"

"आप इस बेटे के बाप हैं। इस पर ही दया कर इसकी मां को कुछ दे दिया करें। मैं अपनी सौगन्ध खाकर कहती हूं कि कल से एक भी दाना मेरे पेट में नहीं गया।"

"दाने तो मेरे पास बहुत हैं, पर तुम्हें क्यों खाने को दूं? तुम अपना ठिकाना कहीं अन्यत्र क्यों नहीं बना लेतीं? घर छोड़ोगी तो फिर तुमको दूसरी लड़कियों के यहां आते और खाने-पीते देख दुःख नहीं होगा।"

"पर जाऊं कहां?"

"अपने बाप के घर जा सकती हो।"

"और यह बच्चा?"

"इसकी मुझे आवश्यकता नहीं।"

"तो विवाह क्यों किया था?"

"पत्नी पाने के लिये किया था किंतु यह तो अपने-आप बिना इच्छा किये ही आ पहुंचा है।"

अपने पति की इस जीवन-मीमांसा का उत्तर पत्नी नहीं दे सकी। सुरेन्द्र उसको कई बाद कह चुका था कि उसे वह पसंद नहीं है और जहां उसके सींग समायें वह जा सकती है। आज उसने यह भी कह दिया था कि भारत सरकार की कृपा से उसके लिए अपने इस नालायक पति को छोड़ देने का मार्ग प्रशस्त हो चुका है।

सुरेन्द्र अपने काम पर जाने के लिये तैयार था और उसकी पत्नी अपने खाने-पीने के लिए उससे पैसे मांगने आई थी। उस समय उनमें उक्त वार्तालाप हुआ था। सुरेन्द्रमोहन जाने लगा तो उसे एक बात स्मरण हो आई। उसने कहा, "अच्छा, एक काम करो। मैं तुमको पचास रुपये देता हूं। इन रुपयों में तुम चार व्यक्तियों के खाने के लिये सामान तैयार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
क़रना । एक बोतल व्हिस्की, दो मुर्ग, नान, प्याज, टमाटर, खीरा, चुकन्दर की सलाद, मेज पर सफेद चादर और पलंग पर धुला बिस्तर, कुछ फूल इत्यादि भी । बताओ कर सकोगी?''

''चार में कौन-कौन होगा?''

''मैं, सरोज, मनोज और चौथी तुम।''

''दोनों, एक साथ?''

''हां।''

''परंतु पचास रुपये पूरे हो जायेंगे क्या?''

''देखो पैंतीस की बोतल, दस रुपये के दो मुर्ग, एक रुपया सलाद के लिये, घी-मिर्च, नमक-मसाला आदि के लिये चार रुपये।''

''और इस समय पेट भरने के लिये? यदि कुछ खाऊंगी नहीं तो यह सब तैयार कैसे करूंगी?''

''अच्छा पांच रुपये और ले लो। परंतु देखो, हिसाब देना होगा?''

सदारानी चुप रही। सुरेन्द्र ने पचपन रुपये उसके सम्मुख फेंके और सीढ़ियों से नीचे उतर गया।

सदारानी ने पिछले मास एक चूड़ी बेचकर मास-भर निर्वाह किया था। इस बार वह दूसरी चूड़ी बेचने वाली थी जब कि उसके मन में विचार आया कि जीवन बहुत लम्बा है। इस प्रकार कब तक चलेगा और जब सब चूड़ियां बिक जायेंगी और पतिदेव को पता चलेगा तो वह चोरी करने का आरोप लगा सकता है। तब वह किस-किस को बताती फिरेगी कि उसने अपने पेट भरने तथा बच्चे के दूध के लिये यह सब किया था। आज वह अपने पति को बताने वाली थी कि वह चूड़ियां बेचकर अपने खाने का सामान खरीद रही है। उसके ऐसा कहने के पूर्व ही तलाक की बात चल पड़ी थी और फिर सरोज, मनोज के आने का प्रस्ताव हो गया।

जब उसके पति ने उसके सामने पचपन रुपये फेंके तो उसने उठाये नहीं। सुरेन्द्रमोहन नीचे उतर गया तो उसने रुपये उठाये और गिन डाले। अब वह विचार करने लगी कि क्या वह इन रुपयों से अपने पति के भोग-विलास का प्रबन्ध करे? एक बार पहले भी उसने ऐसा किया था। तब उसके मन में यह भावना थी कि वह अपने खाना बनाने तथा दावत का प्रबन्ध करने में योग्यता दिखाकर अपने पति को प्रसन्न कर लेगी। परंतु ऐसा हुआ नहीं। उसने पुनः ऐसा करने से इन्कार कर दिया था। प्रायः सप्ताह में एक बार उसका पति इस प्रकार की दावतें किया करता था। और पीछे कई बार, जब सदारानी ने इस प्रकार की दावत के प्रबन्ध करने से इंकार कर दिया तो उसने घर का सब खर्च बंद कर दिया और जब भी वे लड़कियां आतीं तो वह किसी होटलत वाले से प्रबन्ध करवा लेता और पचास के स्थान पर सत्तर-पचहत्तर व्यय कर देता। इस प्रकार अधिक व्यय होने पर वह और भी चिढ़ जाता और घर-खर्च न देने के लिए उसका संकल्प दृढ़ होता जाता।

x x x

सदारानी ने अपने मन में निश्चय किया कि वह अपने पति के इस प्रकार के भोग-विलास की प्रबन्धिका नहीं बनेगी। आज जब सुरेन्द्रमोहन ने उसको रुपये दिये तो उसने इन्कार नहीं किया। वह चुप रही। उसके पति ने इसको स्वीकृति मान लिया और निश्चिन्त हो अपने कार्यालय चला गया।

सदारानी ने रुपये उठाये तो इस निश्चय के साथ कि वह अब इस घर को छोड़ देगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उसका पिता लखनऊ में रहता था। बहुत साधारण वृत्ति का व्यक्ति था और एक बहुत बड़े परिवार के बोझ के कारण वह लड़की की सहायता करने में असमर्थ था। यदि सदारानी अभी तक वहां नहीं गई थी तो इसी कारण कि वह उसके दुःख का कारण बनना नहीं चाहती थी।

परंतु जब पानी नाक से भी ऊपर आ गया तो डूबने से बचने के लिए अन्तिम उपाय यही प्रतीत हुआ और वह लखनाऊ जाने के लिऐ तैयार हो गई।

जब जाने का विचार पक्का हुआ तो यह समझकर कि वह जीवन-भर के लिए जा रही है उसने अपने सब आभूषण एकत्रित किये, उन्हें अपने तथा बच्चे के कपड़ों के साथ संदूक में रखा और तांगे में बैठ स्टेशन जा पहुंची। दिन के ग्यारह बजे शाहजहांपुर से गाड़ी में बैठकर साढ़े सात बजे सायं वह अपने पिता के घर जा पहुंची।

सदारानी का पिता अपने कार्यालय से आकर पड़ोस के दो बच्चों को पढ़ाने के लिए जाया करता था। वह वहां गया हुआ था। उसका भाई बी० ए० में पढ़ रहा था। वह भी आठवीं कक्षा के एक छात्र को पढ़ाया करता था। उसके चार और बहन-भाई तथा उसकी मां उस समय घर पर थे। लड़की को बिना किसी प्रकार की सूचना दिये आती देख मां मुख देखती रह गई। उसके भाई-बहन भी उसको विस्मय से देख रहे थे।

पार्वती ने पूछा, "सदा! क्या बात है, इस प्रकार किस कारण आई हो?"

"मां मैं पति का घर छोड़ आई हूं। पिताजी कहां हैं?"

"वे पढ़ाने गये हैं, आते ही होंगे।"

"और विनोद?"

"वह भी पढ़ाने गया है। आजकल महंगाई बढ़ गई है कि एक आदमी की कमाई एक के लिए ही पर्याप्त नहीं होती।"

सदारानी ने अपना संदूक मां के कमरे में रख दिया और अपने सबसे छोटे भाई जगदीश को बाजार भेजकर बच्चे के लिए दूध मंगवाया।

पार्वती विचार कर रही थी कि यह एक और बोझ सिर पर आ पड़ा है। भगवान् जाने क्या कर आई है जो एकाएक इस प्रकार आ धमकी है। छः मास पूर्व वह आई थी, उस समय भी वह अपने पति के व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं थी। परंतु वहां से सदा के लिए चले आने का तो उस समय कोई विचार था ही नहीं।

पार्वती रात का खाना बना रही थी। अतः अनुमान से उसने एक व्यक्ति के लिए और आटा छान लिया। एक चतुर गृहिणी की भांति इस महंगाई के युग में वह एक दाना भी व्यर्थ गंवाना नहीं चाहती थी।

बाजार से दूध आया तो गरम कर बच्चे को दिया गया। वह दूध पीकर सो गया। सदारानी ने अड़तालीस घंटों से भोजन नहीं किया था। अब वह उत्सुकता से रोटी बनने की प्रतीक्षा कर रही थी। इस कारण वह उठी और मां से बोली, "मां! हटो तो, आज मैं पका देती हूं।"

सदारानी का पिता जब पढ़ाकर आया तो उसने अपनी बेटी को रसोई में रोटी सेंकते देखा तो अपनी पत्नी को पृथक् ले जाकर पूछने लगा, "कैसे आई है सदा?"

"मालूम होता है, पति से लड़कर आई है।"

"लड़कर आना तो विचित्र नहीं हो सकता। भय तो इस बात का है कि कहीं घर से निकाल न दी गई हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह आप ही उससे पूछ लीजियेगा। मुझे तो बहुत ही बुरी बात सुननी न पड़ जाय इससे भय लगता है।"

"क्या बुरी बात हो सकती है?"

"लड़की पर कोई झूठा-सच्चा आरोप न लग गया हो और घर वाले ने धक्के दे-देकर निकाल दिया हो।"

"अच्छा, बच्चे सो जायें तो बात करेंगे। उनके सामने इस प्रकार की बातें ठीक नहीं होंगी।"

X X X

रात के भोजनोपरान्त सदारानी ने अपनी पूर्ण बात अपने माता-पिता को सुना दी। सब छोटे बच्चे अपनी-अपनी पढ़ाई कर रहे थे। केवल विनोद उनके पास बैठा सुन रहा था। वह अब घर की समस्याओं को सुन, समझकर उनमें सहायता दिया करता था। पिता ने उसको सदा की बात सुनने के लिए बुला लिया था।

"तो अब क्या करोगी?"

"वहां अकेली रहती तो व्यर्थ में बदनाम हो जाती, इस कारण यहां चली आई हूं।"

"ये पांच आभूषण पूर्ण जीवन-भर साथ दे सकेंगे क्या? तुम जानती ही हो कि मैं तुम्हारी अधिक सहायता नहीं कर सकता। यहां तो सब सज्ञान प्राणी मेहनत करते हैं और जीवन चलाते हैं। सबके यत्न करने पर भी पेट पूरा नहीं भरता।"

"पिताजी! मैं यह सब जानती हूं। यह जानती हुई भी मैं यहां आई हूं। आप पर बोझ बनने के लिए नहीं। मैं भी जीवन-यापन के लिए कुछ-न-कुछ करूंगी।"

विनोद कहने लगा, "पर बहिन! जीजाजी ने ठीक ही तो कहा था कि उनको तलाक दे सकती हो?"

"दे तो सकती हूं, परंतु मैं देना नहीं चाहती।"

"क्यों?"

"विनोद! तुम समझ नहीं सकोगे। मैं अब दूसरा विवाह नहीं करूंगी। जब विवाह ही नहीं करना तो तलाक देने से क्या लाभ होगा? एक बार तलाक हो जाने के बाद पुनः सुलह के लिए तो कोई स्थान ही नहीं रह जाता।"

"परंतु तुम इस प्रकार कितने दिन तक जीवन चला सकोगी?"

सदारानी इस प्रश्न पर मुख देखती रह गई। इसका उत्तर जानती तो थी परंतु भविष्य के विषय में कुछ भी कहने और उसमें किसी प्रकार का दावा करने का उसमें साहस नहीं था। तो भी वर्तमान पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए उसने कहा, "विनोद! धन-वैभव और अकिंचनता का सम्बन्ध विवाह करने अथवा न करने के साथ नहीं है। तुम लोग भी तो जीवन-संघर्ष चला रहे हो। यहां तो माता-पिता में झगड़ा नहीं। दोनों परस्पर-प्रेम से रहते हैं।"

"पर बहिन! हम तो आशा करते हैं कि कुछ ही वर्षों में हमारी स्थिति बदल जाएगी। दो वर्ष में मैं बी० ए० कर लूंगा और फिर मोहन और जगदीश भी तैयार हो जायेंगे। सब मिलकर रहेंगे तो घर में सम्पन्नता हो जायेगी।"

"यह आशा ही तो मनुष्य के जीवन का आश्रय है। इसी के भरोसे तो मनुष्य दुर्गम-से-दुर्गम कठिनाइयां पार करने की क्षमता प्राप्त करता है। विनोद! यह मुझमें भी विद्यमान है। पिताजी ने कुछ पढ़ा दिया था, उसके भरोसे मैं जीवन-यापन तथा आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उन्नति करने की आशा रखती हूं। मैं भी तुम्हारी भांति आशा कर रही हूं कि यह बच्चा बड़ा होगा, पढ़-लिखकर विद्वान् बनेगा और फिर घर में सम्पन्नता का आगमन होगा।''

''और तब तक तुम बूढ़ी हो जाओगी।''

''तो फिर क्या हुआ? यह तो सुखी हो जाएगा। उसकी सुख-सुविधा से मेरे मन को तुष्टि होगी।''

''क्या तुष्टि होगी?''

''यही कि मैंने अपने परिश्रम से अपने पुत्र को संसार में सिर ऊंचा करने के लिए अवसर उपलब्ध कराया है। विनोद! गरीबी और अमीरों की बातें विवाह से सम्बन्धित नहीं हैं। इसका सम्बंध भाग्य और पुरुषार्थ से है।''

''क्यों पिताजी!'' विनोद ने निरुत्तर होते हुए और अपने पिता की बात को आगे ले चलने के लिये पूछा, ''आप क्या समझते हैं?''

''बेटा! सदारानी ठीक कहती है। विवाह के साथ दारिद्रय चला ही जायेगा, यह निश्चित नहीं। यह भाग्य की बात है परंतु विवाह तो किसी अन्य बात के लिये किया जाता है। बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि भी अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं रख सकते, इस कारण समाज ने इस नियंत्रण में सुविधा के लिये ही विवाह-प्रथा बनाई गई है। मैं तो सदारानी को इस दिशा में विचार करने की बात कह रहा हूं। क्या वह जीवन को अकेली चला सकेगी?''

यह फिर भविष्य में होने वाली सम्भावना की ओर संकेत था। सदारानी ने व्यर्थ का अभिमान और शौर्य दिखाने की अपेक्षा कहा, ''पिताजी! आप बड़ों का आशीर्वाद और संरक्षण प्राप्त होता रहा तो वह दुस्तर सागर भी पार हो ही जाएगा। कौन व्यक्ति है जो भविष्य के सम्भावित भय से त्रसित, वर्तमान को विकृत करने का यत्न करेगा। इस प्रकार विचार करना भी मैं ठीक नहीं समझती। मुझको यत्न करने दीजिये और कहीं मार्ग से विचलित होने लगूं तो आप सचेत कर दीजिये।''

विनोद ने पुनः वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हुए कहा, ''परंतु इस दुर्घटना का पूर्ण बोझ और कष्ट तो तुम केवल अपने ही कंधों पर उठाने की योजना कर रही हो। उस दुष्ट को क्या दण्ड मिलेगा? उसे तो तुमने स्वतंत्रता से गुलछर्रे उड़ाने के लिये मैदान खाली छोड़ दिया है?''

''भैया मैं उनके विषय में नहीं सोच रही। मेरी अनुपस्थिति में वे आनंद में होंगे अथवा दुःख में, मैं विचार कर चिंता करने की स्थिति में नहीं हूं। मैं उनकी सुख-सुविधा में सहायक होने की स्थिति में भी नहीं हूं। मैं तो अपने विषय में ही विचार और उपाय कर सकती हूं।''

''मैं तो चाहता हूं कि कोर्ट में तलाक की प्रार्थना कर दी जाए और यत्न किया जाय कि बच्चे के पालन-पोषण के लिये उनसे खर्चा मिल जाय।''

उसके पिता ने कहा, ''इस प्रक्रिया में कम-से-कम एक वर्ष लग जाएगा। उसमें सदारानी को अपने पति के दुश्चरित्र होने की कहानी सुनानी पड़ेगी। साथ ही केवल सुनाने से तो काम बनेगा नहीं। अपने कथन के लिये प्रमाण और साक्षी भी प्रस्तुत करने होंगे। मैं समझता हूं कि मुकदमेबाजी में व्यर्थ का धन और शक्ति का व्यय नहीं करना चाहिये। यदि सदारानी को तलाक के बाद भी विवाह नहीं करना है तो फिर इस सब झंझट की आवश्यकता ही क्या है?''

''परंतु पिताजी! जीजाजी को शिक्षा किस प्रकार मिलेगी?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"शिक्षा तो उसका शिक्षक ही उसको देगा। सदारानी को मैंने उसका शिक्षक बनाकर नहीं भेजा था। विनोद एक बात और समझ लो। तलाक देने से जो दण्ड मिलता है वह पति को नहीं, वरन् पत्नी को मिलता है। इसकी अवस्था में तो सुरेन्द्रमोहन को अपनी पत्नी को तंग करने अथवा मारने-पीटने का पुरस्कार मिलेगा। नहीं, मेरी सम्मति में तलाक के लिये झगड़ा करना लाभ की बात नहीं।"

"परंतु तलाक का कानून बनाने वालों का तो यह कहना है कि स्त्रियों के सुख-वर्द्धन के लिये इसका निर्माण किया गया है।"

"कहते होंगे। परंतु अनुभव तो इसके विपरीत ही प्रमाण प्रस्तुत कर रहा है।"

x x x

सुरेन्द्रमोहन की मित्रता अपने ही कार्यालय में काम करने वाली दो लड़कियों से हो गई थी। पहले तो वह एक-एक से पृथक्-पृथक् सम्बंध रखता था। बाद में जब उन लड़कियों को पता चल गया तो फिर दोनों से इकट्ठा व्यवहार रखने लगा। उनको बारी-बारी से निमन्त्रण देता था। जब सदारानी को उसके उनसे अनुचित संबंध का ज्ञान हुआ तो वह उनको घर पर लाने लगा। समय व्यतीत होता गया और सुरेन्द्रमोहन अपने विकृत मार्ग पर आगे ही बढ़ता चला गया।

पत्नी से उसकी तनातनी रहने लगी और उसने उसको खर्चा देना बंद कर दिया। जब स्थिति असह्य हो गई तो घर का ताला लगा सदारानी अपने पिता के घर चली गई।

उस दिन सुरेन्द्रमोहन ने सरोज और मनोज दोनों को एक साथ ही रात के भोजन पर आमन्त्रित किया था। वह पैसे वाला आदमी था। तीनों ही अपने-अपने उद्देश्य में लीन थे। सुरेन्द्र सुख भोग में और लड़कियां उसका धन-शोषण में।

सायंकाल अपने कार्यालय से उठ सुरेन्द्रमोहन किसी निश्चित रैस्टोरां में उनमें से एक से मिला करता था। वहां चाय पीकर प्रायः सिनेमा देखने के लिए जाया करता था। तदनन्तर किसी अन्य रैस्टोरां में भोजन के लिए जाया करता था। फिर घर पर ले आता और रात-भर घर पर रख प्रातः वापस उसके घर भेज दिया करता था।

आज के कार्य-क्रम में कुछ अंतर था। दोनों को एक साथ आमन्त्रित किया गया था। सिनेमा से वह उनको सीधा घर पर लाने वाला था। भोजन का प्रबन्ध घर पर ही था। परंतु रात के साढ़े नौ बजे जब वह घर पर आया तो मकान को ताला लगा देख वह भौंचक्का हो गया।

ताला बहुत मजबूत था, उसको तोड़ने में कठिनाई हुई। आधे घंटे से अधिक तो ताला तोड़ने में ही लग गया। अंदर जाकर उसने देखा कि भोजन के तो कहीं चिह्न तक नहीं थे और साथ ही उसकी पत्नी के वस्त्रों का तथा आभूषणों का संदूक भी खाली पड़ा था।

अब सुरेन्द्रमोहन देख रहा था कि घर में से क्या-क्या गया है तो बड़ी लड़की सरोज ने पूछ लिया, "क्या हुआ है?"

"देवीजी सब-कुछ लेकर भाग गई हैं।"

"सबकुछ से क्या मतलब?"

"अपने वस्त्राभूषण और....और न जाने क्या-क्या।"

"आपके पतलून-कोट तो नहीं ले गई?"

सुरेन्द्रमोहन ने मुस्कराते हुए कहा, "नहीं।"

"और आपका पर्स?" मनोज ने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं, वह भी है।"

"आपकी चैक-बुक?"

मेज का दराज खोल सुरेन्द्र ने कहा, "वह भी है।"

"तो फिर चिंता की कोई बात नहीं।" सरोज ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा।

मनोज कहने लगी, "मुझे तो भूख लगी है।"

सरोज कहने लगी, "हां अब बताइये, खाना कहां होगा। दस बजे तो होटल बंद हो जाते हैं।"

"मैं बाजार जाता हूं, यदि कुछ मिल गया तो ले आऊंगा।"

"यदि कुछ न मिला तो क्या होगा?"

"कुछ नहीं, ठंडा पानी पीकर सो रहेंगे।"

यह कह वह मकान के नीचे उतर गया। प्रायः सभी दुकानें बंद हो चुकी थीं। एक भटियारिन की दुकान खुली थी। वह बहुत प्रातःकाल रेल की वर्कशाप को जाने वालों के लिए चबेना भून रही थी। सुरेन्द्रमोहन उसकी दुकान पर खड़ा हो गया। वह विस्मय में बाबू की ओर देखकर पूछने लगी, "क्या चाहिए बाबू?"

"चार आने का चबेना दे दो।"

भटियारिन ने आधा सेर चने-मूंग इत्यादि तोलकर दे दिये। सुरेन्द्रमोहन ने उन्हें रूमाल में बांधा और घर आ गया।

जब उसने रूमाल खोलकर लड़कियों को दिखाया तो सरोज के मुख से निकला, "सब मजा किरकिरा हो गया। मैं तो घर जाती हूं। मां को कहूंगी तो खाना मिल जायेगा।"

मनोज ने भी उठते हुए कहा, "हमको दीजिए, जो देना चाहते हैं। मैं भी जाऊंगी।"

"मैं तो मिठाई लेने के लिए गया था। किसी हलवाई की दुकान खुली ही नहीं थी। मैं क्या करता?"

"करना क्या है, आप चबेना खाइये और सो जाइये। हमसे तो इसे चबाकर रात-भर गुजर नहीं हो सकती।"

मनोज ने पुनः सुरेन्द्र को जगाकर कहा, "मुझे तो विदा करिये, नींद आने लगी है।"

"क्या विदाई दे दूं?"

"साधारण रूप में हमको पचास रुपये मिलने वाले थे। इस विशेष परिस्थिति में तो हम पचहत्तर से कम नहीं लेंगी।"

"पचहत्तर?"

"हां, आज खाने-पीने को कुछ नहीं मिला न?"

"जितना तुमको कष्ट हुआ है उतना तो मैं तुम्हारे मनोरंजन पर व्यय कर चुका हूं।"

"बात यह है कि हमारे कष्ट का नाप-तोल आपके पास नहीं है। यह तो हम जानती हैं कि इस प्रकार पूर्ण शाम को आवारागर्दी के बाद सूखे चने सामने देखने पर क्या दशा होती है मन की?"

"परंतु इसमें मेरा तो कोई दोष नहीं है?"

"तो हमारा दोष है?"

"नहीं, यह भाग्य की बात है। जैसे मैं सहन कर रहा हूं वैसे ही तुम लोगों को भी करना चाहिए।"

मनोज यह सुन क्रोध से जल-भुन उठी। उसने कहा, "भले इंसान की भांति हमारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रुपये हमको दे दो। नहीं तो ठीक नहीं होगा। पिछले एक घंटे में जो कष्ट हमको हुआ है उसका कोई पारावार है भी?''

अब सुरेन्द्र ने क्रोध दर्शाते हुए कहा, ''ऐ छोकरी! हल्ला क्यों करती है? चुपचाप नीचे उतर जाओ। तुम मेरी विवाहिता नहीं हो। झगड़ा कर तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा। चुपचाप चली जाओ यहां से।''

सरोज अभी भी मिन्नत-खुशामद से जो मिले, ले लेने के लिए तैयार थी। परंतु मनोज तो क्रोध के घोड़े पर सवार थी। उसने सरोज की बांहों-में-बांहें डालीं और उसको मकान के नीचे की ओर खींचते हुए कहा, ''छोड़ो, इस कमीने को। हमारी तुलना अपनी पत्नी से कर रहा है। यह गधा तो पत्नी और प्रेमिका में अंतर भी नहीं जानता।''

x x x

सदारानी को छोटे बच्चों की ट्यूशन पाने में दस-बारह दिन लग गये। परंतु भाग्य की बात थी, जब ट्यूशन मिली तो कई वर्ष के लिए काम मिल गया। राजा अम्बिका प्रसाद की चार लड़कियां थीं। तीन तो स्कूल जाती थीं एक अभी छोटी ही थी। चारों-की-चारों ही सदारानी की देख-रेख में रख दी गईं और उसको छः मास के कार्य की परीक्षा के उपरान्त काम पक्का करने की आशा दिलाई गई।

सदारानी को अपने पिता के घर आये दो वर्ष हो चुके थे। न तो उसने इसकी सूचना अपने पति को भेजी थी, और न ही उसके पति ने उसके विषय में जानने का यत्न किया था। सदारानी ने अपना पूर्ण मन अपने संरक्षण में रखे गये बच्चों पर लगा दिया था। प्रातः ही अपने बच्चों को खिला-पिलाकर वह राजा साहब की कोठी पर चली जाती। तीन बड़ी लड़कियां गंगा, यमुना और गोदावरी तो स्कूल की पांचवीं, तीसरी और दूसरी श्रेणी में पढ़ती थीं। वे प्रायः सदारानी के जाने से पूर्व उठ स्नानादि कर स्कूल जाने के लिए तैयार हो जाया करती थीं। वह उनको वस्त्र पहना, पुस्तकें देख, विधिवत् उनके थैलों में रख और उनको ले स्कूल छोड़ने के लिये चली जाती। यह उसका काम था कि लड़कियों की अध्यापिकाओं से मिलकर उनके विषय में कोई सूचना हो तो घर पर ले आया करे।

घर पहुंची वह सबसे छोटी लड़की को जो इस समय तीन वर्ष की थी, स्नानादि करा, वस्त्र पहना, उसको अल्पाहार कराती। रानी नीलमणि, तो प्रायः रुग्ण ही रहा करती थी। वह बच्चों की देख-भाल नहीं कर सकती थी। इसलिए बच्चों का सब काम सदारानी को ही करना पड़ता था।

इस काल में सदारानी के व्यवहार और बच्चों की प्रसन्नता से नीलमणि संतुष्ट हो गई थी। अब तक नीलमणि को सदारानी के इतिहास का भी ज्ञान हो गया और वह उसको अपना बच्चा भी वहीं ले आने के लिये कहा करती थी।

इस समय तक वह काम उसका स्वभाव बन गया था और सदारानी अपने पति के विरुद्ध अपनी भावना को विस्मरण कर चुकी थी। न तो उसको अपने उस काल की बात स्मरण कर उस पर विचार करने का अवकाश था और न ही वह उस व्यर्थ के जीवन पर विचार करने की आवश्यकता समझती थी।

परंतु जीवन एकसार नहीं चल सका। एक दिन उसने राजा साहब के घर जाते हुए अनुभव किया कि कोई व्यक्ति साइकिल-रिक्शा पर उस के पीछे-पीछे आ रहा है। वह स्वयं भी रिक्शा पर ही थी। उसे संदेह हुआ तो उसने घूमकर पीछे देखा। पीछे वाली रिक्शा में सुरेन्द्रमोहन बैठा हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदारानी ने यह भाव बना—कि उसने उसे देखा ही नहीं, वह आगे चलती गई। इस पर भी मन-ही-मन वह भय अनुभव करने लगी थी। वह उसके इस प्रकार पीछा करने का अर्थ नहीं समझ पा रही थी। वह नहीं जानती थी कि वह क्या करने आया है और क्या कर सकता है।

इसी उधेड़-बुन में वह राजा साहब की कोठी पर पहुंच गई। उसका रिक्शा कोठी के द्वार पर गया तो उसने पुनः घूमकर देखा। सुरेन्द्रमोहन का रिक्शा चौकीदार ने द्वार पर रोक लिया था। इससे उसको कुछ सान्त्वना हुई। अपने रिक्शे वाले को पैसे दे सदारानी भीतर चली गई।

भीतर जाकर उसने नीलमणि को द्वार पर रोके गये रिक्शा के बारे में बता दिया। वह कहने लगी—कि उसका पति उसका पीछा करता हुआ वहां तक आया है, भगवान् जाने उसके मन में क्या है?

रानी ने कहा—"तुम अपना काम करो। मैं पता करती हूं।" उसने घंटी बजा चपरासी बुलाया और उसको द्वार पर भेज वहां पर रुकी हुई रिक्शा में बैठे व्यक्ति को बुलाकर बैठक-घर में बैठाने के लिये कह दिया।

द्वार पर चौकीदार ने रिक्शा रोक सुरेन्द्रमोहन से पूछ लिया था, "किस काम से आये हो?"

"यह किसकी कोठी है?" उसने चौकीदार से प्रश्न किया।

"राजा साहब की।"

"अरे भाई! कौन राजा साहब?"

"राजा साहब छतरपुर।"

"मैं उस औरत से मिलना चाहता हूं जो अभी उस रिक्शा में आई है।"

"ओह! मास्टरानजी से?"

"मास्टरायन? हां उससे ही।"

"आप अपना नाम-धाम और काम लिख दें, यदि उनको मिलना स्वीकार होगा तो भीतर ले जाऊंगा।"

सुरेन्द्रमोहन मुख देखता रह गया। चौकीदार उसका मार्ग रोके खड़ा था। उसने जेब टटोलकर एक कागज का टुकड़ा निकाला और अपना फाउन्टेन पैन खोल रिक्शा की सीट के सहारे लिखने लगा था कि चपरासी ने आकर चौकीदार से कहा, "इनको आने दो, रानी साहिबा बुला रही हैं।"

चौकीदार एक ओर को हट गया और चपरासी ने सुरेन्द्रमोहन से कहा, "चलिये, आपको रानी साहिबा बुला रही हैं।"

सुरेन्द्रमोहन का मुख लाल हो गया। उसने अपने होंठों में कहा, "रानी साहिबा। सदारानी, रानी साहिबा! क्या गड़बड़ है।" फिर कुछ विचार कर चपरासी के साथ चल दिया। रिक्शा वहीं द्वार पर खड़ी रही।

उसको ले जाकर कोठी के बैठक-घर में बैठा दिया गया। एक गद्देदार कुर्सी पर बैठते हुए वह विचार करता था कि सदारानी-जैसी कुरूप स्त्री को कोई राजा अपनी रानी बना सकता है क्या? तभी उसको स्मरण हो आया कि वह रिक्शा पर सवार होकर आ रही थी, यदि राजा साहब की प्रिया होती तो मोटर में आती-जाती।

सुरेन्द्रमोहन वहां प्रतीक्षा कर रहा था कि बाहर एक मोटर के भर्र-भर्र का शब्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हुआ। उसने विचार किया कि कौन आया है। वह बैठकघर से झांककर देखने लगा। बाहर कोठी की ड्योढ़ी में खाली मोटर खड़ी थी। उसी समय सदारानी तीन पुस्तकों के थैले उठाये हुए आई। लड़कियां भी साथ में थीं। सब मोटर में बैठीं और चल दीं।

इस दृश्य से तो सुरेन्द्रमोहन समझ गया कि उसको भीतर बुलाने वाली सदारानी नहीं अपितु राजा साहब की रानी हो सकती है। इससे उसका क्रोध शांत हुआ और वह उत्सुकता से रानी साहिबा के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

परंतु उससे मिलने के लिये राजा साहब स्वयं आये। सूरत-शक्ल से ही सुरेन्द्रमोहन समझ गया कि आने वाला व्यक्ति इस मकान का स्वामी है। साथ ही बैठक के बाहर बैठे चपरासी ने उठकर और झुककर उसको सलाम किया था।

राजा साहब बैठक में आये तो अनायास ही सुरेन्द्रमोहन अपने स्थान से उठा और हाथ जोड़कर नमस्कार करने लगा। नमस्कार करते हुए वह स्वयं ही अपने व्यवहार पर विस्मय कर रहा था। अपने कार्यालय में तो वह अपने अधीनस्थों को सिर हिलाकर अभिवादन करता था और उच्चाधिकारियों का हाथ मिलाकर स्वागत किया करता था।

सुरेन्द्रमोहन ने हाथ जोड़े तो राजा साहब ने मुस्कराते हुए कहा, "बैठिये।"

वह बैठ गया।

राजा साहब बैठे और जेब से सिगरेट-केस निकालकर सुरेन्द्रमोहन की ओर बढ़ाया। सुरेन्द्रमोहन ने केस में से सिगरेट निकाला तो राजा साहब ने लाइटर जलाकर आगे कर दिया। उसने सिगरेट सुलगाया और एक लम्बा कश लेकर स्वस्थचित्त हो बैठ गया।

"तो आप श्रीमान् सुरेन्द्रमोहन हैं?"

"जी।"

"सदारानी के पति?"

"जी।"

"वह मेरे बच्चों की गवर्नेस है। आप किसलिये आये हैं?"

"वह मेरी स्वीकृति के बिना नौकरी करने के लिये आ गई है।"

"हम उसके जीवन-वृत्तान्त को जानते हैं। आप यह बताइये कि वह बालिग है या नाबालिग।"

"उसकी आयु इस समय बाइस-तेइस वर्ष की होगी।"

"इस पर भी आप समझते हैं कि अपने जीविकोपार्जन के लिए उसको आपसे पूछना चाहिए?"

"वह मेरी पत्नी है।"

"पत्नी का अर्थ क्रीतदासी नहीं होता।

"मैं उसे अपने घर ले चलने के लिए आया हूं।"

"वह अभी आती है। उससे कहना और यदि वह जाना चाहेगी तो एक मास का नोटिस देकर जा सकती है। आप यहां बैठिये। वह आधे घंटे में लौट आयेगी।"

राजा साहब ने घंटी का बटन दबाया, चपरासी भीतर आया तो राजा साहब ने कहा, "बाबू साहब के लिए चाय ले आओ।"

चपरासी के जाने पर उन्होंने सुरेन्द्रमोहन से एक बार फिर कहा, "सदारानी के आने पर उससे बात करने के बाद आप मुझको बुला लीजियेगा। उसके जाने की शर्त मैंने बता दी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरेन्द्रमोहन अभी इस विषय में विचार ही कर रहा था कि क्या कहे, इतने में राजासाहब उठे और जिस दिशा से आये थे उसी ओर चले गये।

x x x

सदारानी आई तो रानीसाहिबा से मिल, बैठकघर में चली गई। उससे कहने लगी, "बोलिये, जिस कार्य से आये हैं?"

"तुमको घर वापस ले चलने के लिये।"

"न तो मैं आपकी इच्छा से आई थी और न ही आपकी इच्छा से जाऊंगी।"

"तो किस प्रकार चलोगी?"

"जब मेरा मन करेगा।"

"तुम्हारा मन कब करेगा?"

"जब वहां सुख-सुविधा मिलने की आशा प्रतीत होगी।"

"वह कैसे प्रतीत होगी?"

"जब मेरे पास इतनी सामर्थ्य होगी कि मैं आपका भरण-पालन कर सकूं।"

"वह तो कभी नहीं होगी।"

"तो मैं कभी भी नहीं आऊंगी।"

"तुम मेरी पत्नी हो।"

"वे सरोज, मनोज कहां गईं?"

"सरोज का तो विवाह हो गया है, मनोज मुझसे विवाह करने के लिए कह रही है, किंतु मैं कर नहीं सकता।"

"क्यों नहीं कर सकते?"

"एक पुरुष दो स्त्रियां नहीं रख सकता।"

"एक पत्नी और एक रखैल तो रख सकता है?"

"हां, यह कानून से वर्जित नहीं है।"

"तो आप ऐसे मूर्खतापूर्ण कानून को मत मानिये।"

"परंतु कानून ने नई पत्नी रखने के लिए पुरानी को तलाक का नियम भी तो बनाया है।"

"तो आप एक को तलाक दे दीजिये।"

"मैं तलाक देने के लिये जाऊंगा तो तुम्हारी निंदा करनी पड़ेगी।"

"तो फिर क्या करोगे।"

"या तो तुम मेरे साथ मेरे घर चलकर रहो अथवा मुझे तलाक दे दो।"

"अभी तो इनमें से एक भी बात नहीं कर सकती। आपके घर जाकर मुझे सुख तो क्या भोजन मिलने की भी आशा नहीं। तलाक देने में मुझे कोई लाभ प्रतीत नहीं होता। सबसे बड़ी बात यह है कि मैं किस बिना पर तलाक दूं।"

"गुजारे के बिना पर।"

"उसकी मुझे अब आवश्यकता नहीं है।"

"क्या मिल जाता है यहां से?"

"दो समय चाय और अल्पाहार। मध्याह्न का भोजन और एक सौ रुपया प्रतिमास।"

"कुट्कू क्या करता है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मां के पास खेलता रहता है।"

"मैं कोर्ट में प्रार्थना करूंगा कि 'कंजुगल राइट्स' मुझको मिलने चाहिये।"

"मैं स्वीकार नहीं करूंगी।"

"तब विवाह-विच्छेद हो जायेगा।"

"तो कर लीजिये।"

"पर क्या हुआ है, पहले तो तुम इसी बात के लिए सरोज इत्यादि से ईर्ष्या करती थीं।

"हां, पर अब उन बातों से अरुचि हो गई है।"

"क्यों, बूढ़ी हो गई हो।"

"ऐसी कोई बात नहीं। केवल रुचि का केन्द्र बदल गया है। कभी किसी की रुचि गाने सुनने से हटकर सुंदर दृश्य देखने की हो जाती है। अथवा किसी की स्वादिष्ट भोजन करने से रुचि बदल कर वैराग्य की होने लगती है।"

"यह सब वाग्जाल है, बोलो, मेरे साथ चलोगी कि नहीं?"

"नहीं।"

"तो बल प्रयोग करना पड़ेगा?"

"कर सकते हैं। पर इतना स्मरण रखना कि यह राजनियम के विपरीत होगा और दण्डनीय भी।"

इस समय राजा साहब वहां आ गये। उनके साथ एक लट्ठबंद सेवक भी था। उसे और राजासाहब के माथे पर चढ़ी त्योरियों को देखकर सुरेन्द्रमोहन डर गया। वह उठा और नमस्कार कर बैठक से बाहर निकल गया। राजा साहब उसके पीछे-पीछे बाहर आये और सुरेन्द्रमोहन को बुलाकर कोठी के लॉन में ले गये।

"क्या यहीं फौजदारी करने लगे थे न?"

"जी नहीं मेरा मतलब यह नहीं था, मैं तो केवल धमका रहा था।"

"अच्छा जाओ, इतना ध्यान रखना कि अब इस औरत की रक्षा का प्रबन्ध मैं करूंगा।"

x x x

समय व्यतीत होता गया और दो वर्ष और निकल गये। सुरेन्द्रमोहन ने अपना काम लखनऊ में बदल लिया। वहां उसने मनोज को अविवाहिता पत्नी के रूप में रखा हुआ था। वह एक दिन उसे छोड़कर भाग गई। अब सुरेन्द्रमोहन पुनः पत्नी की खोज करने लगा। यह बात कठिन नहीं थी। बिना विवाह के तो पैसे के बल पर नई पत्नी मिल सकती थी। परंतु वह अब स्थिर जीवन में विश्वास करने लगा था। उसकी आयु तीस वर्ष की होने जा रही थी। परंतु अत्यधिक भोग-विलास और मद्य-सेवन से उसका यौवन ढल रहा था। विवाह का विचार आया तो वह फिर सदारानी की खोज में चल पड़ा। इस बार वह उसको उसके पिता के घर पर ही मिला।

रात के समय वह अपने श्वसुर के घर जा पहुंचा। उसने अपने साले से कहा, "क्यों विनोद! बहिन घर पर है?"

"है।"

"भाई! उसको बुला दो।"

"वह नीचे नहीं आयेगी, आप ऊंपर आ सकते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरेन्द्रमोहन यही चाहता था। वह ऊपर चला गया। सदारानी अपने बच्चे को खाना खिला रही थी। सुरेन्द्रमोहन को द्वार पर खड़ा देख वह विस्मय करने लगा।

''पहचाना?'' सुरेन्द्रमोहन ने पूछा।

''कुछ-कुछ। थोड़ा अंतर आ गया है।''

''हां, लखनऊ का जलवायु अनुकूल नहीं आ रहा है।''

''तो वापस शाहजहांपुर चले जाइये। अपना काम करते हैं किसी की नौकरी तो है नहीं।''

''तुम भी चलोगी?''

''मुझे लखनऊ का जलवायु अनुकूल बैठ रहा है।''

''तो मेरी खातिर ही चली चलो।''

''मनोज भाग गई है, इसलिये?''

''तुम्हें कैसे मालूम?''

''बैठ जाइये। इसे पहचानते हैं?'' उसने बच्चे की ओर संकेत किया।

''इसका कुछ नाम भी रखा है कि नहीं?''

''हां रखा है, कल्याणस्वरूप।''

''नाम तो चुनकर रखा है।''

''हां, वैसे तो इसके बाप को भी चुनकर ही पसंद किया था, परंतु...''

''परंतु क्या?''

''मनोज आई थी और बता गई कि आप...''

''क्या बात है? बात आधी ही क्यों छोड़ देती हो?''

''उसने विवाह कर लिया है।''

''और अपना लड़का कहां रख गई है?''

''वह उसके साथ ही है। उसने अपने पति को समझा दिया है कि उसको त्यक्ता पत्नी मानकर उसके साथ विवाह करे और उसके पुत्र को उसके पहले पति का पुत्र माने।''

''बिना विवाह के ही त्यक्ता बन गई है?''

''हां, कहती थी कि बिना विवाह के विवाहिता थी और अब बिना तलाक के त्यक्ता बन गई है।

''देखिए, जिस समाज में यह सब कुछ हो सकता है, उसमें मैंने तलाक की आवश्यकता नहीं समझी। विवाह देश के कानून का क्षेत्र हो गया है। इससे इसका मूल्य एक ठेकेदारी के वचन-पत्र के बराबर रह गया है। कभी वचन-पत्र के विपरीत कार्य हुआ तो उसका प्रतिकार रुपयों में आंका जाता है। जहां संतान के माता-पिता का इतना मात्र-मूल्य हो वहां उस संबंध के लिए विवाह-जैसे आडम्बर के करने की आवश्यकता ही क्या है और फिर उसको तोड़ने के लिए मजिस्ट्रेट के सम्मुख एक वर्ष तक नाक रगड़ने की मुझे आवश्यकता अनुभव नहीं हुई।''

''मुझे अब अनुभव हो रहा है कि तुम ठीक कहती थीं।''

''आपकी प्रकृति देख विश्वास नहीं हो रहा।''

''तो एक बार फिर परीक्षा कर सकती हो।''

''और एक कुटकू और बना लूं?''

''हो सकता है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"एक शर्त है।"

"क्या ?"

"कुछ रुपया मुझे पृथक् दे दीजिए। मैं उसके ब्याज से अपना निर्वाह करूंगी। आप पर आर्थिक रूपेण निर्भर नहीं रहना चाहती। जब आप खाना नहीं देंगे तो पेट में घुटने देकर सोने की आवश्यकता नहीं रहेगी।"

"कितना धन देना होगा ?"

"इतना कि जिसकी आय से दो सौ रुपया मासिक मिलता रहे।"

"तुम मेरे घर में आकर भी तो अपनी नौकरी कर सकती हो ?"

"मैं करूंगी नहीं और कदाचित् कर भी नहीं सकूंगी।"

"सदारानी! सरोज, मनोज....मैं इस सूची को लम्बी बनाना नहीं चाहता। इसलिए इसे पुनः सदारानी पर ही समाप्त करना चाहता हूं।"

"विचार कर लीजिए। जब विवाह-धर्म का सम्बंध था तब धर्म-पालन के लिए श्रद्धा पर विश्वास कर लिया जाता था। अधिकांश हिंदू स्त्रियों में तो इसमें धर्म की-सी निष्ठा अब भी है परंतु पुरुषों में लोप हो रही है। आप में तो इसको इस प्रकार समझने का कोई चिह्न भी नहीं दिखाई देता। इससे आपसे गारण्टी मांग रही हूं।"

सुरेन्द्रमोहन विचार करता हुआ चला गया।

इसके एक मास बाद सदारानी को एक पत्र मिला और उसके साथ ही उसको हजरत गंज की एक इमारत के कागजात मिले, जिसकी आय ढाई सौ रुपया मासिक थी।

इसके एक मास बाद सदारानी सुरेन्द्रमोहन की कोठी में चली गई। कल्याण उसके साथ था।

एक दिन सुरेन्द्र ने उससे पूछा, "सदा! अब प्रसन्न हो ?"

"प्रसन्न! नहीं। पत्नी के पद से गिराकर ठेकेदार की पदवी पर पहुंच गई हूं। यह पतन है, इसमें प्रसन्नता कैसी ?

"हां, इस पतन से अंग-भंग नहीं हुए, इतना संतोष तो है ही।"

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कानूनी मौत

अब्दुल करीम, जो कि बचपन से ही पूर्वी अफ्रीका में नैरोबी में रहता था, 1938 में बम्बई वापस आया। वह अपने पिता के साथ अफ्रीका गया था। उस समय उसकी आयु पांच वर्ष की थी। उसका पिता भारत में दिवाला निकाल अपनी किस्मत आजमाई के लिए वहां गया था।

अब्दुल करीम अभी छोटा ही था कि उसके माता-पिता का देहान्त हो गया था। उसने बम्बई के एक सम्पन्न 'खोजा' परिवार की कन्या से विवाह किया, जिससे उसके दो पुत्र हुए। 1938 में उसके श्वसुर का देहावसान हुआ तो उसकी पत्नी, सास तथा अन्यान्य रिश्तेदारों के जोर देने पर उसने अपना अफ्रीका का व्यापार बंद कर दिया और सारी सम्पत्ति को एकत्रित कर वह पूंजी के रूप में लेकर बम्बई आ गया।

बम्बई आकर उसने अपने श्वसुर के व्यापार को आगे बढ़ाया और उसमें अपनी भी पूंजी लगाकर वह बहुत बड़ा सरकारी ठेकेदार बन गया।

ज्यों-ज्यों कार्य बढ़ता गया त्यों-त्यों सम्पत्ति में भी वृद्धि हुई और उसके साथ ही अब्दुल करीम का लालच बढ़ता गया। सौभाग्य से 1939 में उसके नाना का, अपने ग्राम में देहावसान हुआ तो वह भी उसके लिये थोड़ी बहुत सम्पत्ति छोड़ गया। उस पर अधिकार करने के लिए अब्दुल करीम उनके गांव गया। वहां जाकर उसे विदित हुआ कि उसके नाना ने कई वर्ष पूर्व समीप के कस्बे के किसी व्यक्ति के पास 700 रुपये में कुछ जमीन बेची थी और उसकी उजरदारी करने के लिए अभी समय है।

यह भूमि पांच व्यक्तियों ने मिलकर खरीदी थी और अब तक उन्होंने उस पर सुन्दर भवन भी निर्माण कर लिये थे। इस प्रकार कुल मिलाकर वह भूमि अब दस लाख की बन गई थी। अब्दुल करीम वहां गया तो उस सम्पत्ति को देख उसके मुख में पानी भर आया। उसने निश्चय कर लिया कि उस सम्पत्ति पर वह अपने अधिकार का अभियोग प्रस्तुत करेगा।

मुस्लिम उत्तराधिकार कानून के अनुसार पुत्री का पुत्र भी अपने नाना की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी माना जाता है। जिस समय भूमि बेची गई थी, उस समय अब्दुल करीम जीवित था, इसलिए उसकी संरक्षिका के रूप में सेल-डीड में उसकी माता के हस्ताक्षर होने आवश्यक थे किंतु खरीददारों में से कोई भी नहीं जानता था कि वृद्ध का कोई नातेदार जीवित है। इस प्रकार वह सेल-डीड अपूर्ण समझा गया।

जब खरीददारों को इस विषय का ज्ञान हुआ तो उन्होंने कानूनी सलाह ली। तब उन्हें विदित हुआ कि इसमें उनका पक्ष दुर्बल है, अतः उन्होंने अब्दुल करीम से ही समझौता करने का यत्न किया। अभियोग वापस करने के लिये उन्होंने मिलकर अब्दुल करीम को दस हजार रुपये देने चाहे। किंतु उसने स्वीकार नहीं किये। उसका यह कहना था कि भूमि की बिक्री वैधानिक ढंग से नहीं हुई है अतः उनको चाहिए कि उस भूमि पर बने भवनों को वे वहां से उठा लें।

इस प्रकार दो वर्ष तक अभियोग चलता रहा। किंतु किसी प्रकार का निर्णय न हो सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अब्दुल करीम ने स्थानीय वकील को अपनी ओर से कचहरी में उपस्थित होने के अधिकार दे रखे थे। वह स्वयं भी यदा-कदा उपस्थित हो जाता था।

यह लगभग 1942 की बात होगी कि जब प्रतिवादियों ने यह अनुभव किया कि मुकदमा टलता जा रहा है और इससे उनका पर्याप्त धन व्यय हो रहा है। अतः सबने निश्चय किया कि अभियोग को वापस लेने के लिये अब्दुल करीम को पचास हजार रुपये दे दिये जाएं। उसके सम्मुख यह प्रस्ताव उस समय प्रस्तुत करने का निर्णय हुआ, जब अगली पेशी पर, अब्दुल करीम वहां आने वलाा था।

अगली पेशी के दिन अभियोग की सुनवाई के लिये दोनों पक्षों के वकील कचहरी के बॉर-रूम में बैठे थे कि प्रतिवादियों में से किसी ने वादी के वकील से पूछा, "आज अब्दुल करीम बम्बई से आया है क्या?"

"मुझे पता नहीं।" अब्दुल करीम के वकील ने उत्तर दिया।

"क्या वह वास्तव में जीवित भी है?" एक अन्य प्रतिवादी ने हंसी-हंसी में वकील से पूछ लिया।

"क्या?" आश्चर्यचकित हो वकील ने पूछा।

उस व्यक्ति ने बात को बढ़ावा देते हुए कहा, "कोई मुझसे कह रहा था कि पिछले सप्ताह अब्दुल करीम की बम्बई में मृत्यु हो गई है।"

केवल हंसी में कहे गये उक्त वाक्य से प्रतिवादियों के वकीलों में से एक के मस्तिष्क में यह विचार आया कि कम-से-कम इससे कुछ समय के लिये अभियोग स्थगित किया जा सकता है। अतः जब अभियोग सुनने का समय आया उसने अपनी आपत्ति प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'यह अफवाह है कि वादी की मृत्यु हो गई है, अतः उसके वकील जब तक शपथपूर्वक यह लिखकर नहीं दे देते कि वादी जीवित है, तब तक कार्रवाई आगे नहीं बढ़ाई जा सकती।"

"वादी का वकील शपथपूर्वक लिखने के लिये उद्यत नहीं हुआ। न्यायाधीश ने यह अनुभव किया कि वादी का वकील इस विषय में अनिश्चित-मन है तो उसने अभियोग आगामी तिथि के लिये स्थगित कर दिया और वादी के वकील को कह दिया गया कि आगामी तिथि पर वह वादी को व्यक्तिगत रूप में प्रस्तुत करे। न्यायाधीश ने 15 दिन बाद की तारीख निर्धारित कर दी।

वादी के वकील ने अब्दुल करीम को तार द्वारा इस विषय में सूचना भेज दी। उसको सावधान कर दिया कि आगामी तिथि पर वह अनिवार्यतया व्यक्तिगत रूप में कचहरी में उपस्थित हो जाय।

अब्दुल करीम ने मध्य भारत, मद्रास, त्रावणकोर, कोचीन आदि विभिन्न स्थानों पर अनेकों ठेके ले रखे थे और समय-समय पर अपने कार्य के निरीक्षण के लिये उसे इन स्थानों पर जाना पड़ता था।

अब्दुल करीम क्रे सहायक को जब वकील का तार मिला तो उसने वह रजिस्ट्री द्वारा लिफाफे में बंद कर वहां भेज दिया, जहां अब्दुल करीम के होने की सम्भावना थी। किंतु रजिस्ट्री के पहुंचने से पूर्व ही दुर्भाग्यवश अब्दुल करीम को रि-डायरेक्ट कर दिया गया। परिणाम यह हुआ कि निश्चित समय तक अब्दुल करीम को वकील की सूचना का तार नहीं मिला और वह कचहरी में उपस्थित न हो सका।

जज ने वादी के वकील से पूछा, "क्या अपने 'क्लायंट' को कोर्ट की आज्ञा से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अवगत कर दिया था?''

''जी हुजूर! मैंने उसको तार भेज दिया था, जिसकी रसीद यह है।'' उसने तार की रसीद प्रस्तुत कर दी।

''क्या आपको इसका उत्तर प्राप्त हुआ है?''

''नहीं श्रीमान्!''

''क्या आप जानते हैं कि उसकी मृत्यु नहीं हुई?''

''मैं कुछ नहीं कह सकता!''

इस पर जज कहने लगा, ''इस परिस्थिति में अभियोग की कारर्यवाई आगे नहीं चलाई जा सकती। वादी के जीवित होने का प्रमाण प्रस्तुत करना आपका ही कर्तव्य है।''

''जनाब! कृपा कर मुझे कुछ समय और दे दीजिए। यदि वह जीवित हुआ तो आगामी तिथि पर मैं उसे न्यायालय में उपस्थित कर दूंगा।''

इस प्रकार 15 दिन का समय और दे दिया गया किंतु अब्दुल करीम मद्रास, त्रावणकोर, मध्यभारत के किन्हीं स्थानों में अपने कार्य-निरीक्षण के लिए भ्रमण कर रहा था, अतः इस बार भी उसको वकील की सूचना कि उसको 'व्यक्तिगत रूप में कचहरी में अनिवार्यतया उपस्थित होना है' नहीं मिली। यह सूचना उसको निश्चित तिथि के ठीक एक दिन बाद प्राप्त हुई।

आगामी तिथि पर भी जब अब्दुल करीम स्वयं कचहरी में उपस्थित नहीं हो सका तो प्रतिवादियों के वकील ने जोरदार शब्दों में कह दिया कि इस स्थिति में अभियोग को किसी प्रकार भी आगे नहीं चलाया जा सकता।

अब न्यायाधीश के लिए और कोई चारा नहीं रहा और उसको निर्णय देना पड़ा कि वादी मर चुका है।

जब यह सूचना अब्दुल करीम के पास पहुंची तो उसने जज के उक्त निर्णय के विरुद्ध अपील दायर करने के लिए अपने वकील को कह दिया। अपील सेशन कोर्ट में दायर हो गई। परंतु स्वीकार नहीं हुई। हाई कोर्ट में अपील की गई और वहां भी उसको अस्वीकार किया गया। इन दोनों कचहरियों में सिद्ध करने की बात यह थी कि यह अपील करने वाला अब्दुल करीम क्या वही आदमी है जो मुकद्दमा चलाने वाला था और क्या यह वही अब्दुल करीम है जिसके नाना ने यह भूमि बेची थी और जिसके विषय में मुकद्दमा चल रहा था? हाई कोर्ट का निर्णय था कि नया मुकद्दमा दायर किया जा सकता है यदि उक्त बात सिद्ध हो जाये। इसको सिद्ध करने के लिये छोटी कचहरी में नये सिरे से प्रार्थना-पत्र देना चाहिए।

अब्दुल करीम ने यह विचार किया कि यदि वह अपने-आपको अपने नाना का दुहिता सिद्ध करने के लिए गांव के और बम्बई तथा अफ्रीका के साक्षी भी उपस्थित कर दे तो नया मुकद्दमा करने का समय नहीं था। पहले ही मुकद्दमा करने की अवधि व्यतीत हो चुकी थी। अतः अब्दुल करीम को संतोष करना पड़ा और कानून से वह मृत घोषित रहा।

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथार्थवाद

''श्रीमानजी! यह चलेगी नहीं।''

''क्यों?''

''इसमें यथार्थता का अभाव है।''

''वह क्या होती है?''

''जो जैसा है उसका वैसा ही वर्णन करना।''

''परंतु सत्य क्या है?''

''देखिये बाबू साहब! आप पढ़े-लिखे हैं। कुछ लोग आपको विद्वान् भी कहते हैं। आपकी लिखी रचनायें पढ़ी भी अवश्य जाती हैं परंतु वे सदा यथार्थ से दूर होती हैं। अब आप पूछते हैं कि कैसे। मैं भला कैसे बता सकता हूं? मैं तो न लेखक हूं, न ही विद्वान्। यदि आप इस विषय में जानना चाहते हैं तो डॉक्टर दिनेशजी से मिल लीजिये। वे पी० एच० डी० इन इंगलिश लिट्रेचर हैं। उन्होंने साहित्य-समालोचना पर कई ग्रंथ लिखे हैं।''

''परंतु उपन्यास तो उन्होंने कोई लिखा नहीं। कम-से-कम मेरे ज्ञान में नहीं है।''

''पंद्रह वर्ष पूर्व एक लिखा तो था। हमने ही उसे प्रकाशित किया था।''

''क्या नाम है उस उपन्यास का?''

''निष्णात।''

''अच्छा, सुना नहीं।''

''प्रथम संस्करण दो सहस्र प्रतियों का छपवाया था। उन दिनों हमारा काम भी कुछ ढीला था। हमारा बिक्री का प्रबंध इतना अच्छा नहीं था और डॉक्टर साहब भी तब इस पदवी पर नहीं थे जिस पर कि आज हैं। वह संस्करण अभी तक समाप्त नहीं हुआ। इस वर्ष के आरम्भ में स्टाक लेने पर देखा कि एक सौ से अधिक प्रतियां पड़ी हैं।''

''तो इस वर्ष तो उनकी बिक्री हुई होगी। अब तो पचास से अधिक आपके एजेन्ट देश-भर में घूमते हैं।''

''परंतु उस पुस्तक को लिखे अब पंद्रह वर्ष हो गए हैं। तब के यथार्थ और आज के यथार्थ में अंतर आ गया है। देश ने भारी उन्नति की है। इसलिये उनका वह यथार्थ वर्णन आज अयथार्थ हो गया है।''

वार्त्तालाप हो रहा था एक लेखक और एक प्रकाशक में। लेखक थे श्री केवल और प्रकाशक थे मैसर्ज नार्दर्न इंडिया पब्लिशर्ज प्राइवेट लिमिटेड। केवल एक उपन्यास लिखकर लाया था और इस प्रकाशन संस्था के व्यवस्थापक से इसके प्रकाशन के लिये कह रहा था। इस पर उक्त वार्तालाप हुआ था।

लेखक की यह प्रथम रचना नहीं थी। कई पुस्तकें पहले निकल चुकी थीं। परंतु उनका प्रकाशक एक पूंजी-विहीन दुकानदार था। एक तो उस प्रकाशक का अपना छोटा-सा प्रेस था, जिसमें एक ट्रेडल मशीन लगी थी। उसी मशीन पर छपाई का अन्य कार्य भी होता था। पुस्तक तो प्रेम में खाली समय में छप जाया करती थी। तीन सौ पृष्ठों की एक पुस्तक के छपने में छः मास लग जाने साधारण बात थी। फिर धनाभाव के कारण कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पुस्तक का संस्करण समाप्त हो जाता, तो नये संस्करण के लिये कागज खरीदने में सालों लग जाते।

केवल के मन में विचार आया कि किसी पैसे वाले प्रकाशक के पास जाय तो अच्छा रहेगा। उसके उपन्यासों के प्रशंसकों में से श्रीमती शकुन्तला कल किसी सभा में उससे मिलीं तो कहने लगीं कि वह अपनी पुस्तकें नार्दर्न इंडिया पब्लिशर्ज को क्यों नहीं देते?

केवल ने कहा, ''वे बहुत बड़े आदमी हैं। मेरा उनसे परिचय नहीं है।''

''इसमें परिचय की क्या बात है। मैं मैनेजर को कह दूंगी, आप-जैसे लिखने वाले के लिये वे ही प्रकाशक उपयुक्त हो सकते हैं।''

''आप परिचय-पत्र दे दीजिये। मेरे पास इस समय भी एक उपन्यास की पांडुलिपि तैयार है।''

''परिचय-पत्र की आवश्यकता नहीं। कल किसी समय आप उसके मैनेजर कृष्णकांत से मिल लीजिये। आप जायेंगे तो आपको पता चल जायेगा कि आपके विषय में कहा जा चुका है।''

केवल को इस प्रकार जाने में संकोच होता था। वह उलटी खोपड़ी का व्यक्ति था। संसार में सर्वथा विलक्षण और मानापमान के विषय में दूसरों से भिन्न विचार रखने वाला। वह समझता था कि उसकी पुस्तकों की अच्छी बिक्री होती है, अतः उसका प्रकाशकों के पास जाकर प्रार्थना करना तो अपनी कला का अपमान कराना है।

इस पर भी इस विचार से कि कदाचित् उसकी ख्याति अभी उतनी नहीं हुई जितनी प्रकाशकों को आकर्षित करने के लिये चाहिए। इससे उसको अभी प्रकाशकों के पास जाकर, यत्न करना ही चाहिए। इससे वह शकुन्तला देवी से प्रोत्साहन पा, कृष्णकान्त के पास जा पहुंचा।

यह ठीक था कि व्यवस्थापक महोदय ने केवल का नाम सुनकर कहा था, ''आपके विषय में शकुन्तला जी ने कहा था।''

इससे उत्साहित हो केवल ने अपनी नवीन कृति 'सोमरस' के छपवाने की बात कर दी और व्यवस्थापक महोदय ने उक्त वार्तालाप आरम्भ कर दिया।

: 2 :

केवल ने जब यह सुना कि एक लेखक जिसका लिखा हुआ उपन्यास पंद्रह वर्ष में अप्रभुज्यमान (ओबसीलीट) हो जाता है तो वह विचार करने लगा था कि ऐसा लेखक दूसरों को अयथार्थवादी कहकर उनकी कैसे निंदा कर सकता है। उसका यथार्थ इतनी जल्दी अयथार्थ हो रहा है कि यथार्थ हो सकता ही नहीं।

इस विचार के आते ही उसके मन में ग्लानि हुई। उसने अपनी पुस्तक की पाण्डुलिपि उठाई और उठते हुए कहने लगा, ''क्षमा करें, आपका इतना समय व्यर्थ में गंवाया है। अच्छा, नमस्कार।''

वह जाने के लिये घूमा तो व्यवस्थापक ने कहा, ''केवलजी! सुनिये तो।''

केवल घूमकर खड़ा हो गया। बैठा फिर भी नहीं। कृष्णकान्त कहने लगा, ''मैं समझता हूं कि शकुन्तलाजी के कहने का मान रखने के लिए हमें आपका एक उपन्यास तो प्रकाशित कर ही देना चाहिए।''

''देखिये, आप तो इस लिमिटेड कम्पनी के मैनेजर-मात्र हैं। आपको कम्पनी के धन को सिफारिशी लोगों के कहने पर व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। मेरी राय मानिये, डॉक्टर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनेशजी से कोई नया उपन्यास लिखवाकर प्रकाशित करिये । उनसे कहिये कि उनका पहला यथार्थ तो अयथार्थ हो गया है । अब किसी नवीन यथार्थ पर एक उपन्यास लिख दें ।''

''आपका शकुन्तलाजी से कैसा परिचय है?''

''क्या मतलब!'' केवल ने सतर्क हो पूछा । उसको ऐसा प्रश्न बहुत ही भद्दा प्रतीत हुआ था । किसी पुरुष से यह पूछना कि अमुक स्त्री से उसका कैसा परिचय है, एक अनर्गल बात थी । इस पर भी उसने अपनी और शकुन्तला की सफाई देनी उचित समझी ।

कृष्णकान्त तो अपने प्रश्न में किसी प्रकार का अनौचित्य नहीं देख सका । इस कारण मुस्कराता हुआ केवल के मुख पर देखता रहा । केवल ने ही कहा, ''मैं उनके विषय में कुछ नहीं जानता । वे कल किसी सभा में अध्यक्षा थीं और मैं श्रोता । सभा के संयोजकों ने सभा के उपरान्त उनसे मेरा परिचय कराया तो बातों-ही-बातों में उन्होंने मुझको आपसे मिलने के लिए कहा था । इससे अधिक मैं उनको नहीं जानता ।''

कृष्णकांत ने अपने प्रश्न का कारण बताते हुए कहा, ''मैंने तो इसलिए पूछा था कि क्या आप यह जानते हैं अथवा नहीं कि वे हमारी प्रकाशन-संस्था के अधिपतियों में से एक हैं ।''

''ओह! तब तो आपको यह सबकुछ, जो आपने डॉक्टर दिनेश के विषय में अपनी सम्मति बताई है, उनको बतानी चाहिए थी । इससे उनको आपके इतने महापुरुषों से परिचय का ज्ञान हो जाता । अच्छा अब मुझे आज्ञा दीजिये । मुझे एक अन्य स्थान पर भी जाना है ।''

कृष्णकान्त अभी विचार ही कर रहा था कि वह इसको केवल की विनय-भावना समझे अथवा अभिमानयुक्त कथन कि केवल दुकान से बाहर निकल गया । दो ही मिनट में पुनः केवल को शकुन्तलादेवी के साथ भीतर आते देख वह और भी अधिक परेशानी अनुभव करने लगा था । वह सोच रहा था कि उसको डॉक्टर दिनेश की इस विख्याति-प्राप्त लेखक के विषय में पूर्ण सम्मति बतानी पड़ेगी ।

''कृष्णकान्तजी!'' शकुन्तला ने मैनेजर के सामने बैठते हुए कहा, ''आपने केवलजी की नवीन कृति देख ली है?''

''जी नहीं, देखी तो नहीं ।''

''आपने इनकी कोई प्रकाशित पुस्तक पढ़ी है?''

''उपन्यास पढ़ने के लिए मुझे अवकाश ही कहां मिलता है ।''

''तो फिर आपने इनकी पुस्तक छापने से एकदम इन्कार क्यों कर दिया है?''

''कुछ दिन हुए इनका उल्लेख डॉक्टर दिनेशजी के साथ हुआ था और उनकी बात मुझको स्मरण थी । मैंने वही बात इनको बता दी है । इससे ये रुष्ट होकर चल दिये ।''

''तो यह बात है । लेकिन डॉक्टर दिनेश कब से उपन्यासकार बने हैं?''

''समालोचक तो वे चोटी के माने जाते हैं ।''

''इनके विषय में उन्होंने क्या समालोचना की है?''

''वे कहते थे कि केवलजी यथार्थवादी नहीं हैं । ये आदर्शवादी हैं । ये कलाकार नहीं हैं उपदेशक हैं । ये भाषाविज्ञ नहीं हैं, ये बाजारू भाषा लिखते हैं ।''

इस सम्मति को सुन, लालमुख शकुन्तला चुप रहीं । वह डॉक्टर दिनेश को भली भांति जानती थी । कालेज में वह उससे पढ़ती रही थी । इससे वह केवलजी के विषय में उससे मिलने का विचार करने लगी थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
शकुन्तला को चुप देख कृष्णकान्त ने अपनी सफाई देते हुए कहा, "मुझे इस कम्पनी में धन लगाने वालों के हानि-लाभ का विचार तो करना ही चाहिए। कम्पनी की ख्याति का भी ध्यान रखना पड़ता है।"

शकुन्तला ने कृष्णकान्त से तो कुछ नहीं कहा। उसने केवल के हाथ से पाण्डुलिपि लेकर कहा, "आइये मेरे साथ। मैं इस विषय में कुछ खोज करना चाहती हूं।"

दोनों उठकर दुकान से बहार आ गये।

: 3 :

केवल शकुन्तला की खोज का अर्थ समझ नहीं पाया। इस कारण दुकान से बाहर आ, वह प्रश्न-भरी दृष्टि से शकुन्तला की ओर देखने लगा।

शकुन्तला अपनी मोटर कार में आई थी। उसने मोटर दुकान के पास खड़ी की थी कि अपनी पुस्तक की पाण्डुलिपि बगल में दबाये केवल दुकान से बाहर निकल रहा था। केवल ने शकुन्तला को देखा तो नमस्कार किया। शकुन्तला ने समझा कि मैनेजर भीतर नहीं होगा, इस कारण यह निराश लौट रहा है। उसने पूछा, "केवलजी! मैनेजर नहीं है क्या भीतर?"

"है?"

"आपको मिले नहीं?"

"मिले तो हैं, किंतु उन्होंने पाण्डुलिपि अस्वीकार कर दी है।"

"क्यों?"

"यह अब आप पता कर लीजिए। मुझसे तो सत्य छिपा भी सकते हैं।"

एक क्षण तक विचार करने के बाद शकुन्तला ने कहा, "आप आइये, मैं भी तो समझ लूं कि क्या मतलब है उनका।"

"व्यर्थ है।"

"केवलजी! आइये तो।"

शकुन्तला ने पाण्डुलिपि अपने हाथ में पकड़ ली और दुकान में चली गई। विवश केवल को भी पुनः दुकान में जाना पड़ा। अब जब वे बाहर आये तो केवल गम्भीर विचार-मग्न था और शकुन्तला क्रोध से लाल हो रही थी। उसने कहा, "गाड़ी में बैठ जाइये, मैं डॉक्टर दिनेश से मिलने के लिए जा रही हूं।"

"आप व्यर्थ में ही अपना समय और पैट्रोल व्यय कर रही हैं। मुझे तो अपनी योग्यता पर ही संदेह होने लग गया है।"

"जरा मैं देखना चाहती हूं कि मेरे प्रोफेसर आपके विषय में क्या और क्यों कहना चाहते हैं।"

"तो आप जाइये। मुझे तो इसमें कुछ सार प्रतीत नहीं होता।"

"आपका डॉक्टर दिनेश से परिचय है?"

"मैं तो उनको पहचानता नहीं।"

"तो वे भी आपको नहीं जानते होंगे। इस कारण आपका नाम नहीं बताऊंगी। आप भी केवलजी से अपरिचित व्यक्ति बन जाइयेगा। अपनी उपस्थिति में अपने विषय में कही जाने वाली बातों का आनन्द लीजियेगा।"

केवल ने आपत्ति नहीं की। शकुन्तला स्वयं कार चला रही थी। केवल को लेकर यूनिवर्सिटी एन्क्लेव में डॉक्टर दिनेश की कोठी पर जा पहुंची। वह जानती थी कि शनिवार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दिन डॉक्टर घर पर ही होते हैं। शकुन्तला की कार रुकते ही डॉक्टर बरामदे में आ गये।

"आओ शकुन्तला! कैसे आना हुआ?"

"आज तो मैं व्यापार-सम्बंधी बात करने के लिए आई हूं। आपने वचन दिया था कि 'आधुनिक अंग्रेजी की कविता पर समीक्षा' नामक पुस्तक हमारी कम्पनी को देंगे। सुना है वह तैयार है, मैं उसकी पाण्डुलिपि लेने के लिए आई हूं।"

"मेरी शर्त तो आपको विदित ही है। मैं बीस प्रतिशत रॉयल्टी लेता हूं और वह भी पूर्ण पुस्तक का अग्रिम ही।"

"कितने पृष्ठ की पुस्तक होगी?"

"साढ़े चार सौ पृष्ठ की।"

"इसका मूल्य तीस रुपये हो जायेगा।"

"हां।"

"दो सहस्र प्रतियों की रॉयल्टी हुई बारह हजार।"

"हां।"

"आप आधा अग्रिम ले लीजिए और आधा एक वर्ष बाद।"

"नहीं, मुझे अन्य प्रकाशक अग्रिम देने के लिए तैयार हैं, मैं उनसे कुछ अधिक की मांग कर रहा हूं।"

"तो हमसे भी अधिक ही लेंगे?"

"नहीं, आप मेरी छात्रा रही हैं। इस कारण आपसे सौदेबाजी नहीं करूंगा। आप बारह हजार के चैक के साथ अनुबंध लिखकर भेज दीजिये।"

"पुस्तक कब मिलेगी?"

"एक-आध सप्ताह का काम और है। रुपया मिल जाने से शीघ्र समाप्त करने में उत्साह बढ़ेगा।"

"अच्छा एक बात और है, आपने केवल नामक हिन्दी के उपन्यासकार का नाम सुना है?"

"सोमरस।"

"यह भी भला कोई नाम है? यह किसी आयुर्वेद के ग्रंथ का नाम तो हो सकता है, उपन्यास का नहीं।"

शकुन्तला मुस्कराकर पूछने लगी, "आपने कभी केवल का कोई उपन्यास पढ़ा है?"

"मेरे पास सोमरस पीने के लिए समय नहीं है। न ही उसकी आवश्यकता है।"

"तब तो आपको व्यर्थ ही कष्ट दिया है। मैं समझती थी कि उसके विषय में आप कुछ जानते होंगे। देखिए, इसकी एक रचना 'संत समाज' तो पिछले पांच वर्ष में हमारी दुकान से दो हजार से ऊपर बिक चुकी है और अभी भी सारे देश के दुकानदारों से मांग आ रही है।"

"पाठकों में किसी उपन्यास की मांग, उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण नहीं होता।"

"तो किसी वस्तु की श्रेष्ठता का क्या प्रमाण है?"

"जब कोई विद्वान् उसकी सिफारिश करे।"

"और विद्वान की विद्वत्ता का क्या प्रमाण है?"

"वाह, यह भी कोई बताने की बात है?"

"परंतु विश्वविद्यालय के एक प्राध्यापक के पास तो समय नहीं है कि इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ख्याति-प्राप्त लेखक के विषय में कुछ जानना चाहे।''

डॉक्टर हंस पड़ा। कहने लगा, ''यह मेरे विषय में कहने लग गई हो?''

''हां और नहीं भी। आप इसके विषय में कुछ तो जानते हैं, परंतु अनेक ऐसे हैं जो उतना भी नहीं जानते।''

''मैं क्या जानता हूं।''

''यही कि आप जानते हैं कि आप कुछ नहीं जानते।''

दोनों हंसने लगे। डॉक्टर ने झेंपते हुए पूछा, ''तो न जानना भी किसी प्रकार का जानना होता है?''

''हां, जब भक्त परमात्मा के विषय में यह कहता है कि वह अवर्णनीय है, तो वह ज्ञानवान समझा जाता है। इस प्रकार भक्त अपने ज्ञान की सीमा का वर्णन करता है।''

''ऐसी बात नहीं। मैं केवल के विषय में जानता हूं। वह न तो उपन्यासकार है, न ही कलाकार। वह यथार्थवादी नहीं। आदर्शवादी है और यह बात उपन्यासकार का दोष माना जाता है, गुण नहीं।''

''यह आपको किसने बतायी है?''

''किसलिए पूछती हैं?''

''देखिये, यहां केवल तो बैठा नहीं, जो किसी पर मानहानि का दावा कर दे। मैं तो उसके विषय में किसी विद्वान् का मत जानने के लिए चली थी। इसी कारण आपसे पूछ रही हूं। अब उस मत को जानकर प्रसन्न हो गई हूं, जिसको आप अपने से अधिक विद्वान् मानते हैं और जिसके मत से आपने केवल को अयोग्य मानने में संकोच नहीं किया। परंतु वे महापुरुष हैं कौन?''

इस प्रकार किसी को अपने से अधिक विद्वान् समझा जाना डॉक्टर साहब को अभीष्ट नहीं था। परंतु वह यह भी कहना नहीं चाहता था कि उसने अपनी सम्मति किसी ऐरा-गैरा नत्थू-खैरा के मुख से सुनकर बनाई है। इस कारण किसी बड़े आदमी का नाम लेना चाहता था। परंतु किसका नाम ले? एकाएक डॉक्टर साहब को एक बात सूझी। कुछ दिन पहले ही उसकी कृष्णकान्त से केवल के विषय में बात हुई थी और वह केवल के विषय में कुछ ऐसे ही विचार रखता था। एक बड़ी प्रकाशन-संस्था के मुख्य व्यवस्थापक का नाम ले देना डॉक्टर साहब को पसंद आया। उसने कहा, ''एक तो कृष्णकान्त ही है। वह अर्थशास्त्र में एम० ए० है। उसकी भी ऐसी सम्मति है।''

''अच्छा, वे ऐसा कहते थे? सत्य ही बहुत योग्य व्यक्ति हैं वे। तब तो मानना ही पड़ेगा। अच्छा, डॉक्टर साहब! आपको बारह हजार का चैक कल ही मिल जाएगा। पुस्तक हमारी रही।''

बारह हजार का नाम सुन, डॉक्टर साहब कुछ नरम-से पड़ गए और कहने लगे, ''कुछ चाय वगैरह नहीं पियोगी शकुन्तला!''

''चाय तो हम पीकर ही चले थे, भोजन अब घर जाकर कर लेंगे।''

''आपने इनका परिचय तो कराया ही नहीं।''

''ये मेरे दूर के कोई रिश्तेदार हैं। दिल्ली देखने आये हुए हैं।''

इस प्रकार ये दोनों वहां से विदा हुए। शकुन्तला ने मोटर में बैठ, हंसते हुए कहा, ''अब आपको कहां जाना है?''

''मुझे घर ही जाना है। आप टैक्सी-स्टैंड पर मुझे छोड़ दीजिए।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"मैं इंडिया गेट की ओर जा रही हूं। आपको लाल किले पर छोड़ दूंगी।"

"ठीक है।"

दोनों शांत भाव से जा रहे थे।

लाल किले के समीप पहुंचकर शकुन्तला ने गाड़ी खड़ी कर दी। केवल गाड़ी से उतरा और उसने शकुन्तला से अपनी पाण्डुलिपि मांगी। शकुन्तला ने पूछा, "क्यों, छपवानी नहीं है?"

"जी नहीं। मैं कोई अविद्वान प्रकाशक ढूंढना चाहूंगा। परंतु मैं इससे पूर्व डॉक्टर साहब की कोई कलापूर्ण कृति पढ़कर ज्ञानवान बनना चाहता हूं।"

"बात यह है केवलजी! मेरी खोज अभी समाप्त नहीं हुई। मुझे अपनी सूझ-बूझ पर अभी भी संदेह नहीं है। मैं अभी और यत्न करूंगी।"

"आप अपना मूल्यवान् समय इस तुच्छ-सी बात के लिए व्यय कर घाटे में ही रहेंगी। मुझे यह दे दीजिये। मैं अब समालोचनायें ही लिखा करूंगा। उपन्यास लिखना बंद कर दूंगा।"

शकुन्तला मुस्कराई और बोली, "कदाचित् बारह हजार की राशि सुन, मुख से लार टपकने लगी है?"

"जी नहीं। मैं जानता हूं कि बारह हजार आपकी कम्पनी नहीं दे रही। यह तो भारत-भर के पुस्तकालय डॉक्टर साहब की पुस्तक खरीदकर देंगे। यह उनकी पदवी उनको दिला रही है।"

"हां, यह तो है ही। डॉक्टर साहब की ख्याति ही उनको इतनी बड़ी रॉयल्टी दिलवा रही है।"

"वास्तव में मैं समालोचना इस कारण लिखने का विचार नहीं कर रहा कि उससे मुझे कुछ धन मिलेगा। मेरा इस प्रकार की पुस्तक लिखने का विचार इस कारण है कि मेरी भी पुस्तकें बिना पढ़ी प्रशंसा की पात्र बन सकेंगी।"

शकुन्तला हंस पड़ी। परंतु उसने पाण्डुलिपि वापस नहीं दी और मोटर लेकर चली गई।

: 4 :

इस घटना के कई दिन बाद एक सभा में शकुन्तला की केवल से पुनः भेंट हुई। सभा के उपरान्त केवल वहां से भाग जाना चाहता था। उसको अपनी पुस्तक अस्वीकार किये जाने के अप्रिय शब्द सुनने में रुचि नहीं थी। परंतु शकुन्तला ने केवल का मार्ग रोक लिया। कहने लगी, "केवलजी, बहुत जल्दी में हैं क्या?"

"जी, नहीं, जल्दी में तो नहीं हूं। किंतु मैं सोचता था कि आपका समय व्यर्थ में क्यों नष्ट करूं।

"यथार्थता यह है कि मैं आजकल अपने ज्ञानवर्द्धन में लीन हूं और इस कारण अपने जीवन का एक-एक क्षण भी मूल्यवान अनुभव करने लगा हूं।"

"मैं आपसे मिलने का विचार कर रही थी। एक तो आपके घर का पता मालूम नहीं था और दूसरे आपके मूल्यवान समय का विचार आ रहा था। खैर, अब तो आप मिल ही गये हैं। इतना समय तो आपका जा ही चुका है। उसका कुछ लाभ तो आपको हो ही जाना चाहिए। आइये, किसी स्थान पर बैठकर बात करेंगे।"

शिष्टाचार के नाते केवल और अधिक इन्कार नहीं कर सका। उसने केवल इतना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कहा, "मैं तो आपके मू ल्यवान समय की ही बात सोच रहा था।"

"आप आइये भो।"

केवल को मोटर में बैठाकर वह उसे वैंजर्स में ले गई। वहां एक कोने में बैठकर उसने चाय का आर्डर दे दिया। जब बैरा आर्डर लेकर चला गया तो शकुन्तला ने पूछा, "आजकल क्या लिख रहे हैं?"

"अभी तो कुछ नहीं लिख रहा। आपको बताया तो है कि आजकल ज्ञानवर्द्धन का शौक सवार हुआ है। कुछ कला, यथार्थ और भाषा के विषय में जानकारी प्राप्त कर रहा हूं। मैं समझता हूं कि वर्तमान युग में यह जानकारी प्राप्त किये बिना कुछ लिखना मेरी धृष्टता ही थी। अब तो इस ज्ञान के प्रकाश में ही लिखूंगा।"

"तो कुछ समझे हैं कि नहीं अब तक?"

"हां, यथार्थ और भाषा के विषय में तो कुछ-कुछ धारणा बन गई है। इस धारणा से मैं अपना लेखन-कार्य निर्भीकता से चला सकूंगा।"

"मैं समझती हूं कि आप यह सबकुछ न करें तो ही अच्छा है, अन्यथा आप अपनी शैली को ही बिगाड़ लेंगे।"

"देखिये, मेरी एक धारणा यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी सूझ-बूझ होती है। उसको उस पर ही निर्भर रहना चाहिए। यह तो ठीक है कि उस सूझ-बूझ का मार्जन होता रहे जिससे कि वह सूझ-बूझ निरंतर उज्ज्वल, स्वच्छ और सरल बनती जाय। यदि कोई किसी दूसरे की सूझ-बूझ पर अपना जीवन चलाने लगा तो उसकी दशा उस किसान बाप-बेटे की तरह होगी जो गधे को खाली लिये जा रहे थे। बाप-बेटा नीचे और गधा उनके कंधे पर हो जायेगा।

"मैंने आपके 'सोमरस' की पाण्डुलिपि पढ़ी है। और बहुत पसंद की है। उसमें मुझे यथार्थ के ही दर्शन हुए हैं। उसको पढ़कर मैं अनुभव कर सकी हूं कि आपकी रचनाएं क्यों सर्वप्रिय हैं। जन-साधारण जिसको यथार्थ समझता है, उसी सरल भाषा और सुगम शैली में मैं आपकी कृतियां देखती हूं।

"यदि आप उस सरलता, स्पष्टता और सहज शैली को छोड़, किसी महापण्डित की रुचि का अनुसरण करेंगे तो विश्वास रखिये कि आप जन-जन से दूर होते चले जायेंगे। आपकी गणना महापण्डितों में तो हो जायेगी, परंतु आपकी पुस्तकें फिर पुस्तकालयों की अलमारियों की शोभा-मात्र रह जायेंगी।"

"इससे हानि किसकी होगी?"

"जनता की। जो यथार्थ जानने की लालसा रखती है और उसको वह उन महापण्डितों के ग्रंथों में मिलता नहीं।

"आपने अपनी इस नई रचना में लिखा है—इन महल-अटारियों के विषय में लिखूं अथवा उनमें रहने वालों के विषय में? बताओ प्रिये! किसके विषय में जानना चाहती हो?

"आपका नायक अपनी देहातिन पत्नी को पत्र लिख रहा है और उसको नई दिल्ली के विषय में लिख रहा है। आगे चलकर आपकी पुस्तक का नायक लिखता है—महलों के विषय में जानकर क्या करोगी? वे तो क्षण-भंगुर हैं। साथ ही तुम्हारे पति को अप्राप्य हैं। हां, उनमें रहने वालों की कुटिलता, नृशंसता, अनर्गलता, मिथ्या दृष्टि और पशुता तो ऐसी है जो तुम्हारे पति की पहुंच की परिधि में हैं। उनके विषय में जानना चाहो तो लिख सकता हूं। परंतु प्रिये! क्या तुम चाहती हो कि मैं इस गंदगी को टटोलते हुए इसमें लिप्त हो जाऊं? यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
इस गंदगी में लिप्त हो गया तो इस मलिनता से मुक्त होने के लिए कई जन्म भी पर्याप्त नहीं होंगे।

"मैं विचार करती थी कि इससे अधिक यथार्थ का दर्शन और क्या हो सकता है।"

बैरा चाय ले आया था। केवल उसको अपनी पुस्तक के उद्धरण सुनाता हुआ सुन रहा था। उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि शकुन्तला ने उसका अक्षर-अक्षर स्मरण कर रखा है।

बैरा चाय रख गया तो शकुन्तला ने बात बदलकर कहा, "मैंने आपकी कृति कम्पनी से प्रकाशित करने का प्रबन्ध कर दिया है।"

"परंतु...."

केवल ने कहने का यत्न किया, पर शकुन्तला ने बात बीच में ही टोककर कह दिया, "आप कृष्णकान्त के विषय में कह रहे हैं न? कम्पनी के मालिकों की उनसे एक मीटिंग में बातचीत हुई थी। वे बेचारे इस विषय में कुछ ज्ञान नहीं रखते। उनके ज्ञान का स्रोत तो कोई कामरेड बंसल था। उसने ही उनके मस्तिष्क में कुछ कूड़ा-करकट भर दिया था।

"वे जब आपकी रचनाओं में कला का अभाव बताने लगे तो मैंने उनसे पूछ लिया—कला किस चिड़िया का नाम है?

"वे कहने लगे, कला....कला तो कला को ही कहते हैं।

"पांचों संचालक यह सुनकर हंस पड़े। वह बेचारा घबरा गया। मैंने कहा, 'गधा क्या होता है?' इस प्रश्न का उत्तर 'गधा होता है' नहीं हो सकता। जब उसने देखा कि उसकी अपनी प्रतिष्ठा क्षीण होने लगी है, तो उसने कहा कला वह है जो वास्तविकता से दूर परंतु लुभायमान हो। इस पर तो पुनः हंसी फूट पड़ी। हमारे एक पत्तीदार तो उसकी इस विवेचना से क्रुद्ध होकर कहने लगे कि क्या गधा मैनेजर रखा हुआ है।

"इस पर मैनेजर ने कहा, कि वह यह बात अक्षरशः डॉक्टर दिनेश एम० ए०, डी० लिट् कैम्ब्रिज, प्राध्यापक दिल्ली विश्वविद्यालय, राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित और हिंदी विभाग के अध्यक्ष की कही हुई दोहरा रहा है।

"इस पर मैंने कह दिया कि वे तो कहते थे कि उनकी केवल के विषय में जो धारणा बनी है वह आपके कथनानुसार ही बनी है। इसमें अचम्भे की बात तो यह है कि आपने केवलजी की एक भी रचना पढ़ी नहीं है और फिर कला के ये मूर्खतापूर्ण लक्षण डॉक्टर दिनेश के नहीं हैं। कदाचित् ये भी आपने कला के ज्ञान के अभाव में डॉक्टर दिनेश का नाम लेकर कह दिये हैं।

"फिर वह कहने लगा कि उसका एक मित्र बंसल है। वह बहुत उपन्यास पढ़ा करता है। उसने ही कहा था कि केवल-जैसा शुष्क लेखक जनता को ठग रहा है। उस रक्त-शोषक को मार्केट से बाहर कर देने से लोक-कल्याण ही होगा।

"मैंने कहा, तब तो कामरेड बंसल से पता करना चाहिए कि उसका यह ज्ञान किस आधार पर बना है। सम्भव है, उसका ज्ञान भी सुना-सुनाया होगा।

"तब हमारे एक नये संचालक बोले, 'शकुन्तलाजी! छोड़िये इस बात को। मैं जानता हूं कि कामरेड लोगों की सम्मति किस आधार पर और कहां से बनती है। इन कामरेडों की 'पोलिट ब्यूरो' नाम की एक संस्था है। वह संस्था प्रत्येक विचार, प्रत्येक खेल, प्रत्येक नेता, प्रत्येक रीति-रिवाज, अभिप्राय है कि संसार की प्रत्येक गतिविधि के विषय में यह देखकर अपनी सम्मति निर्धारित करती है कि उससे कम्यूनिज्म को हानि होती है अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाभ? कम्यूनिज्म की जो विरोधी बातें होती हैं उनकी निंदा कर दी जाती है और जो उसके अनुकूल होती है उसकी प्रशंसा। यह सम्मति देश-भर के कामरेडों में प्रसारित कर दी जाती है और सब तोते की भांति उसको दोहरा दिया करते हैं।

''उन्होंने कहा कि उन्हें विश्वास है कि कामरेड बंसल ने केवल की किसी भी रचना के कभी दर्शन भी नहीं किये होंगे। इस पर भी उसकी पुस्तकों के कुछ छितरे वाक्य उन्होंने कण्ठस्थ किये होंगे, जिससे उसकी निंदा सप्रमाण सिद्ध कर सकें।

''यह सुन कृष्णकान्त का मुख मालिन हो गया और वह कहने लगा कि यह सबकुछ सत्य हो सकता है। इस पर भी उसका तो यह कहना है कि भारत के पचास हजार वेतनधारी कामरेड केवलजी के विरुद्ध प्रचार कर रहे हैं इसलिये उनकी पुस्तक छापते हुए हमें अपनी कम्पनी के हिताहित का विचार तो करना चाहिए। यह कम्पनी है और लाभ के लिए खोली गई है। इसीलिए हमें हानि का काम नहीं करना चाहिए।

''इस पर तो पांचों-के-पांचों संचालक उससे रुष्ट हो गए। उन्होंने आपकी रचना स्वीकार कर ली है। यह निश्चय किया गया है कि पुस्तक की तीन हजार प्रतियां छपवाई जायें और आपको दो सहस्र रुपया रॉयल्टी के रूप में अग्रिम दे दिया जाय।''

केवल ने चिंता व्यक्त करते हुए कहा, ''शकुन्तलाजी! यह आपने क्या कर दिया? आपका कृष्णकान्त यदि वेतनभोगी कम्यूनिस्ट नहीं है तो निश्चय जानिए कि वह फैलोट्रेवलर अवश्य है। आपकी दुकान को वह इस पुस्तक में घाटा करा देगा।''

''उससे हम दिवालिये नहीं हो जायेंगे।''

''परंतु मेरे कारण आपकी हानि तो मेरे दुःख का कारण बन जायेगी।''

''आप चिंता न करें। यदि कृष्ण ने कुछ भी गड़बड़ की तो उसको दूध की मक्खी की भांति निकालकर फेंक दिया जायेगा।''

''देखि लीजिए। मैं तो यही सम्मति दूंगा कि आप डॉक्टर दिनेश-जैसों की पुस्तकों को ही प्रकाशित करें। उनके नपे-तुले ग्राहक हैं। सब सरकारी पुस्तकालयों में उनकी पुस्तकों के लिए स्थान और रुपया है।''

चाय पीते हुए शकुन्तला ने बात बदलकर कहा, ''आपकी सफलता का रहस्य क्या है?''

''मैं तो स्वयं को अभी सफल समझता नहीं। मैं सफल होने का यत्न कर रहा हूं।''

शकुन्तला समझ गई। उसने कहा, ''मैं आपको बधाई देती हूं कि आप सफलता के वास्तविक रहस्य को समझते हैं और उसके लिए यत्नशील हैं।''

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निस्पृह

अहंकारं बलं दर्प कामं क्रोधं परिग्रहम् ।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।

स्वामीजी महाराज उस दिन गीता के उक्त श्लोक की व्याख्या कर रहे थे। वह कह रहे थे, "पुत्र-कलत्र, धन-सम्पद्, मानापमान ये सब मनुष्य को इस संसार में बांधते हैं और संसार दुःखों का घर है। दुखों से छुटकारा पाने के लिये प्रत्येक प्राणी की आत्मा व्याकुल रहती है।

"संत-जन इनसे दूर रहकर ही परम सुख की प्राप्ति करते हैं। भगवान ने अपने अमर वचनामृत में कहा—अहंकार, बल, अभिमान, कामना तथा क्रोध को छोड़कर जो व्यक्ति ममता-रहित शान्त रहता है वह ब्रह्म में लीन होने के योग्य माना जाता है।"

इस प्रकार इसी लय में श्री स्वामीजी महाराज त्याग के विचार का प्रतिपादन करते हुए लगभग एक घंटे तक प्रवचन करते रहे। श्रोतागण, सभी स्त्री-पुरुष स्वामीजी के प्रवचन की मधुर शैली, समय-समय पर पुराणादि ग्रंथों के कथानकों से सुसज्जित और भक्तजनों के वाक्यों से अलंकृत इसको मन्त्र-मुग्ध होकर सुनते रहे।

हजरत ईसा ने गलियिो की झील के रेतीले किनारों पर धान बिखेरते हुए कहा था, "बीज डालना मेरा काम है, कौन सा बीज जमता है और कौन सा नहीं, यह प्रभु के हाथ में है। वहां कोई सौ बीजों में से एक जमा होगा, परंतु मानव-मन तो उससे भी कई गुणा अधिक ऊसर है। इस पर तो लाखों में से एक ही जड़ पकड़ता है।

इस पर भी साधु-जन तो विचार-रूपी बीज बिखेरते रहते हैं और वे इस बात की चिंता नहीं करते कि विचार किसके मन में अंकुरित होता है और किसके मन में जाकर गल जाता है।

लाखों में एक के मन में ही यह फलता है। इन लाखों में एक इस कथा में बैठा हुआ था—रामसहाय, जो एक छोटी-सी दुकान का मालिक था, इस तीर का निशाना बन गया।

वह कथा से उठा और लगा बुद्धि चलाने। घर जाता हुआ वह विचार कर रहा था, पुत्र-कलत्र, धन-सम्पद् दुःखों का घर है। स्वामीजी के उक्त शब्द पूर्ण मार्ग भर उसके कानों में निनाद कर रहे थे और उसके पग चलते-चलते रुक जाते थे। वह मन में विचार कर रहा था कि यदि यह सत्य है तो वह किधर जा रहा है? स्वामीजी असत्य भाषण तो कर नहीं सकते और फिर उन्होंने तो भगवान के वचनों में से ही यह बात कही थी। यह बात असत्य नहीं हो सकती।

तो फिर वह घर जाकर ही क्या करेगा? वहां उसकी पत्नी है, उसका नवजात-शिशु है। घर पहुंचकर अल्पाहार कर वह दुकान पर जाएगा, वहां क्या है, धन-सम्पद् का स्रोत है।

इस विचार से वह कांप उठा और उसके पग आगे बढ़ते हुए रुक गये। वह अनिश्चितमन था। वह दुःखों के सागर में डूबने के लिए घर को भागा जाता-सा अनुभव कर रहा था।

वह लौट पड़ा। उसका घर का जीवन कुछ सुखी-सा भी नहीं था। छोटे से कारोबार से बहुत कम उपलब्ध होता था। इतने से उसकी युवा स्त्री संतुष्ट नहीं हो सकती थी। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
चंचल, नवयुग की लड़की थी। वह वस्त्राभूषण, नाटक, तमाशे, चाट-पकौड़ी, सैर-सपाटे, अभिप्राय यह कि प्रत्येक प्रकार की सुख-सुविधा के लिए लालायित रहती थी। वह इतना कुछ चाहती थी जो उसका पति अपनी छोटी-सी दुकान से प्राप्त नहीं कर सकता था।

कर सकना संभव भी नहीं था। रामसहाय नित्य प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त हो एक घंटा पूजा-पाठ, एक घंटा कथा-कीर्तन, फिर अल्पाहार और ग्रीष्म-ऋतु में नौ बजे तथा शीतकाल में दस बजे दुकान पर जाकर बैठ सकता था। मध्याह्न को भोजन करने घर पर जाना होता था। उसकी पत्नी उसके साथ बैठकर भोजन करने की इच्छा किया करती थी और सायंकाल वह सूर्यास्त होने पर घर आ जाया करता था। इस प्रकार दुकान चल सकनी कठिन थी और वह बहुत कम आय दे रही थी। उसकी पत्नी चंचल प्रकृति की होने के कारण इतने से संतुष्ट नहीं थी।

नित्य वह अपनी पड़ोसी स्त्रियों के वस्त्राभूषण तथा रहन-सहन अथवा अपने क्लर्क पतियों के साथ नाटक-सिनेमा अथवा बाजार में घूमने जाने की बात कहा करती थी। वह स्वयं दुःखी होती थी और अपने पति को भी दुःखी किया करती थी।

भगवान ने उसके विवाह के एक वर्ष के भीतर ही उसकी गोद भर दी थी और अब तो बच्चे के लिये भी अनेकानेक मांगें उपस्थित होने लगी थीं। पति यह सबकुछ दुःख का सागर समझने लगा था और स्वामीजी ने इनके संग्रह का त्याग कर निर्मोही हो, शान्त होने से ब्रह्मभूयाय (ब्रह्म प्राप्त करने के योग्य) होना बताया था। स्वामीजी ने यह भी बताया था कि ब्रह्म को प्राप्त हुआ पुरुष किसी वस्तु की चाहना नहीं करता।

रामसहाय घर जाने की अपेक्षा हरिद्वार की ओर चल पड़ा। उसने सब की चाहना छोड़ दी और शांत चित्त हो साधु होने की इच्छा से किसी योग्य गुरु की खोज करने लगा।

उसे एक गुरु मिल गये। वे नित्य सायंकाल भरत मन्दिर में कथा किया करते थे। वे कैलाश आश्रमवास कर रहे थे और कथा के समय के अतिरिक्त किसी अन्य समय में लोगों से मिलना भी नहीं करते थे।

रामसहाय भी सायं कथा के समय ही मिलने के लिये गया था। कथा समाप्त होने पर वह स्वामीजी के चरण पकड़ बैठा। स्वामीजी ने उसे देख पूछा, "क्या चाहते हो?"

"संन्यास की दीक्षा।"

"क्या करोगे दीक्षा लेकर?"

"इस दुःखमय संसार से मुक्त होने की चेष्टा करना चाहता हूं।"

"विचार तो शुभ है, परंतु इसके लिए संन्यास की क्या आवश्यकता है?"

"संसार से सम्बंध विच्छेद करने के लिए।"

"भगवे पहनने से सम्बंध विच्छेद हो जायेगा क्या?"

"आपने भी तो पहना है महाराज!"

"भक्त! भगवा पहनने से संन्यासी नहीं हुआ, अपितु संन्यास प्राप्त हो जाने पर भगवा पहनना पड़ा है। पहले वैराग्य ग्रहण करो, संन्यास की दीक्षा स्वयमेव प्राप्त हो जायेगी।"

रामसहाय के मन में प्रकाश हो गया। वह पांव छोड़, हाथ जोड़ खड़ा हो गया। महात्माजी ने पूछा, "हां, क्या विचार है?"

"मैं मार्ग पा गया हूं भगवन्!"

"परमात्मा तुम्हारा कल्याण करे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रामसहाय सोचता था कि वैराग्य तो उसको प्राप्त हो गया है। न हुआ होता तो वह अपनी सुंदर पत्नी और प्रिय पुत्र को छोड़कर कैसे आ सकता? वह वैराग्य-प्राप्त निर्मोही हो चुका है। अतः संन्यास तो अब उसको स्वयं ही प्राप्त होना चाहिए।

मन्दिर से निकल वह गंगा-तट की ओर एकान्त में चला गया।

x x x

रामसहाय की पत्नी चंचल अपने पति के दिन चढ़ने तक कथा-कीर्तन में व्यस्त रहने पर चिढ़ा करती थी। उसका उससे यह गिला रहता था कि वह दुकान पर बहुत विलम्ब से जाता है। अन्नादि की दुकान पर तो प्रातः-सायं ही बिक्री होती है और दोनों समय वह साधु-संतों की संगति में व्यतीत करता था। मध्याह्न के समय तो सब लोग खा-पीकर काम-धन्धे में लग जाते हैं। भला कौन आयेगा उस समय माल खरीदने के लिए?

नित्य झगड़ा होता था। आज दिन के ग्यारह बजे तक उसका पति नहीं आया तो वह यह अनुमान करने लगी कि वह अवश्य किसी अन्य साधु की सेवा में बैठा होगा। इससे वह आग-बबूला हो रही थी। वह आज घर पर ही महाभारत करने की तैयारी कर रही थी।

परंतु महाभारत के युद्ध के लिए विपक्षी आया ही नहीं। क्रोध के पात्र की अनुपस्थिति में शनैः-शनैः वह स्वयं ही शांत होने लगा। इतने में बच्चे ने भूख से व्याकुल हो दूध के लिए रोना शुरू कर दिया तो उसने उसको दूध पिलाना आरम्भ कर दिया। बच्चा छः मास का हो गया था। अब बाजारी दूध पीने लग गया था। मां अपने स्वास्थ्य का विचार कर अपना दूध देना बंद कर चुकी थी। बच्चा दूध पीकर सो गया तो उसने सामने मेज पर रखे टाइमपीस में समय देखा। बारह बज रहे थे। रामसहाय आया क्यों नहीं, यह अब उसके लिए चिंता का विषय हो गया था।

बारह के बाद एक, फिर दो, तीन इसी प्रकार सायंकाल हो गया। बच्चा रोता तो कभी उसको दूध दे देती और कभी उसके पिता की निष्ठुरता का विचार कर उसको पीटकर चुप कराने का यत्न करती।

अगले दिन प्रातःकाल वह उस मन्दिर में जा पहुंची जहां उसका पति कथा सुनने के लिए जाया करता था। वहां कथा करने वाले स्वामीजी से तथा अन्त में कथा सुनने वालों से पूछने पर चंचल को पता लगा कि उसका पति पिछले दिन कथा सुनने आया था और यहां से घर लौट गया था। किसी ने उसको यह भी बताया कि उसने उसको हरिद्वार की ओर जाने वाली गाड़ी में बैठे देखा था।

जिसने उसको यह सूचना दी थी वह उस दिन अपने किसी सम्बन्धी को हरिद्वार के लिए बैठाने गया था और उसने रामसहाय को गाड़ी के तीसरी श्रेणी के डिब्बे में बैठे देखा था।

चंचल का माथा ठनका और वह इस नई परिस्थिति में विचार करने लगी। दिन-पर-दिन व्यतीत होते गए और वह अपने आभूषण बेचकर गुजारा करने लगी। उसके सम्बन्धी उसके पास आ-आकर रामसहाय के कहीं न मिलने की सूचना देकर चलते बनते।

जब एक-एक कर आभूषण चंचल की संदूकची में से निकलकर सर्राफ की तिजोरी में जाने लगा और उससे प्राप्त धन शरीर के भरण-पोषण पर व्यय होने लगा तो चंचल की चिंता बढ़ने लगी।

रामसहाय को घर से गए एक वर्ष हो गया था। चंचल उल्टे मार्ग पर चल पड़ी थी। वह पति का वियोग, धन की न्यूनता और संरक्षण के अभाव को सहन नहीं कर सकी। एक मनचला मिल गया। वह उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पड़ोस का ही एक सम्पन्न सौदागर कामताप्रसाद था और पहले चोरी-चोरी फिर प्रत्यक्ष में उसको सहायता देने लगा। इस प्रकार कुछ काल तक निरासक्त-भाव से सहायता करने के बाद वह सहायता का प्रतिकार पाने के लिए उसके घर में जा पहुंचा। मकान पर से कूदकर चंचल से सहानुभूति प्रकट करता हुआ अपनी सहायता का प्रसाद पा गया।

कुछ समय तक यह कार्य चोरी-चोरी चलता रहा। एक दिन इसका परिणाम भी समझ आ गया। चंचल ने कहा, ''लालाजी! मुझको गर्भ ठहर गया है।''

''यह तो होना ही था।''

''तो अब क्या होगा?''

''दो में से एक बात हो सकती है।''

''क्या?''

''तुम हरिद्वार चली जाओ। वहां तुम-जैसी औरतें बे-बाप के बच्चे पैदा करने के लिए जाया करती हैं। खर्चा मैं दे दूंगा। बच्चा होने के बाद उसको किसी अस्पताल के बाहर कपड़े में लपेटकर फेंक आना। फिर लौट आना। ईश्वर ने चाहा तो तुम्हारा रूप-रंग वैसा ही बना रहेगा जैसा अब है।''

''तो अपने बच्चे को अपरिचित व्यक्तियों के हाथ में छोड़ आऊं?''

''कौन किसका अपना है? जन्म से पहले तो बच्चे ने बाप को देखा नहीं, न ही बाप ने बच्चे को। तुम भी उसके विषय में क्या जानती हो। छोड़ो इस झूठी मोह-माया को।

''देखो भगवान ने कितनी सुंदर बात कही है—

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्त सर्व परिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्।।

''अर्थात् अपने चित्त को जीतकर, सब संचित पदार्थों को छोड़कर, आशा-रहित होकर केवल शरीर-सम्बन्धी कर्म को करते हुए पाप को प्राप्त नहीं होगे।

''इसलिए मैं कहता हूं कि शरीर का धर्म हमने पालन किया है। अब तो मोह, ममता, आशा और संचित सबकुछ छोड़कर निर्वाह करो। ऐसा करती हुई तुम किसी प्रकार के भी पाप को प्राप्त नहीं होगी। पाप तो प्राप्त वस्तु में आसक्ति से उत्पन्न होता है।''

''बहुत कठिन है लालाजी!''

''तो फिर दूसरी बात करो।''

''क्या?''

''बच्चा जब पैदा हो जाए तो उसको गंगाजी को अर्पण कर आ जाना।''

''तो यह पाप नहीं होगा क्या?''

''शारीरिक कर्म करते हुए मोह, ममता तथा धन-सम्पद्, पुत्र-कलत्र में आसक्ति का त्याग कर देने से पाप नहीं लगता।''

चंचल देख रही थी कि यह बात गलत है। भला एक जीव की हत्या किस प्रकार पुण्य का कार्य हो सकती है? और वह भी शरीर के सुख के लिए। परंतु मानव-मन है। वह जीवन का स्वाद लेने के लिए बहाना ढूंढा करता है। अतः मन की दुर्बलता को श्रेष्ठ बताने वाले वाक्य और प्रमाण पाकर वह मान गई।

समय आने पर चंचल हरिद्वार चली गई और वहां एक पंडे की सहायता से अपने बच्चे को ठिकाने लगा वापस आ गई। पंडे ने बच्चे की हत्या नहीं की थी। उसको भी लाला ने गीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
का उक्त श्लोक सुनाया था, परंतु उसके मन ने यह जीवन-मीमांसा स्वीकार नहीं की और बच्चे को एक विधवा ब्राह्मणी को पालन-पोषण के लिए देने की बात हो गई तो उसने लाला से लिया पांच सौ रुपया उस विधवा को दे दिया और बच्चे का पालन-पोषण होने लगा।

x x x

पंडा लालाजी को जानता था और एक वर्ष के पश्चात् आकर बोला, "बच्चा एक स्त्री के पास पल रहा है। पिछला पांच सौ रुपया खर्च हो गया है। अगले वर्ष के लिए खर्चा दे दीजिए।"

"कौन-सा बच्चा?" लालाजी का प्रश्न था।

"चंचल देवी के गर्भ से उत्पन्न बच्चा।"

"तो चंचल से मांगो उसका खर्चा।"

"मैं उसको नहीं जानता। मैंने तो कार्य आपके लिए किया था। यदि आप इतना कुछ नहीं देंगे तो वह विधवा सब बात कोर्ट में बताकर खर्च की मांग करेगी।"

विवश लालाजी को धन देना पड़ा। कदाचित् लाला कामताप्रसाद विधवा को कोर्ट में जाने की धमकी दे देता, यदि चंचल के फिर दिन न चढ़ गये होते। उसको अनुभव हो रहा था कि उसे पुनः इसी पंडे और उस विधवा की आवश्यकता पड़ेगी। इस पर भी वह अब चंचल के बच्चों की पालना घर पर ही करने का विचार कर रहा था।

इस प्रकार एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा बच्चा हो गया। रामसहाय को गये सात वर्ष हो गये थे। महल्ले में चंचल के साथ लाला कामताप्रसाद के सम्बन्ध की बात विख्यात हो चुकी थी। लाला से उसके तीन बच्चों की बात भी सबको विदित थी। चंचल के प्रति महल्ले और रिश्तेदारों का आवेग आकर जा भी चुका था। उससे अब सबके सामान्य संबन्ध बनने लगे थे। चंचल के माता-पिता भी अब उसको दया की पात्री मानने लगे थे।

चंचल कभी अपने मन में आत्मग्लानि अनुभव करती थी तो कामताप्रसाद की जीवन-मीमांसा उसमें पुनः साहस का संचार कर देती।

कामताप्रसाद तो अपना व्यवहार भगवान के इस कथन पर आधारित मानता था—

त्यक्त्वा कर्मफलं संगं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित् करोति सः।।

वह चंचल को इसका अर्थ इस प्रकार सुना दिया करता था—जो कोई भी काम करो उसके फल की आशा को त्याग कर ही करो। सदा प्रसन्न रहो और बिना किसी के भरोसे रहकर कर्म करो तो मानो तुम कुछ भी नहीं कर रहे।

इस कारण चंचल समझने लगती थी कि उसने कुछ नहीं किया। न पाप, न पुण्य।

कभी महल्ले-टोले वाली स्त्रियां उससे पूछतीं, "कल्याण के पिता का कुछ पता चला कि नहीं?"

"किसी से सुना था कि वह बद्रीनारायण के मार्ग पर जोशी मठ में स्वामी शंकराचार्य जी के आश्रम में रहता है।"

"कभी इच्छा नहीं होती मिलने की?"

"किसी भी बात की इच्छा करना तो अपने को संसार से बांधना है। संसार से बंधने का अर्थ है इसके दुःखों का अनुभव करना। मैं तो सुख-दुःख से परे हूं।"

"तो क्या ये बच्चे बिना सुख की प्राप्ति के मिल गये हैं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह तो शरीर का कर्म है। यह होता रहता है। जैसे शरीर के अन्य कार्य होते रहते हैं।"

प्रश्न करने वालियां हंस पड़तीं और बात समाप्त हो जाती। अब चंचल देवी गीता और वेदान्त की व्याख्या किया करती थी। सब माया है, यह उसका स्वाभाविक कथन हो गया था। कल्याण, रामसहाय का लड़का और राम, शैला तथा श्याम कामताप्रसाद के बच्चे अब बड़े हो रहे थे। वे सब अपने को कामताप्रसाद की संतान मानते थे। लाला का व्यवहार चारों के साथ एक समान ही रहता था। उसने स्वयं कभी उनको एक पैसा भी नहीं दिया था। न बच्चों को उससे कुछ भी मांगने का अभ्यास था। चंचल को ही लाला से निर्वाह के लिए धन मिलता था और उससे वह अपने बच्चों की आवश्यकताएं पूर्ण किया करती थी।

सबसे छोटा श्याम अब पांच वर्ष का हो गया था। कल्याण ग्यारह वर्ष का था। मां अपने चारों बच्चों को लेकर हरिद्वार गई हुई थी। इन दिनों घाट पर एक साधु कथा किया करता था। उस साधु के विषय में यह विख्यात था कि वह कोई ब्रह्मविद् व्यक्ति है और सायंकाल उसके प्रवचनों को सुनने के लिए अपार भीड़ एकत्रित हो जाया करती थी।

चंचल हरिद्वार पहुंची तो पहले दिन उसकी एक सखी ने साधु ब्रह्मानन्द के विषय में उसको बताया। वह उसकी परिचित विधवा थी, जो बारहों मास वहीं रहा करती थी। उसका नाम था केवली। उसको पता चला कि चंचल आई है तो वह उससे मिलने के लिए चली गई।

"तो चंचल बहिन आ गई हो?"

"हां बहिन! क्या समाचार है?"

"सब कुशल है। कभी-कभी तो हरिद्वार सूना प्रतीत होने लगता है परंतु आजकल तो यहां भी रस आने लगा है।"

"क्या रस आने लगा है?"

"एक पहुंचे हुए महात्मा आये हुए हैं और नित्य सायंकाल घाट पर अपनी मधुर भाषा में सुलझे हुए विचार बताया करते हैं। सहस्रों की संख्या में नर-नारी उनके ओज तथा भावपूर्ण भावों को सुनने वहां जाया करते हैं।"

"ये साधु लोग, जिनके जीवन का आधे से अधिक भाग तो रहता ही नहीं, भला क्या उपदेश दे सकते हैं?"

"बहिन! यह तो स्वयं सुनने तथा रस ग्रहण करने की बात है। आम का स्वाद वाणी से वर्णन नहीं किया जा सकता। इसका तो आस्वादन ही किया जा सकता है। तभी उसका परिचय मिलता है।

"बहिन! आज चलो, यह मानव-जन्म कृतकृत्य हो जावेगा।"

चंचल के मन में उत्सुकता जाग पड़ी और उसी सायंकाल वह घाट पर जा पहुंची। स्वामीजी महाराज एक तख्ते पर बैठे थे। पर्याप्त संख्या में लोग उनका प्रवचन सुनने के लिए तख्त के चारों ओर बैठे हुए थे। अभी कीर्तन हो रहा था।

चंचल भी वहां पहुंची और सबके पीछे जाकर बैठ गई। वह बैठते ही पहचान गई कि स्वामीजी ब्रह्मानन्द उसका पति रामसहाय ही था। पहले से वह बदल अवश्य गया था। गृहस्थ जीवन में उसके शरीर और आंखों में चंचलता रहा करती थी। अब वह निश्चल, शांत और गंभीर था। इस समय उसके मुख पर अलौकिक ओज भी था और चंचल अनुभव कर रही थी कि वह उसका ओज सहन नहीं कर सकती। उसका हृदय धक-धक् कर रहा था और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

वह ऐसा अनुभव कर रही थी कि उसके नीचे से भूमि खिसक रही है।
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंचल के मन में अनेकानेक विचार उत्पन्न हो रहे थे। वह विचार कर रही थी कि क्या उसने भी उसको देखा होगा?

कदाचित् नहीं। चंचल के मन ने उत्तर दिया। क्योंकि वह तो आंखें मूंदे बैठा है।

तो क्या वह उठकर वापस चली जाय?

परंतु इस प्रकार तो वह देखी जा सकती है। क्योंकि कोई भी उठकर जा नहीं रहा था।

तो वह भीड़ में छिपी बैठी रहे?

यही ठीक होगा कि सब लोग जब उठ पड़ें तो वह भीड़ में से चुप-चाप निकल जायेगी।

इस प्रकार मन की चंचलता को थपकियां दे-देकर वह चुपचाप गर्दन झुकाये वहां बैठी रही। उसका मन तो अपने अतीत पर विचार करने लगा था। वह विचार कर रहा था कि आरम्भ में कामताप्रसाद से सम्बन्ध कितना मधुर था और समाज में कितना निन्दनीय बन गया था। परंतु अब समय व्यतीत हो जाने पर सांसारिक सुखों की लालसा तो कम हो रही है और एक़ अन्य प्रकार का विवेक उसके मन में बैठने लगा था। साथ ही उसको भय लग रहा था कि लाला की इन्द्रियों में शैथिल्य आने पर उसकी उदारता और ज्ञान-ध्यान की प्रवृत्ति भी कहीं शिथिल न होने लगे।

परंतु वह विचार करती थी कि यदि यह सामने बैठा ज्ञान-ध्यान की बातें करने वाला साधु वास्तविक ज्ञान रखने वाला होता तो यह उस अबला को निस्सहाय छोड़ अपना कल्याण करने न चल पड़ता।

स्वामीजी के भाषण में रोचकता अधिक होने से तथा उसमें युक्ति और भाव होने पर लोग सुनने में मग्न थे। प्रवचन में संसार मिथ्या और केवल ब्रह्म ही सत्य पर बल नहीं दिया जा रहा था। अपितु सदाचार पर अधिक बल था।

चंचल यह सब कुछ सुनती हुई भी नहीं सुन रही थी। उसका मन स्वामीजी से बात करने अथवा न करने के विषय पर विचार कर रहा था। वह स्वामीजी के निवास-स्थान का पता करने की इच्छा करने लगी थी। परंतु सोचती कि उनसे मिलकर क्या करेगी? अब उससे उनका क्या सम्बन्ध रह गया है? वह सभी सांसारिक बातों से अलग हो गया था।

कथा समाप्त हुई और कहीं-कहीं शब्द सुनने के अतिरिक्त वह न कुछ सुन सकी और न समझ सकी। उसके अपने मन में भारी शोक उत्पन्न हो रहा था। उसके मन में विभिन्न प्रकार के भाव उठ रहे थे। उसके प्रति घृणा से लेकर आदर और श्रद्धा की भावनाओं के भीतर पड़ी वह लहरों में लहराने वाली नौका की भांति कभी इधर और कभी उधर भटकने लगी।

गंगाजी की आरती हुई और लोग उठ पड़े। वह भी भीड़ में उठी और यह समझकर कि उसको किसी ने न देखा और न पहचाना है, वह वहां से आ गई। इस पर भी वह अपने मन की अवस्था को समझ नहीं सकती थी।

मन में यह निश्चय कर कि वह अब स्वामीजी की कथा सुनने नहीं आयेगी, घर को लौट गई। उसके बच्चे उसके साथ ही थे। कल्याण अब सबकी देखभाल कर सकता था। आजकल स्कूल की छुट्टियां थीं और हरिद्वार में वे स्वतंत्रतापूर्वक घूम सकते थे।

लाला कामताप्रसाद और चंचल दोनों को ही बच्चों से मोह नहीं था। बच्चों को भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे किसी प्रकार का लगाव नहीं था। उनको खाने-पीने को मिल जाता था। इतने से ही वे संतुष्ट थे।

अगले दिन चंचल की सहेली केवली उससे मिलने को आई। उसने पूछा, "कल कथा सुनने के लिए गई थीं?"

"हां, गई थी।"

"मैं तो कल जा नहीं सकी। किस विषय पर कथा थी?"

"कथा थी....यही कि संसार माया है। .....नहीं.....मनुष्य का कर्तव्य .....नहीं चरित्र के....हां कुछ। .....कई बातें कही थीं।"

केवली हंस पड़ी। उसने विस्मय प्रकट करते हुए पूछा, "क्या हो गया है तुमको आज? तुम तो ऐसी नहीं थीं?"

"कैसी?"

"कथा में जाओ और चित्त कहीं अन्य स्थान पर रहा हो।"

"अन्य कहां रह सकता था?"

"परंतु कथा में तो नहीं था। क्या मैं गलत कह रही हूं? उस दिन स्वामी विशुद्धानन्द का प्रवचन सुनकर आई थीं तो तुमने अक्षरशः सुना दिया था।"

आखिर चंचल को मानना पड़ा, "हां, कल मन कुछ खिन्न था। मैंने कथा सुनी ही नहीं। डेढ़ घण्टे वहां बैठी और चली आई।"

"खिन्न क्यों हो रहा था? तुम तो बहुत ज्ञान की बातें जानती और किया करती हो।"

"कल मन मलिन हो गया था। किसी की याद आ गई थी और उसके प्रति मन की भावनायें उभर आई थीं। भावनाओं की आंधी में स्वामीजी की बात सुनती तो रही परंतु समझी कुछ नहीं।"

"आज चलोगी?"

"नहीं, अब मैं वहां नहीं जाऊंगी।"

"क्यों?"

"पुनः मन की शान्ति विलीन हो जायेगी।"

"तो स्वामीजी को देख लेने से मन अशान्त हो उठता है?"

चंचल ने कुछ उत्तर नहीं दिया। केवली उसके मुख पर परेशानी देख विस्मय कर रही थी। एकाएक उसके मन में कुछ विचार आया। उसने चंचल के गले में बांहे डाल पूछा, "उनके मोह में तो नहीं फंस गई?"

चंचल के मुख से अनायास ही निकल गया, "फंस गई थी। परंतु वह बात बहुत पुरानी हो गई। जब वे साधु नहीं थे।"

"तो यह मोह-ममता उनको देख जाग पड़ी थी।"

"अपने मन की स्थिति को मोह-ममता तो नहीं कह सकती। वे मेरे विवाहित पति थे। मेरा बड़ा लड़का इनका ही है। मेरी आवश्यकताओं को पूर्ण न कर सकने के कारण ये घर से भाग आए थे। मैं अकिंचन हो गई और पेट भरने के लिए बच्चे उत्पन्न करने लगी। अब श्याम के बाद बच्चे नहीं हो रहे। इस पर भी सम्बन्ध तो चल रहा है।"

केवली अपनी सहेली का वृत्तान्त सुनकर अवाक् बैठी रही। फिर बोली, "तो उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

देखकर चित्त अशांत हो जाता है क्या?''
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''बहुत। कभी क्रोध, कभी संतोष, कभी दुःख, कभी हर्ष, कभी मोह, कभी ग्लानि, ऐसे द्वन्द्वों में फंस जाती हूं। जितनी देर तक वहां रही इस प्रकार की परस्पर-विरोधी भावनाओं में हिलोरें ले रही थी और कथा का एक शब्द भी समझ नहीं सकी।''

''तो तुम निश्चय नहीं कर सकतीं कि मन क्या चाहता है?''

''नहीं, अभी भी नहीं। मैं समझती हूं कि वह महापाजी है। जो अपनी युवा पत्नी और शिशु पुत्र को असहाय छोड़कर भाग गया है। फिर यह विचार करती हूं कि अच्छा ही हुआ है। श्याम के पिता मेरी सब प्रकार की आवश्यकताएं पूर्ण कर रहे हैं और वह तो इतना भी कर नहीं सकता था।

''कभी विचार करती थी कि पर-पुरुष की पत्नी बन पाप की भागिनी बन गई हूं। फिर विचार करने पर समझती हूं कि मैं ज्ञानवान हो गई हूं। शारीरिक कर्मों में पाप-पुण्य मानना छोड़ बैठी हूं और मन से मैं इन कर्मों से अलिप्त रहती हूं। मैं अपनी अवस्था ऐसी समझती हूं, जैसी भगवान ने कही है—

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्म फले स्पृहा।

''जब यह विचार करती हूं तो उसके मुझे छोड़कर जाने को वरदान मानने लगती हूं।

''कभी अपनी उस एक वर्ष की अवस्था का स्मरण कर दुःखी होती हूं, जो उसके मुझे छोड़ जाने के बाद हुई थी। परंतु उसके बाद के वर्षों की याद आती है तो उसका धन्यवाद करती हूं। मैं अब सहज सुख प्राप्त कर रही हूं।''

केवली ने सिर हिलाते हुए कह दिया, ''बहिन! मन की यह अवस्था तो बहुत ही विकट है, इसमें शान्ति कहां मिलेगी?''

''यत्न कर रही हूं।''

''असंभव है। जब तक मन में मथनी चलती रहेगी, क्षोभ उठता रहेगा। और क्षोभ अशान्ति का ही दूसरा नाम है।''

''तो मथनी चलनी कैसे बंद हो?''

''इसके कई तरीके हैं। दुखी संसारी मद्य का सेवन करते हैं। कुछ लोग खेल-तमाशे देख मन बहलाया करते हैं। कुछ ऐसे भी हैं, जो धर्म-कर्म, ज्ञान-ध्यान में चित्त लगाते हैं। कई साधु लोग चरस पीकर इस क्षोभ को शांत करते हैं।''

''मैं तो इनमें से कोई भी उपाय नहीं कर सकती?''

''तो फिर मैं कोई अन्य उपाय जानती भी नहीं।''

x x x

चंचल उस दिन कथा सुनने के लिए नहीं आई। परंतु कथा के सब समय वह बहुत सख्त बेचैनी अनुभव कर रही थी। घर बैठे हुए भी वह अपने चित्त को शांत नहीं रख सकी। वह कभी विचार करती थी कि उससे जाकर लड़ पड़े। कभी सोचती थी कि उसके पांव पकड़कर, अपने मन में उसके प्रति बुरे विचारों के लिए, क्षमा मांग ले। कभी वह जाने लगती किंतु फिर अपने को पागल समझ पुनः चटाई पर लेट जाती। लेटे-लेटे उसको भूमि चुभने लगती तो वह उठ घर से बाहर निकलने का यत्न करती और मन पर नियंत्रण कर वापस आ जाती और अपने-आपको कोसने लगती।

कथा सायंकाल सात बजे समाप्त होती थी। घड़ी में सात बजे और वह अपने मन को रोक नहीं सकी। घर से निकल पड़ी। वह मन में आशा-निराशा से भरी हुई चली जा रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी। वह आशा कर रही थी कि कथा समाप्त हो चुकी होगी और स्वामीजी कथा कर वहां से जा चुके होंगे। वह निराशा इस कारण अनुभव कर रही थी कि स्वयं को वह घर पर स्थिर रखने में असफल सिद्ध हुई थी।

न चाहती हुई भी वह कथा-स्थान की ओर जा रही थी। क्यों? यह वह नहीं जानती थी। अपनी इस व्यर्थ की भाग-दौड़ पर वह विस्मय करती थी परंतु कुछ न समझती हुई भी भागती चली जा रही थी।

कथा-स्थान पर भीड़ एकत्रित थी। इसका अर्थ वह समझ गई कि स्वामीजी अभी गए नहीं। वह रुकी, परंतु फिर चल पड़ी। वह भीड़ में पहुंची और उसमें से अपना मार्ग बनाती हुई स्वामीजी के पास जा खड़ी हुई। स्वामीजी केवली से बातें कर रहे थे। चंचल वहां पहुंची और उसने स्वामीजी के पांव पकड़ लिए। अंधेरे में स्वामीजी ने उसको पहचाना नहीं। वे बोले, "मां! बस करो। भगवान तुम्हारा भला करे। उठो! अपने पति के पांव का स्पर्श करो, तुम्हारा कल्याण होगा।"

केवली ने तो चंचल के आते ही उसको पहचान लिया था। इस कारण स्वामीजी का आशीर्वाद सुन वह हंस पड़ी। उसने चंचल की बांह पकड़कर उठाते हुए कहा, "महाराज! यह तो चंचल है।"

"चंचल! कौन चंचल?

केवली ने चंचल को उठाया तो वह आंखों से आंसू टपकाती हुई सामने खड़ी हो गई।

स्वामीजी ने उसे देखा और आश्चर्यचकित हो कहने लगे, "तुम! यहां क्या कर रही हो?"

केवली और चंचल ही इस समागम का अर्थ समझती थीं। अन्य सब उपस्थित भक्त-जन तो टुकर-टुकर मुख देख रहे थे।

"बहुत दुखी हो?" उसके आंसू देख स्वामीजी ने पूछा।

"महाराज!" केवली ने कहा, "यह आपके दर्शन करना चाहती थी।"

"तो हो गए दर्शन?"

मन में डोलने वाले उद्गारों के कारण चंचल बोलने में सर्वथा असमर्थ हो रही थी। वह चुप थी। केवली ने उत्तर दिया, "भगवान्! यह कल मध्याह्न के भोजन का निमंत्रण दे रही है।"

"कल नहीं।" स्वामीजी ने गम्भीर विचारमग्न होते हुए कहा, "भोजन करने के लिए स्वेच्छा से और स्वनिश्चित दिन आऊंगा।"

"तो कब तक प्रतीक्षा करें।"

"जब तक आ न जाऊं।"

यह कह स्वामीजी चल दिये। केवली और चंचल पीछे खड़ी रह गईं। सब प्रश्न-भरी दृष्टि से इन स्त्रियों की ओर देख रहे थे। केवली ने चंचल की बांह पकड़ी और उसे घर की ओर ले गई। घर पहुंच उस ने उसको ठंडा जल पिलाया और आराम से बैठाकर पूछा, "यह तुमने क्या कर दिया है?"

"मैं स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख सकी। मैंने बहुत यत्न किया था कि वहां न जाऊं, परंतु ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई पकड़कर बलपूर्वक ले जा रहा है।"

"यह वासना थी।"

"नहीं केवली। वह वासना नहीं थी। मैं इस विषय में तृप्त हूं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
"तो क्या था?"

"समझ नहीं सकी।"

केवली ने समझा कि यह कामना है। यह ज्ञान-ध्यान, अनासक्ति और निराश्रय का उपदेश देने वाली या तो अपनी अन्तरात्मा की बात जानती नहीं अथवा जानती है तो बताती हुई लज्जा का अनुभव करती है।"

बात आगे नहीं चल सकी। कल्याण इत्यादि बच्चे आ गये थे। वे अपने भ्रमण में हुई सामान्य घटनाओं की बात सुनने लगे थे। केवली ने उससे कहा, "कल तुम मेरे साथ चलना, मैं कथा के समय लेने के लिए आऊंगी।"

चंचल ने अपनी मौन अनुमति व्यक्त की तो केवली उठकर वहां से चली गई। चंचल का मन कह रहा था कि उसका पति अगले दिन भोजन करने के लिए आयेगा। परंतु आयेगा कैसे? उसको तो उसके स्थान का ज्ञान ही नहीं है। इससे मन की आशा और निराशा में डोलती हुई वह प्रतीक्षा करती रही।

चंचल को विचार करने पर यह समझ में आया कि वह उसको टरका गया है। उसने निमंत्रण तो अस्वीकार किया नहीं, परंतु उसने उसके निवास-स्थान का पता भी तो नहीं पूछा। इस पर भी वह अनेकानेक व्यंजन बना रही थी। वह बनाती जाती थी और अपने मन पर विस्मय भी करती जाती थी।

कल्याण मकान की ड्योढ़ी पर बैठा सड़क पर आने-जाने वालों को देख रहा था। यह उसका अतिप्रिय कार्य था। उसके भाई-बहन ऊपर कमरे में बैठे ताश खेल रहे थे। चंचल रसोई-घर में पांच-छः प्रकार का साग बना अब पूड़ी निकालने लगी थी।

मकान के नीचे 'नारायण हरि' का शब्द हुआ। चंचल के हाथ से पोनी गिर गई। वह चौकन्नी हो द्वार की ओर देखने लगी। फिर अपनी मूर्खता पर मुस्करा पोनी उठा कड़ाही में पूड़ी डालने लगी। तभी कल्याण ने सीढ़ियों से आवाज देते हुए पूछा, "मां साधु बाबा को रोटी दोगी?"

"हां ले जाओ।"

चंचल ने समझा कि जब इतना कुछ बनाया है तो किसी को तो खिलाना ही होगा।

"मां! वह तो यहीं खायेगा। हाथ धुलाकर खाने के लिये बैठाऊं?"

"हां।"

चंचल ने रसोई-घर से बाहर कल्याण की ओर देखा तो उसके पीछे स्वामी ब्रह्मानन्द खड़ा था।

"तो आप आ गए?"

"हां, अपना वचन पालन करने के लिए।"

"बैठिये।"

कल्याण उसको उस कमरे में ले गया जहां उसके भाई-बहन ताश खेल रहे थे। कल्याण ने आसन बिछा दिया था। स्वामीजी को बैठा दिया गया और हाथ धुलाने के लिए पानी ले आया। स्वामीजी ने हाथ धोते हुए उससे पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"कल्याण।"

"और इनके?" स्वामीजी ने अन्य बच्चों की ओर संकेत करते हुए पूछा।

"यह मेरा भाई राम, यह बहिन शैला और यह सबसे छोटा और मां का लाड़ला श्याम है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और तुम्हारे पिता?"

"वे हमारे साथ नहीं आए। कहते हैं कि यदि कमाऊंगा नहीं तो तुम सब को खिलाऊंगा कहां से।"

"वे घर पर ही रहते हैं अथवा दुकान पर।"

इस समय चंचल एक बड़े-से थाल में सभी व्यंजन लगाकर ले आई।

"देवी! मुझे बैल समझा है, जो इतना कुछ उठा लाई हो!"

"जितना इच्छा हो खाइये, शेष हम पापियों के लिए छोड़ दीजिए।"

स्वामीजी ने चार पूड़ी और साग का कटोरा उठा लिया। अपना अंगोछा बिछा उस पर पूड़ियां रखीं और भोजन करने लगे। खाते हुए बोले, "यह जानकर कि तुम सुखी हो, संतोष हुआ है। मुझको कभी थोड़ा-सा पश्चाताप हुआ करता था, इससे मेरा ध्यान भंग हो जाता था। अब उस चिंता से भी मुक्त हो उन्नति में लीन हो सकूंगा।"

चंचल का मुख बंद था। वह मंत्र-मुग्ध की भांति स्वामीजी के मुख पर देख रही थी।

स्वामीजी ने कहा, "कभी समय निकालकर परब्रह्म परमेश्वर का भी चिंतन कर लिया करो। वही तुमको इस संसार-रूपी कीचड़ से निकालने में समर्थ हैं।"

चंचल मौन थी। स्वामीजी ने फिर कहा, "इन बच्चों के पिता से कहना कि मैं उसका अति कृतज्ञ हूं, वह जो भी हो, भगवान् उसका भला करेगा।

"मेरी कामना छोड़ दो। मैं स्वयं नहीं जानता कि कहां रहूंगा। यह संन्यासी का धर्म है।"

"महाराज!" आखिर चंचल के मुख से निकला, "धर्म तो कर्म का सूचक है? कर्म हमको संसार में बांधता है?"

"बांधना किसी प्रकार भी बुरा नहीं। विचारणीय तो यह है कि किस के साथ बंधा जाय। उसके साथ बंधो, जिसके साथ बंधे रहने की सामर्थ्य हो। सबसे श्रेष्ठ बंधन भगवान श्रीहरि का है। सामर्थ्य हो तो उसका अवलम्बन लो।"

"और निस्पृहता?"

"यह वागाडम्बर है। स्पृहा आत्मा का गुण है। गुण गुणी के साथ सदा बना रहता है। गुणविहीन गुणी कहीं देखा नहीं जाता। परंतु स्पृहा भगवान से ही रखनी चाहिए।

"और भगवान का कथन है—

निस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा।"

"यह ठीक नहीं, अथवा यह वाक्य अधूरा है। कामना का विश्लेषण सांसारिक होना चाहिए।"

स्वामीजी ने चार पूड़ी समाप्त कीं, लोटे से जल पिया और 'हरि ओम्' कहकर उठ पड़े।

"अब फिर?" चंचल ने पूछा।

"नहीं जानता। सब भगवदिच्छा के अधीन है।"

वह सीढ़ियां उतर गया।

सायंकाल स्वामी ब्रह्मानन्द घाट पर कथा करने के लिए नहीं आए। यह कोई नहीं जानता था कि स्वामीजी क्यों नहीं आए और कहां होंगे इस समय।

Central Library 167960 Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

081 167960

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पुस्तकालय
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
वर्ग संख्या R 089.9143 GUR-M आगत संख्या 167960

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

GURUKU
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Access N
Class N:
Cat No.
Tag etc.
E.A.R.
Recomm. by
Data Ent. by
Checked

श्री गुरुदत्त

8 दिसम्बर 1894
से
8 अप्रैल 1989

शिक्षा : एम. एस-सी.

प्रथम उपन्यास "स्वाधीनता के पथ पर" से ही ख्याति की सीढ़ियों पर जो चढ़ने लगे कि फिर रूके नहीं।

विज्ञान की पृष्ठिभूमि पर वेद, उपनिषद् दर्शन इत्यादि शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ किया तो उनको ज्ञान का अथाह सागर देख उसी में रम गये।

वेद, उपनिषद् तथा दर्शन शास्त्रों की विवेचना एवं अध्ययन अत्यन्त सरल भाषा में प्रस्तुत करना गुरुदत्त की ही विशेषता है।

उपन्यासों में भी शास्त्रों का निचोड़ तो मिलता ही है, रोचकता के विषय में इतना कहना ही पर्याप्त है कि उनका कोई भी उपन्यास पढ़ना आरम्भ करने पर समाप्त किये बिना छोड़ा नहीं जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ममता

भारतीय साहित्यकारों में श्री गुरुदत्त जी का नाम अजर व अमर है । इनके द्वारा लिखे गये उपन्यास कथानक व रोचकता की दृष्टि से अत्यन्त ही सफल हैं । अपने प्रथम उपन्यास से ही श्री गुरुदत्त चोटी के उपन्यासकारों की श्रेणी में आ गये थे और फिर एक के बाद एक इन्होंने अनेकों उपन्यासों का लेखन किया ।

ममता गुरुदत्त जी की कलम से निकली एक अनमोल कृति है । इस उपन्यास रूपी कृति में गुरुदत्त जी ने भारतीय आदर्शो एवं संस्कारों तथा धार्मिक विचारों का अत्यन्त रोचक शैली में चित्रण किया है ।

ममता एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो धार्मिक विचारों व संस्कारों से ओतप्रोत है । वह जीवन भर अपने पुत्र के प्रेम के लिये तरसती रहती है किन्तु उसका पुत्र उससे घृणा करता है । फिर भी वह अपने पुत्र की रक्षा के लिये अपना जीवन होम कर देती है ।

ममता की कथा अत्यन्त ही रोचक व दिल को छू लेने वाली है। जो निश्चय ही पाठकों के हृदय को मोह लेगी ।

ISBN -81-88388-33-5

हिन्दी साहित्य सदन
2 बी.डी.चैम्बर्स,
10/54, देश बंधु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
Email : indiabooks@rediffmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar